आविष्कार का इतिहास

संचार की कहानी

(भाग तीसरा)

इर्गॉन लारसेन

थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड
प्रकाशन विभाग
नयी दिल्ली

विषय सूची

आविष्कार का इतिहास

संचार की कहानी

(भाग तीसरा)

इगॉन लारसे

कि लारेंस कोस्तर ने, जो पेशे से एक सराय का मालिक था, पन्द्रहवीं शताब्दी [illegible] कभी सचल टाइपों से एक पुस्तक छापी, पर साथ ही हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि जर्मनी के मेन्त्स नगर के निवासी जॉन गुतेनबर्ग ने अनेक प्रयोगों [illegible] बाद मुद्रण कला को परिष्कृत किया।

गुतेनबर्ग एक धनी बर्गर परिवार में पैदा हुआ था। उसका जन्म 1400 ई से कुछ वर्ष पूर्व हुआ। छोटी उम्र में ही वह स्त्रासबोर्ग चला गया और वहां उस ब्लाक तराशने और आईनों पर पालिश करने के हुनर पर भी हाथ आजमाया इन कौशलों में उसने अनेक आविष्कार किए और लकड़ी के ठप्पों से एक न प्रकार का छापाखाना तैयार करने के विषय में उस पर मुकदमा भी चला संभवतः स्त्रासबोर्ग में ही उसने शब्दों, वाक्यों और पूरे के पूरे अनुच्छेद कंपो करने के लिए सचल टाइपों का व्यवहार करने की बात पहली बार सोची।

हमें सिर्फ इतना ही मालूम है कि वह 50 वर्ष की उम्र में अपने जन्मस्था मेन्त्स को लौटा और वहां अपने विचारों को अमल में लाना शुरू किया; यह य वर्णमाला के प्रत्येक वर्ण के लिए एक सांचा बनाना, जिससे धातु के एक जैस ऊंचाई के टाइप ढाले जा सकें, ताकि उन्हें जोड़कर पंक्तियां और पंक्तियों अनुच्छेद बनाए जा सकें। इसके निमित्त गुतेनबर्ग को एक ऐसी नयी वर्णमाल रचनी पड़ी, जो ढलाई के उपयुक्त हो सके, क्योंकि उस काल के हाथ के लि अक्षर बहुत सजावटी थे। अपनी व्यावहारिक अपेक्षाओं और अक्षरों के कलात्म रूपों के बीच एक बहुत सुन्दर समन्वय करते हुए उसने इस काम को बड़ी खू के साथ पूरा कर लिया। वर्णों को अति परिशुद्धता के साथ तैयार करने के लि उसने ढलाई की एक पद्धति तैयार की, ताकि वे एक-दूसरे के साथ अच्छी त जुड़ सकें, कंपोज की हुई सामग्री पर बराबर स्याही पोतने के लिए उसने युक्ति निकाली और ठीक उतना ही दबाव डालने के लिए जितना कि अपेक्षित उसने हाथ से चलाया जाने वाला एक प्रेस तैयार किया—ये उन महत्त्वपू कारनामों में से कुछ हैं, जिनको छपाई से पहले उसे पूरे करने पड़े। उसने अने प्रयोग और भूलें करने के बाद इन कामों को पूरा कर ही लिया।

छपाई के प्रयोग का उसका पहला कार्य था एक पुरानी जर्मन कविता की प्रतियां तैयार करना। उसकी पद्धति काम कर गयी। अब उसने एक महान् कृति की छपाई का काम आरंभ किया, जिसको छापने की उसको अपनी लालसा थी। यह थी लातिन में पूरी बाइबिल की छपाई, जिसमें प्रत्येक पृष्ठ में 42 पंक्तियां थीं और कुल 1,282 पृष्ठ थे—इस प्रकार के छोटे और मुख्यतः प्रायोगिक उपक्रम देखते हुए यह एक विशाल कार्यभार था। कई वर्ष तक काम करने के बाद

के लकड़ी के ठप्पे तैयार किए। उन्हें एकत्र सजा
कर कागज पर उसके निशान उभारे (कागज बनाने व
बहुत प्राचीन काल में ही कर लिया था)। चीन की ि
वर्णों से नहीं, अपितु ध्वनिगुच्छों (सिलेबल्स) से य
तेरहवीं शताब्दी में और कोरिया में चौदहवीं शताब्दी
जो छपाई आरंभ हुई, वह चित्रों की 'ठप्पेदार छपाई'
कई शताब्दी पहले से ही सुदूर पूर्वी देशों में काम आती

यूरोप में भी छापाखाने का आरंभ चित्रों ि
खासतौर से ताश के पत्तों को छापने के लिए जिनकी
लकड़ी के ठप्पों या मुहरों पर उकेर लिया जाता था।
की बुराइयों के विरोध में *अभियान जारी किया गया*
बड़े परिमाण में छापे जाने लगे। अब चित्रों के साथ
सूझ बहुत दूरारूढ़ नहीं थी, पर लम्बे पाठों की लकड़ी
मुश्किल काम था। पश्चिमी यूरोप के अनेक लोगों
लकड़ी या धातु के वर्ण-टाइप बनाने और छपाई के
और वाक्य बनाने की कला को चीन और जापान से
दिया था, जहां बारहवीं शताब्दी में कागज बनाने का
था, अतः अब इस काम के लिए कागज भी सुलभ हो

हालैंड स्थित हार्लेम नगर में लारेंस कोस्तर
में दो स्मारक बने हुए हैं, जिसके विषय में यह कहा
के सहारे पहली पुस्तक मुद्रित की थी। इटली के
एक विद्वान के सम्मान में एक दूसरा स्मारक है,
किया जाता है कि उसने स्वयं भी यह आविष्कार ि
तथा प्राग में भी इनके नागरिकों की यादगार में
में भी ये ही दावे किए गए हैं। इतना तो निश्चित
विचार चारों ओर फैल गया था। ऐसे सभी लोग
लिया था, पुस्तकों के लिए लालायित थे, पर हाथ से ि
मठों के संन्यासियों, चर्च के उच्च पदस्थ
प्राध्यापकों को ही नसीब होनी थी, लिि
नागरिक की लालसा अतृप्त ही रह जाती थी।

तब फिर सचल टाइपों का सर्वप्रथम आ
जाए? यह विवाद पांच सौ वर्षों से लगातार

कि लारेंस कोस्तर ने, जो पेशे से एक सराय का मालिक था, पन्द्रहवीं शताब्दी में कभी सचल टाइपों से एक पुस्तक छापी, पर साथ ही हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि जर्मनी के मेन्त्स नगर के निवासी जॉन गुतेनबर्ग ने अनेक प्रयोगों के बाद मुद्रण कला को परिष्कृत किया।

गुतेनबर्ग एक धनी बर्गर परिवार में पैदा हुआ था। उसका जन्म 1400 ई० से कुछ वर्ष पूर्व हुआ। छोटी उम्र में ही वह स्त्रासबोर्ग चला गया और वहां उसने ब्लाक तराशने और आईनों पर पालिश करने के हुनर पर भी हाथ आजमाया। इन कौशलों में उसने अनेक आविष्कार किए और लकड़ी के ठप्पों से एक नये प्रकार का छापाखाना तैयार करने के विषय में उस पर मुकदमा भी चला। मवतः स्त्रासबोर्ग में ही उसने शब्दों, वाक्यों और पूरे के पूरे अनुच्छेद कंपोज रने के लिए सचल टाइपों का व्यवहार करने की बात पहली बार सोची।

हमें सिर्फ इतना ही मालूम है कि वह 50 वर्ष की उम्र में अपने जन्मस्थान न्त्स को लौटा और वहां अपने विचारों को अमल में लाना शुरू किया; यह था, र्णमाला के प्रत्येक वर्ण के लिए एक सांचा बनाना, जिससे धातु के एक जैसी लाई के टाइप ढाले जा सकें, ताकि उन्हें जोड़कर पंक्तियां और पंक्तियों से नुच्छेद बनाए जा सकें। इसके निमित्त गुतेनबर्ग को एक ऐसी नयी वर्णमाला नानी पड़ी, जो ढलाई के उपयुक्त हो सके, क्योंकि उस काल के हाथ के लिखे क्षर बहुत सजावटी थे। अपनी व्यावहारिक अपेक्षाओं और अक्षरों के कलात्मक पों के बीच एक बहुत सुन्दर समन्वय करते हुए उसने इस काम को बड़ी खूबी साथ पूरा कर लिया। वर्णों को अति परिशुद्धता के साथ तैयार करने के लिए सने ढलाई की एक पद्धति तैयार की, ताकि वे एक-दूसरे के साथ अच्छी तरह ड़ सकें, कंपोज की हुई सामग्री पर बराबर स्याही पोतने के लिए उसने युक्तियां काली और ठीक उतना ही दबाव डालने के लिए जितना कि अपेक्षित था, उसने हाथ से चलाया जाने वाला एक प्रेस तैयार किया—ये उन महत्त्वपूर्ण कारनामों में से कुछ हैं, जिनको छपाई से पहले उसे पूरे करने पड़े। उसने अनेक प्रयोग और भूलें करने के बाद इन कामों को पूरा कर ही लिया।

छपाई के प्रयोग का उसका पहला कार्य था एक पुरानी जर्मन कविता की प्रतियां तैयार करना। उसकी पद्धति काम कर गयी। अब उसने एक महान् कृति की छपाई का काम आरंभ किया, जिसको छापने की उसकी अपनी लालसा थी। यह थी लातिन में पूरी बाइबिल की छपाई, जिसमें प्रत्येक पृष्ठ में 42 पंक्तियां थीं और कुल 1,282 पृष्ठ थे—इस प्रकार के छोटे और मुख्यतः प्रायोगिक उपक्रम देखते हुए यह एक विशाल कार्यभार था। कई वर्ष तक काम करने के बाद

कि लारेंस कोस्तर ने, जो पेशे से एक [illegible] का [illegible] था, [illegible] कभी सचल टाइपों से एक पुस्तक छापी, पर साथ ही हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि जर्मनी के मेन्त्स नगर के निवासी जॉन गुतेनबर्ग ने अनेक प्रयोगों के बाद मुद्रण कला को परिष्कृत किया।

गुतेनबर्ग एक धनी बर्गर परिवार में पैदा हुआ था। उसका जन्म 1400 ई० से कुछ वर्ष पूर्व हुआ। छोटी उम्र में ही वह स्ट्रासबोर्ग चला गया और वहां उसने ब्लाक तराशने और आईनों पर पालिश करने के हुनर पर भी हाथ आजमाया। इन कौशलों में उसने अनेक आविष्कार किए और लकड़ी के ठप्पों से एक नये प्रकार का छापाखाना तैयार करने के विषय में उस पर मुकदमा भी चला। संभवतः स्ट्रासबोर्ग में ही उसने शब्दों, वाक्यों और पूरे के पूरे अनुच्छेद कंपोज करने के लिए सचल टाइपों का व्यवहार करने की बात पहली बार सोची।

हमें सिर्फ इतना ही मालूम है कि वह 50 वर्ष की उम्र में अपने जन्मस्थान मेन्त्स को लौटा और वहां अपने विचारों को अमल में लाना शुरू किया; यह था, वर्णमाला के प्रत्येक वर्ण के लिए एक सांचा बनाना, जिससे धातु के एक जैसी ऊंचाई के टाइप ढाले जा सकें, ताकि उन्हें जोड़कर पंक्तियां और पंक्तियों से अनुच्छेद बनाए जा सकें। इसके निमित्त गुतेनबर्ग को एक ऐसी नयी वर्णमाला रचनी पड़ी, जो ढलाई के उपयुक्त हो सके, क्योंकि उस काल के हाथ के लिखे अक्षर बहुत सजावटी थे। अपनी व्यावहारिक अपेक्षाओं और अक्षरों के कलात्मक रूपों के बीच एक बहुत सुन्दर समन्वय करते हुए उसने इस काम को बड़ी खूबी के साथ पूरा कर लिया। वर्णों को अति परिशुद्धता के साथ तैयार करने के लिए उसने ढलाई की एक पद्धति तैयार की, ताकि वे एक-दूसरे के साथ अच्छी तरह जुड़ सकें, कंपोज की हुई सामग्री पर बराबर स्याही पोतने के लिए उसने युक्तियां निकालीं और ठीक उतना ही दबाव डालने के लिए जितना कि अपेक्षित था, उसने हाथ से चलाया जाने वाला एक प्रेस तैयार किया—ये उन महत्त्वपूर्ण कारनामों में से कुछ हैं, जिनको छपाई से पहले उसे पूरे करने पड़े। उसने अनेक प्रयोग और भूलें करने के बाद इन कामों को पूरा कर ही लिया।

छपाई के प्रयोग का उसका पहला कार्य था एक पुरानी जर्मन कविता की प्रतियां तैयार करना। उसकी पद्धति काम कर गयी। अब उसने एक महान् कृति की छपाई का काम आरंभ किया, जिसको छापने की उसकी अपनी लालसा थी। यह थी लातिन में पूरी बाइबिल की छपाई, जिसमें प्रत्येक पृष्ठ में 42 पंक्तियां थीं और कुल 1,282 पृष्ठ थे—इस प्रकार के छोटे और मुख्यतः प्रायोगिक उपक्रम देखते हुए यह एक विशाल कार्यभार था। कई वर्ष तक काम करने के बाद

लिए यूरोप भेजा गया। एडवर्ड चतुर्थ की बहन तथा बर्गंडी के चार्ल्स बोल्द की पत्नी डचेस मार्गरेट ने उसे अपना वाणिज्य सलाहकार बना लिया और 1471 में जब वह कोलोन में था, तभी उसने वहां का छापाखाना पहली बार देखा। उसने ब्रुजेज में अपनी पहली पुस्तक की छपाई की। यह होमर के महाकाव्य 'ईलियद' के फ्रांसीसी अनुवाद से किया गया अंग्रेजी अनुवाद था। अंग्रेजी में छपी यह प्रथम पुस्तक सन् 1474 में प्रकाशित हुई। इसके दो वर्ष बाद उसने वेस्टमिंस्टर में एक छापाखाना खोला और दार्शनिक उद्धरणों की एक पुस्तक छापकर उसका आरंभ किया।

ढलती उम्र में इंगलैंड का सर्वप्रथम मुद्रक बनने के बाद कैक्स्टन को एक व्यापारी या दरबारी का जीवन छोड़ने पर कभी खेद नहीं हुआ। 70 वर्ष की उम्र में जब 1491 में उसकी मृत्यु हुई, तब तक उसे लगभग 80 पुस्तकों का प्रकाशन करके विश्व साहित्य के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों को अपने देश के लिए लभ्य बनाने का ही नहीं, अपितु अंग्रेजी भाषा को परिनिष्ठित रूप देने का सन्तोष प्राप्त था।

गुटेनबर्ग के समय का एक छापाखाना

उसने इसे सन् 1456 में पूरा किया।

पर इस समय तक उसका प्रेस भारी कर्ज में डूब गया था और उसका [illegible] जिसने पूंजी लगाई थी, उसने पैसे की अदायगी मांगने लगा था। अतः और छपे हुए पन्नों के साथ ही अपना कारखाना सौंपकर निकल जाने के गुटेनबर्ग के सामने कोई चारा नहीं था। साझेदार ने इस पर कब्जा और थोड़े ही दिनों में दुनिया का यह पहला छापाखाना एक बहुत बड़े में बदल गया।

गुटेनबर्ग के अंत जीवन के विषय में इसके सिवाय कुछ मालूम नहीं सात साल बाद मेंज के एक आर्चबिशप ने उसे अपने परिवार का सदस्य बना लिया, ताकि वह अपने जीवन के अंत वर्ष — केवल दो वर्ष और — सुख से बिता सके।

प्राचीन काल की एक छपाई मशीन

जर्मनी के बाद जिन देशों ने पहले छापाखाने का आरंभ किया—इटली और फ्रांस—जहां जर्मन मुद्रकों ने अपने प्रेस स्थापित किए, और इसके कुछ ही दिन बाद इंगलैंड ने भी इनका अनुगमन किया। विलियम कैक्सटन नामक व्यापारी ने जिसका जन्म केंट में हुआ था, जब इस नये कौशल को शुरू किया तब उसकी उम्र 50 की थी। उसे मर्चेण्ट एडवेंचरर्स कम्पनी का गवर्नर नियुक्त करके ड्यूक ऑफ बर्गंडी के साथ एक व्यापारिक संधि पर बातचीत करने के

लिए यूरोप भेजा गया। एडवर्ड चतुर्थ की बहन तथा बर्गंडी के चार्ल्स बोल्द की पत्नी डचेस मार्गरेट ने उसे अपना वाणिज्य सलाहकार बना लिया और 1471 में जब वह कोलोन में था, तभी उसने वहां का छापाखाना पहली बार देखा। उसने ब्रूजेज में अपनी पहली पुस्तक की छपाई की। यह होमर के महाकाव्य 'ईलियड' के फ्रांसीसी अनुवाद से किया गया अंग्रेजी अनुवाद था। अंग्रेजी में छपी यह प्रथम पुस्तक सन् 1474 में प्रकाशित हुई। इसके दो वर्ष बाद उसने वेस्टमिंस्टर में एक छापाखाना खोला और दार्शनिक उद्धरणों की एक पुस्तक छापकर उसका आरंभ किया।

इतनी उम्र में इंगलैंड का सर्वप्रथम मुद्रक बनने के बाद कैक्सटन को एक व्यापारी या दरबारी का जीवन छोड़ने पर कभी खेद नहीं हुआ। 70 वर्ष की उम्र में जब 1491 में उसकी मृत्यु हुई, तब तक उसे लगभग 80 पुस्तकों का प्रकाशन करके विश्व साहित्य के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों को अपने देश के लिए लभ्य बनाने का ही नहीं, अपितु अंग्रेजी भाषा को परिनिष्ठित रूप देने का सन्तोष प्राप्त था।

गुटेनबर्ग के समय का एक छापाखाना

उस समय तक अंग्रेजी की वर्तनी (हिज्जे) तथा व्याकरण निरंतर परिवर्तित होते रहते थे और स्थिति बहुत अराजक थी।

मध्ययुग का अंत जितना छापाखाने के आविष्कार के कारण हुआ, उतना और किसी भी दूसरी घटना या विकास के कारण नहीं। इसके साथ ही मानव मस्तिष्क की विप्लवकारी शक्तियां मुक्त हो गयीं। प्रतिक्रिया, अज्ञान और दमन की ताकतें जिन शक्तिशाली अस्त्रों से भयभीत रहती हैं, वे हैं विचार। अब छापाखाने के साथ ही विचारों का दूर-दूर तक प्रसार होने लगा। मुद्रित शब्दों के माध्यम से आम आदमी को आकाश और धरती के विषय में वैज्ञानिकों के नये ख़याल, सात समुद्रपार खोजे गए नये-नये देशों के विषय में समाचार सुनाई पड़ने लगे। जिस मानसिक अंधकार में विश्व के शासकगण अपनी प्रजा को रखना चाहते थे, उनमें सफेद फलक पर काले शब्द बिजली की तरह कौंधने लगे। जर्मनी के इतिहास में पुस्तिकाओं (पैंफलेट) तथा इश्तहारों ने जो महानतम जन जागरण उत्पन्न किया, वह था किसानों का विद्रोह। मार्टिन लूथर की विवेचना पुस्तक 'एक ईसाई की मुक्ति पर' जो सुधार आन्दोलन का प्रथम विस्फोट था, समूचे रोमन धर्म-साम्राज्य में गूंजने लगी।

पुस्तकें और खबरों के पर्चे और बाद में समाचार-पत्र सभ्य जीवन के अभिन्न अंग बन गए और साक्षरता इस बात का मापदंड बन गयी कि कोई राष्ट्र कितनी परिपक्वता पर पहुंचा हुआ है। पर गुतेनबर्ग के समय से लगभग साढ़े तीन शताब्दी तक छपाई की तकनीक लगभग वही की वहीं बनी रही। वर्ण के टाइप हाथ से कम्पोज किए जाते थे, और छपाई हाथ से चलनेवाले प्रेसों से की जाती थी। यह धीमे और आरम्भ से किए जाने वाले कामों का ही एक समन्वय था और यह किसी समसामयिक विषय पर ग्रन्थों के प्रकाशन के उपयुक्त नहीं था। फिर भी छपी-छपाई द्रुत सूचनाओं की आवश्यकता बढ़ती गयी। समाचार पत्रों के ढंग पर पहली बार बड़े पर्चे का उपयोग वियना के भयभीत प्राधिकारियों द्वारा तब किया गया, जब 1529 में तुर्क उनके नगर द्वार तक पहुंच गए थे। इन बड़े पर्चों में पूरे ईसाई जगत से इस घिरे हुए नगर की सहायता के लिए आगे आने का आह्वान किया गया था। इससे एक शताब्दी बाद सन् 1622 में नथानियल बटर नामक एक अंग्रेज ने वाणिज्यिक उपक्रम के रूप में पहला अखबार 'वीकली न्यूज' (साप्ताहिक समाचार) प्रकाशित किया। गृह युद्ध के दौरान और क्रामवेल के कामनवेल्थ (लोकतंत्र) के समय अनेक अखबार प्रकाशित हुए। पर इनके लिए पहले स्टार चैम्बर से और इसकी समाप्ति के बाद लांग पार्लियामेंट से लाइसेंस लेना पड़ता था। राजा और तानाशाह डरे हुए

शब्दों की खतरनाक शक्ति से आगाह हो गए थे। उस समय से ही प्रेस तथा उन लोगों के बीच जो सूचनाओं और विचारों को दबा देना चाहते हैं, एक बड़ी लड़ाई किसी-न-किसी देश में निरन्तर चलती ही आ रही है। इंगलैंड में 1702 में जब पहला समाचार-पत्र 'डेली कूरेंट' (दैनिक दूत) प्रकाशित हुआ था। तब तक प्रेस सरकार की निगरानी (सेंसरशिप) से मुक्त था, पर इसके कुछ ही बाद ब्रिटेन के प्राधिकारियों ने इसका गला घोंटने का एक और कारगर साधन तैयार कर लिया, यह था समाचार-पत्र कर। सन् 1855 तक यह स्टाम्प अधिनियम के रूप में बना रहा।

पर इस समय तक मुख्यतः इसलिए कि इसका बड़े पमाने पर उत्पादन करने के लिए नयी मशीन—वाष्प-चालित मशीनी छापाखाना—मिल गयी थी, प्रेस की शक्ति बहुत बढ़ गयी थी। सन् 1812 में एक दिन 'दि टाइम्स' के संस्थापक जानवाल्टर के पुत्र जानवाल्टर द्वितीय से उसके एक मित्र ने लंदन नगर के व्हाइटक्रास स्ट्रीट में एक कारखाने में गुतेनबर्ग के समय से अब तक छापाखाने में हुई महानतम प्रगति को देखने का अनुरोध किया।

वाल्टर वहां गए और उनका परिचय इस मशीन तथा इसके आविष्कर्ता फ्रेड्रिक कोनिग से कराया गया। यह जर्मनी का एक मुद्रक था, जो इंगलैंड चला आया था, क्योंकि यहां के पेटेंट के कानूनों में उसके देश की बनिस्बत आविष्कर्ताओं को अधिक संरक्षण दिया जाता था। उन दिनों जर्मनी का एक ही देश दर्जनों छोटी-छोटी रियासतों में बंटा हुआ था। अतः इनमें से किसी एक में कराए गए पेटेंट का शेष में कोई मूल्य ही नहीं था। कोनिग, उसके प्रधान मिस्त्री फ्रेड्रिक बायर नामक एक-दूसरे जर्मन तथा उनके आर्थिक मददगार टामस बेंस्ली ने 'दि टाइम्स' और 'ईवनिंग मेल' के लिए दो डबल मशीनें देने का करार किया। इनको पूरा करने में उन्हें दो साल लगे।

कोनिग की सूझ बहुत सरल-सी थी। इस समय तक छपने वाले प्रत्येक ताव को हाथ से कंपोज किए गए टाइप के ऊपर रखना पड़ता था; टाइप के ऊपर स्याही हाथ से चलने वाले रोलरों से पोती जाती थी और प्रेस बार को हाथ या पांव से या तो घुमाया जाता था या नीचे ठेलना पड़ता था। चुस्त से चुस्त मुद्रक भी प्रति घंटे केवल 300 शीट छाप सकता था। इसमें तो सन्देह ही नहीं कि छापाखाने में वाष्प-शक्ति का प्रयोग का विचार अनेक तकनीकी लोगों के दिमाग में आया होगा, पर इन विभिन्न गतियों का किसी वाष्प-चालित इंजन की आगे पीछे या चक्राकार क्रियाओं के साथ तालमेल बैठाना कठिन प्रतीत हो रहा था।

कोनिग को इसका समाधान मिल गया। उसने टाइप के फर्मे को इस तरह

लगाया कि वह स्याही पोतने वाले एक सिलिंडर (बेलन) के नीचे आगे पीछे सरक सके; अब हाथ से करने को केवल एक ही काम रह गया था और वह था मशीन में शीट को सरकाते रहना जो मशीन से ही फर्मे के ऊपर पहुंच जाते थे. इसके बाद एक दूसरा सिलिंडर इस कागज को इसके नीचे सरकने वाले टाइपों पर दबाता था और फिर ये जब फर्मा पीछे की ओर स्याही के अगले लेप के लिए लौटता था तो ये छपी छपाई शीटें मुद्रक के हाथ में आ जाती थीं। इस तरह बहुत कम श्रम में ही प्रतिघंटे एक हजार से बारह सौ तक शीटें छप सकती थीं।

छपाई करने वालों ने इन मशीनों की चर्चा तो सुन ही रखी थी, जो तैयार की जा रही थीं और उन्हें डर था कि कहीं उनकी रोजी न मारी जाए। वे उस घोड़ागाड़ी को घेर कर खड़े हो गए, जो इन मशीनों को 'दि टाइम्स' कार्यालय को ले जाने वाली थी और कोचवान को इन मशीनों को पहुंचाने से रोक दिया। वाल्टर ने अब एक चकमा दिया। उसने इन मशीनों को एक दूसरी इमारत में लगवा दिया और 29 नवम्बर 1814 के प्रभातकालीन संस्करण की छपाई इन पर चोरीछुपे की।

इसमें अग्र लेख में इस नयी क्रांति की घोषणा की गयी थी। वाल्टर ने लिखा था, "हमारा आज का दैनिक-पत्र छापाखाने के आविष्कार के समय से आज तक मुद्रण के क्षेत्र में हुई महानतम प्रगति के व्यावहारिक परिणामों को प्रस्तुत करता है। इस पैराग्राफ के पाठक के हाथों में 'दि टाइम्स' समाचार-पत्र की हजारों प्रतियों में से एक प्रति है जिन्हें यांत्रिक उपकरणों से मुद्रित किया गया है। इसमें एक ऐसी मशीनी पद्धति का नियोजन और संयोजन किया जाता है, जो किसी सजीव प्राणी की तरह काम करती है। इसके कारण जहां मनुष्य को काफी छपाई की मशक्कत से मुक्ति मिल गयी है, वहीं यह समस्त मानव शक्तियों से चुस्ती और फुर्ती में भी बहुत आगे निकल गयी हैं···

"जिस व्यक्ति ने यह खोज की है, उसके विषय में हमें कुछ खास नहीं कहना है। सर क्रिस्टाफर रेन का सर्वोत्तम स्मारक उनके द्वारा निर्मित भवनों में पाया जा सकता है; इसी तरह छापे की इस मशीन के आविष्कारक को हम सबसे बड़ी प्रशस्ति दे सकते हैं, वह उसके आविष्कार की शक्ति और उपयोगिता के वर्णन में ही निहित है। यहां इतना ही और कह देना पर्याप्त है कि वह सैक्सन है, कि उसका नाम कोनिग है और यह आविष्कार इसके मित्र और स्वदेशीय बन्धु बायर के निर्देशन में क्रियान्वित किया गया है।"

जान वाल्टर अपने मुद्रकों को तब तक मजदूरी देते रहे, जब तक उन्हें दूसरा काम नहीं मिल गया। थोड़े ही दिनों में यह भी पता चल गया कि जो

न लोगों की रोजी रोटी के लिए ही खतरा पैदा करती मालूम हो रही थी, वह स्तुतः मुद्रण व्यवसाय के लिए एक बहुत बड़ा वरदान थी। समाचार-पत्रों की और बाद मे सावधिक पत्रिकाओं और पुस्तकों की यांत्रिक छपाई से पाठ्य-सामग्री पहले से सस्ती हो गयी और मुद्रित सामग्री की माग ताबड़-तोड़ बढ़ती ही चली गयी।

कोनिग और बायर को अपनी सफलता से कोई आमदनी नहीं हुई। वेल्सी महाशय ने इस बात का पक्का इतजाम किया था कि उनके पौ बारह रहे। उनके कर्ज चुकाने के बाद कोनिग और बायर के पास मुश्किल से यूरोप लौटने भर को पैसे बचे रह गए थे। कुछ साल बाद उन्होंने बवेरिया के एक पुराने मठ मे मशीनी छापाखाने की एक फैक्ट्री खोली और उन्होंने किसानो के लड़को को प्रशिक्षण देकर मिस्त्री बनाया। यहां उनका व्यवसाय चमक उठा और उनकी यह फैक्ट्री आज भी बनी हुई है।

कोनिग के आविष्कार के पचास वर्ष बाद छापाखाने मे एक दूसरी महत्त्वपूर्ण उन्नति हुई—यह था रोटरी प्रेस। इस तरह की पहली मशीन विलियम बुलक नामक एक अमरीकी ने सन् 1863 में तैयार की। इसके कुछ ही समय बाद अपने ही प्रेस में एक दुर्घटना के कारण उसकी मृत्यु हो गयी। रोटरी प्रेस आज भी समाचार पत्रों की छपाई के लिए मानक प्रेस माना जाता है। इसमे एक मुसल्लम लपेटे हुए कागज पर छपाई होती है, जिससे अलग-अलग शीट लगाने की झंझट नही रहती। रोटरी मशीन मे टाइप का पटल सपाट नही होता, बल्कि वह बेलन की शक्ल में होता है—कागज, स्याही और टाइप सभी चक्राकार घूमने वाले बेलनो (सिलिंडरो) पर ही लगे होते हैं, जिससे प्रति घंटे समाचार-पत्रो की लाखो प्रतियां छप जाती हैं। 24 सिलिंडर का एक आधुनिक प्रेस प्रति घंटे 12 लाख प्रतियां तक छाप सकता है। ये दैत्याकार मशीनें काटने, तह करने और आवश्यकतानुसार-इच्छित संख्या की प्रतियों के अलग-अलग बडल तैयार करने का काम भी करती हैं। यह कहने की जरूरत नहीं कि ये एकाधिक रगों मे छपाई कर सकती हैं और छपाई केवल अक्षर टाइप की ही नहीं, अपितु चित्रों की भी हो सकती है। टाइप और चित्रो के ब्लाक एक सपाट फ्रेम मे कम्पोज किए जाते हैं। फिर एक पृष्ठ का साचा एक 'फ्लांग' या पेपरमेशी मे तैयार किया जाता है और इससे एक नियत प्रकार की चक्राकार प्लेट ढाली जाती है, जिसे टाइप सिलिंडर में जड़ दिया जाता है।

टाइप बैठाने की प्रक्रिया को मन्द और नीरस हस्तकार्य से मुक्ति दिलाने का श्रेय भी एक अन्य जर्मन को ही है, जो विदेश गया था। ओटमर मर्जेन्थेलर

ाम का एक तरुण जो वुर्तेम्बर्ग में एक स्कूल के अध्यापक का लड़का थ
ाल्टीमोर में एक कारखाने मे मिस्त्री था। इसी समय 1876 में आविष्कार
े एक दल ने एक ऐसी मशीन विकसित करने में उसकी मदद चाही, जि
हारे एक मुद्रक टाइप को मशीन से महज एक टाइपराइटर को चलाने हुए
ी-बोर्ड या चाबी पटल की सहायता से टाइप बैठा सके। ये आविष्कारक
कल्पना पर कई साल से काम कर रहे थे। इस पर वे बहुत-सा धन और श
व्यय कर चुके थे, पर किसी नतीजे पर नहीं पहुंच पा रहे थे।
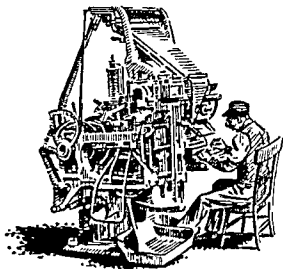
मर्गेन्थैलर की लाइनो टाइप मशीन (1900)

मर्गेन्थैलर ने इस चुनौती को स्वीकार किया। वह एक पर एक कई मशीनों की रूपरेखा तैयार करता, उन्हें बनाता और तोड़ता रहा और अन्ततः सन् 1886 में अपनी 'ब्लोअर मशीन' से इस समस्या का समाधान करने में सफल हुआ। इस मशीन का नाम 'ब्लोअर' इसलिए पड़ा कि यह हवा की धौंकनी के सहारे चलती थी, बाद में इस आविष्कार का व्यापारिक नाम 'लाइनोटाइप' पड़ा, जिस नाम से यह आज भी विख्यात है।

लाइनो टाइप में धातु की पंक्तियां तैयार होती हैं, जिन्हें 'स्लग' कहा जाता है। इनमें से प्रत्येक स्लग समाचारपत्र के कालम के अनुसार एक ही लम्बाई की

होती है। चालक जब अपने की-बोर्ड पर चाबियों को दबाता है, तो ऊपर की मैगजीन से एक संपुटक (मैट्रिक्स) निकलता है। सम्पुटक धातु की एक चादर होती है, जिसके लम्बीय कोर पर एक अक्षर या चिह्न के सांचे होते हैं; सपुटक (मैट्रिक्स) एक छोटे से कम्पोजीशन बाक्स मे निरन्तर घूमती रहने वाली पट्टी पर आकर गिरता है। पुरानी ब्लोअर मशीन मे यह यात्रा हवा की धौंक की सहायता से कराई जाती थी। शब्दो के बीच के फ़ासलों को छोटे-छोटे टांकों के द्वारा स्वचल रीति से समायोजित किया जाता है, ताकि पक्तिया ठीक लम्बाई की ही हों।

जैसे ही एक पंक्ति कम्पोज हो जाती है, चालक हैंडिल को खींच लेता है और लाइन वहा से हटकर ढलाई पर पहुंच जाती है। छिद्रों की पंक्ति में पिघली हुई धातु भर जाती है जो जल्द ही जम कर ठोस हो जाती है। इसके बाद ढली हुई पक्ति या स्लग छूटकर मशीन के सामने की ओर चली जाती है, जबकि सपुटक उठकर ऊपर चले जाते हैं और वे मैगजीन मे अपने-अपने खानों मे वितरित हो जाते हैं। प्रत्येक संपुटक मे छोटे-छोटे दाते लगे होते हैं, जो चाभी के दांतों से बहुत मिलते-जुलते होते हैं। मैगजीन मे प्रत्येक सपुटक के लिए एक खाना बना होता है और इन दांतों के सहारे ही प्रत्येक सपुटक अपने खाने मे ही जाकर गिरता है। मर्जेन्थेलर के इस स्वचल वितरण सिद्धान्त के कारण ही लाइनो-टाइप चालक निरन्तर स्लग तैयार कर पाता है; संपुटकों के मैगजीन में लौटते रहने के कारण ही यह नये टाइपों का एक अजस्र स्रोत बना रहता है।

मर्जेन्थेलर की मशीन को तत्काल सफलता प्राप्त हो गयी। 'न्यूयार्क ट्रिब्यून' मे तीस, लुईविले के 'कूरियर-जर्नल' मे बीस और 'शिकागो-न्यूज़' मे लगभग इतने ही तथा 'वाशिंगटन पोस्ट' मे भी कुछ ब्लोअर लगाए गए। फिर भी अभी एक महत्वपूर्ण समस्या का समाधान होना बाकी था। अब तक इन मशीनों के सभी संपुटक (मैट्रिक्स) हाथ से ही बनाए जाते थे। इसमे पर्याप्त कुशल कारीगरों का जुगाड़ करने की कठिनाई तो लगी हुई ही थी, साथ ही यह प्रक्रिया बहुत खर्चीली और मन्द थी। लिन बायड बैंटन नामक एक मेधावी अमरीकी आविष्कारक ने टाइप बैठाने वाली मशीन के स्थान पर पेण्टोग्राफ सिद्धान्त पर मशीनी पंचकटर तैयार करके इस मुश्किल को भी आसान कर दिया।

टाइप बैठाने के दूसरे कामों मे, जिनमें शुद्धियों की आवश्यकता पड़ती है—विशेषकर पुस्तकों की छपाई मे—मोनो टाइप को अधिक सुविधाजनक पाया गया है। इसका आविष्कार उन्नीसवीं शताब्दी के नवें दशक मे टालबर्ट लैंस्टन

से किया। यह एक गरीब नौजवान था, जिसका जन्म आयोवा में हुआ था और जो अमरीकी गृहयुद्ध में सैनिक रहा था और बाद में वाशिंगटन में अधिकारी बन गया था। इस मशीन में दो अलग-अलग हिस्से होते हैं: एक चाबी पटल वाली मशीन जो कागज के गालों को एक निश्चित प्रतिरूपों में छिद्रित करती है। इनमें से प्रत्येक प्रतिरूप एक अक्षर को प्रस्तुत करता है। दूसरा होता है एक कास्टर (ढलाई करने वाला हिस्सा)। छिद्रों से संयुक्त निकलकर इनमें आते हैं, जिनसे अक्षर धातु के एकल टाइपों में (लाइनोटाइप की तरह पूरी पंक्ति एक स्लग नहीं) ढलकर निकलते हैं। इन टाइपों में स्वचल रीति से टाइप जुड़ जाते हैं और बीच के फासलों का समायोजन होता जाता है। मोनोटाइप चाबी पटल के सहारे सीधे और श्री टाइप, छोटे और बड़े 300 अक्षर और इसी प्रकार के विशेष अक्षर तथा चिह्न बैठाने की गुंजाइश रहती है।

गो कि मर्जेन्थैलर का लाइनोटाइप दुनिया के अनगिनत छापाखानों में आज भी अपना काम बेजोड़ रीति से कर रहा है। टाइप सजाने के क्षेत्र में हुई एक नयी क्रांति ने इस प्राचीन व्यवसाय को एक नयी शक्ति दे दी है। सच कहें तो यह एक क्रांति न होकर कई क्रांतियों का समन्वय है। इधर बहुत तेजी से लाइन ढालने वाली, सिर्फ हस्त-चालित ही नहीं, बल्कि पंचटेपों से काम करने वाली मशीनें विकसित हुई हैं, जिनसे कागज के गालों पर छिद्रों के प्रतिरूप बनते जाते हैं, फिर ये बड़ी तेज रफ्तार से स्वचल लाइनोटाइपों में पहुंच जाते हैं। अब समीकरण (पंक्तियों को समान रखना) और विभेदन (पंक्तियों के अन्त में शब्दों का अलगाव) की चिन्ता किए बिना ही अगला टंकन बहुत तेज रफ्तार से किया जा सकता है—इस तरह जो टेप तैयार होता है, उसे मुद्रकों की भाषा में 'इडियट टेप' कहते हैं; अब इस टेप को एक संगणक (कम्प्यूटर) में भरा जाता है, जो एक दूसरा छिद्रित टेप तैयार करता है, जिसमें अपेक्षित समीकरण विभेदन आदि होते हैं और अब यह लाइन ढालने वाली मशीन में पहुंच जाता है।

फोटो कम्पोजीशन छपाई के क्षेत्र में एक सर्वथा नयी अवधारणा है। इस उपकरण में एक चाबी पटल एकक, एक फोटो एकक, टेप सम्पादक, संशोधक और कम्पोज करने वाला यन्त्र होता है। चालक प्रति को एक चाबी पटल पर टाइप करता है, फिर वह टेप के एक गाले पर टाइप करके उन पर अपेक्षित पैटर्नों (प्रतिरूपों) के छिद्र करता है; उसके जिसमें 6 से 36 पाइण्ट के फाउण्ट या अक्षर टाइप होते हैं। (चालक का काम उसके सामने एक टेलि... स्क्रीन की शक्ल में आ जाता है; यदि उससे कोई गलती हो जाए तो वह...

पंक्ति को हटाकर इसे फिर टाइप कर सकता है।) अनेक चाबी पटलों से छिद्रित टेप एक ही फोटो एकक को भेजे जा सकते है, जो कि एक बड़ी अल्मारी जैसा दिखाई देता है। यहां पर छिद्र कागज या फिल्म पर टाइपों की शक्ल ले लेते है, जिसकी जाच मुद्रक का प्रवाचक करता है। यदि कोई संशोधन करना हुआ तो वह परिशोधक (करेक्टर) मे कर दिया जाता है। त्रुटिपूर्ण लाइन के स्थान पर एक नयी पंक्ति चाबी पटल पर जोड़ी जाती है, जिसे फोटो एकक गेली की शक्ल मे ला देता है; इसके बाद इस सशोधन गेली को करेक्टर मे पहुचा दिया जाता है, जो स्वचल रीति से गलत पक्ति को काटकर अलग कर देता है और फिल्म या कागज पर इसके स्थान पर नयी पक्ति रख देता है।

फिल्म के निगेटिव से पूरे पृष्ठ की सज्जा कम्पोजर मे की जाती है, जो एक विद्युत् चालित फोटोग्राफी की मशीन है। यहा किसी समाचारपत्र अथवा पत्रिका के सारे टाइप अपेक्षित स्थिति और आकार मे सज्जित किए जाते हैं— क्योंकि यह मशीन किसी टाइप को 4 पाइंट से 216 पाइंट तक के टाइपों में घटा या बढा सकती है। कम्पोजर पृष्ठ को फिल्म या कागज पर उतार देता है; फिर चित्र लगाए जाते हैं और अब पृष्ठ एनग्रेवर या प्लेटमेकर (फलक तैयार करने वाला यन्त्र) के लिए तैयार हो जाता है।

इससे भी अधिक परिष्कृत संस्करण न्यूयार्क की बेल टेलीफोन प्रयोगशाला ने तैयार किया है। इसमें प्रत्येक अक्षर कम्प्यूटर सदृश्य 'स्मृति' (मेमोरी) को दी गयी हिदायतों के अनुसार सूक्ष्म खडो से जोड़ा जाता है और इसे त्वरित विद्युत् रश्मि के सहारे ऋणाग्र किरण-पट पर प्रक्षेपित किया जाता है। पर्दे के आगे इसके साथ ही साथ एक कैमरा चालू रहता है, जिससे बहुत तीव्र गति से आते हुए अक्षरों के बिम्बो का फोटोचित्र तैयार होता रहता है और इस तरह जो फिल्म बनती है, उससे छपाई के प्लेट तैयार किए जाते हैं। यह दावा किया गया है कि सिद्धान्ततः इस पद्धति से प्रति सेकण्ड कई हजार अक्षर तैयार किए जा सकते हैं, परन्तु प्रायोगिक मशीन से अभी प्रति सेकण्ड 150 अक्षर तैयार हो पाए हैं।

किसी दूरस्थ स्थान पर टाइप जोड़ने की एक दूसरी समस्या का भी समाधान सफलतापूर्वक किया जा चुका है जिससे वही समाचारपत्र दो या कई नगरों से एक साथ निकाला जा सकता है। यह बड़े समाचारपत्रों के लिए बहुत लाभकारी चीज़ है। केबल या रेडियो से किसी टेप के पाठ के पूरे प्रतिरूप (पैटर्न) को संचारित या ग्रहण किया जा सकता है। इससे पहले जैसा ही एक टेप छिद्रण एकक (परफोरेटर यूनिट) से छिद्रित हो सकता है, जो पक्ति की ढलाई करने

वाली मशीन में पहुँच जाता है। उसी का एक भिन्न रूप अविकल पृष्ठ प्रतिलिपि प्रेषक (होल पेज फेसिमाइल ट्रांसमिटर) है, जो इस शताब्दी के सातवें दशक का ब्रिटेन का आविष्कार है; जिससे लन्दन के मुद्रित प्रकाशन देशों को सेवा प्रदान की जा रही है। इसमें एक पृष्ठ को पूरा कर लेने के बाद दूरदर्शी (टेलीविजन) सदृश कैमरे से साढ़े बारह मिनट के भीतर प्रेषित किया जाता है जो ग्राहक सिरे पर एक धातु पर प्रत्यंकित हो जाता है।

आगे चलकर हम कतिपय बहुत हाल की प्रवर्तन पद्धतियों का वर्णन करेंगे। परन्तु अभी हमें सबसे महत्वपूर्ण यंत्र टाइपराइटर का उल्लेख करना है, जो कि हमारे युग का सचमुच अनिवार्य उपकरण है। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में अनेक देशों के चालीस से अधिक देशों के आविष्कर्ताओं ने लिखने वाली एक मशीन की समस्या को सुलझाना चाहा। इसका आरम्भ एक अंग्रेज से हुआ, जिसे सन् 1714 में ही पेटेण्ट भी मिल गया था, पर इनमें से कोई व्यवहार्य नहीं सिद्ध हुआ।

क्रिस्टोफर लैथम शोल्स, जिसने एक मुद्रक के रूप में अपनी जीवनचर्या आरम्भ की और जिसने एक पोस्टमास्टर, चुंगी कलक्टर, सम्पादक और आविष्कारक के रूपों में सफलतापूर्वक काम भी किया था, 43 वर्ष की उम्र हो जाने पर मिल्वाकी में सेनेटर हुआ, और इसी समय इस समस्या में भी उसकी रुचि जाग्रत हुई। 1867 में उसने ओहायो के एक लोहकर्मी के पुत्र कार्लो गिल्डन के सहयोग से जो स्वयं अटार्नी था, टाइपराइटर का सर्वप्रथम प्रायोगिक माडल तैयार किया। यह एक बहुत भारी भरकम यंत्र था, जिसमें पियानो जैसा चाबी पटल (की-बोर्ड) या अ र तीन पाए लगे हुए थे तथा प्रत्येक चाबी के लिए कई तार लगे हुए थे। अब तक लगभग चार दर्जन नमूने तैयार किए जा चुके थे, पर इन सबमें यह पहला और अन्तिम ऐसा नमूना था, जो मोटे तौर पर आज के किसी टाइपराइटर की शक्ल का था, गो यह अपेक्षाकृत बहुत ऊंचा था और इसे बहुत कीमती नक्काशी आदि से अलंकृत किया गया था। उसे इलियन आयुध शाला (आर्म्स फैक्ट्री) से ठेका भी मिल गया। पहली बार 1873 में एक हजार मशीनें तैयार की गयीं; इस माडल का नाम 'रेमिंगटन' रखा गया था।

हमारे दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले अन्य तकनीकी साधनों की तुलना में हालांकि टाइपराइटर एक बहुत मामूली किस्म की मशीन है, पर यह यांत्रिक परिष्कृति का एक छोटा-मोटा अजूबा है। रेमिंगटन के पहले प्रास्पैक्टस में दावा किया गया था, वह आज भी उचित ठहरता है। कलम की तुलना में इसके लाभ—सुपाठ्यता, तेजी, सुकरता, सुविधा, मितव्ययिता,...इस मशीन के प्रयोग

से हाथ कांपने, दृष्टि की मंदता, मेरुदंड की वक्रता का कोई भय नहीं···समुद्र या रेल की यात्रा करता हुआ मनुष्य भी इससे लिख सकता है, जबकि इन अवसरों पर हाथ से लिखना असंभव होता है। 'यह मशीन कलम से बाजी मार ले जाती है', इसकी सिफारिश पत्रकारों, आशुलिपिकों, वकीलों, लेखकों, नाटककारों, पादरियों, व्यापारियों, महाजनों और पत्राचार के लिए सभी व्यवसायियों के लिए की गयी थी।

इस प्रथम व्यवहार्य टाइपराइटर के आविष्कारक और निर्माता दोनों ने इस मशीन के जिस अतिशय महत्त्वपूर्ण पक्ष का पूर्वानुमान नहीं किया था, वह था विक्टोरिया युगीन परिवारों में गरीब और मध्यवर्गीय तबकों की लड़कियों और महिलाओं की उस निकृष्ट अवस्था से मुक्ति जिसमें वे पड़ी हुई थीं। टाइपराइटर ने उन्हें अर्थकर कार्य का अवसर देकर उनको स्वतंत्रता प्रदान करने में उनके उद्धार के लिए किए गए आन्दोलनों, संगठनों और प्रकाशनों से कहीं अधिक बड़ा कार्य किया, *जिनमें समाज में महिलाओं के लिए बराबरी के दर्जे की मांग की* जाती थी। यह भी एक रोचक तथ्य है कि सन् 1885 में काउण्ट लेव तोल्स्तोय पहले ऐसे यूरोपीय लेखक थे, जिन्होंने टाइपराइटर का उपयोग किया। उन्होंने अपनी लड़की से इसका अभ्यास कराया और उसे ही वे अपनी अनेक कृतियां तथा सारे पत्र बोलकर टाइप कराते थे। वह यूरोप की सर्वप्रथम टाइपिस्ट लड़की थी और इस रूप में वह महिलाओं की उस विशाल वाहिनी की अग्रचारिणी थी, जिसे टाइपराइटर के चाबी पटल ने स्वतन्त्र वृत्तियां प्रदान कीं।

1880 के आसपास बड़े नगरों के व्यवसाय केन्द्रों में शायद ही कोई लड़की नज़र आ सकती थी। उन्हीं की तरह महिलाएं भी इन स्थानों पर कभी नहीं जाती थीं। आज वाणिज्यिक और प्रशासनिक संस्थानों में इनकी संख्या पुरुषों से बहुत अधिक है। इस अति महत्त्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन को घटित करने में सबसे प्रधान तत्व टाइपराइटर ही था।

वाणी टर्मिनल में बदल जाता है। इसी का एक भिन्न रूप अधिकतम पूर्ण ऑटोमैटिक पैनल (होल सेल ऑटोमेटिक इंटरचेंज) है जो इस प्रणाली के आगे इस का विशेष का आविष्कार है, जिसने अन्तर के सुदूरवितरण प्रकार केन्द्रों को सेवा प्रदान की जा रही है। इसमें एक पृष्ठ को पूरा कर लेने के बाद टाइपिंग (रेफरिंग) मशीन बंद करने के बाद बारह मिनट के भीतर प्रेषित किया जाता है, जो पाठक सिरे पर एक यंत्र पर प्रदर्शित हो जाता है।

आगे चलकर हम कतिपय बहुत हाल की प्रत्यक्ष पद्धतियों का वर्णन करेंगे। परन्तु अभी हमें सबसे महत्त्वपूर्ण यंत्र टाइपराइटर का उल्लेख करना है, जो कि हमारे युग का सबसे अपरिहार्य उपकरण है। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में अनेक देशों के नागरिक से अधिक देशों के आविष्कारों ने लिखने वाली एक मशीन की समस्या को सुलझाना चाहा। इसका आरम्भ एक अंग्रेज से हुआ, जिसे सन् 1714 में ही पेटेन्ट भी मिल गया था, पर इसमें से कोई व्यवहार्य नहीं सिद्ध हुआ।

क्रिस्टोफर सैथम शोल्स, जिसने एक मुद्रक के रूप में अपनी जीवनचर्या आरम्भ की और जिसने एक पोस्टमास्टर, चुंगी कलक्टर, सम्पादक और आविष्कारक के रूपों में सफलतापूर्वक काम भी किया था, 48 वर्ष की उम्र हो जाने पर मिल्वाकी में सेनेटर हुआ, और इसी समय इस समस्या में भी उसकी रुचि जाग्रत हुई। 1867 में उसने ओहायो के एक लोहकर्मी के पुत्र कार्लो ग्लिडन के सहयोग से जो स्वयं अटार्नी था, टाइपराइटर का सर्वप्रथम प्रायोगिक माडल तैयार किया। यह एक बहुत भारी भरकम यंत्र था, जिसमें पियानो जैसा चाबी पटल (की-बोर्ड) था और तीन पाए लगे हुए थे तथा प्रत्येक चाबी के लिए कई तार लगे हुए थे। अब तक लगभग चार दर्जन नमूने

से हाथ कापने, दृष्टि की मदता, मेरुदंड की वक्रता का कोई भय नहीं'''समुद्र य
रेल की यात्रा करता हुआ मनुष्य भी इससे लिख सकता है, जबकि इस अवसर
पर हाथ से लिखना असंभव होता है। 'यह मशीन कलम से बाजी मार ले जात
है', इसकी सिफारिश पत्रकारो, आशुलिपिकों, वकीलो, लेखकों, नाटककारों
पादरियों, व्यापारियो, महाजनो और पत्राचार के लिए सभी व्यवसायियो के लि
की गयी थी।

इस प्रथम व्यवहार्य टाइपराइटर के आविष्कारक और निर्माता दोनो ने
इस मशीन के जिस अतिशय महत्त्वपूर्ण पक्ष का पूर्वानुमान नही किया था, वह थ
विक्टोरिया युगीन परिवारों मे गरीब और मध्यवर्गीय तबको की लड़कियो और
महिलाओं की उस निकृष्ट अवस्था से मुक्ति जिसमे वे पड़ी हुई थी। टाइपराइटर
ने उन्हें अर्थकर कार्य का अवसर देकर उनको स्वतत्रता प्रदान करने मे उनके
उद्धार के लिए किए गए आन्दोलनो, सगठनो और प्रकाशनों से कही अधिक बड़
कार्य किया, जिनमे समाज मे महिलाओ के लिए बराबरी के दर्जे की माग क
जाती थी। यह भी एक रोचक तथ्य है कि सन् 1885 मे काउण्ट लेव तोल्स्तोय
पहले ऐसे यूरोपीय लेखक थे, जिन्होने टाइपराइटर का उपयोग किया। उन्होंने
अपनी लड़की से इसका अभ्यास कराया और उसे ही वे अपनी अनेक
कृतिया तथा सारे पत्र बोलकर टाइप कराते थे। वह यूरोप की सर्वप्रथम
टाइपिस्ट लड़की थी और इस रूप मे वह महिलाओं की उस विशाल वाहिनी
की अग्रचारिणी थी, जिसे टाइपराइटर के षार्वी पटल ने स्वतन्त्र वृत्तिय
प्रदान की।

जो एक वोल्ट विती से चालित था। धातु की दो दर्जन कीलों से चलता था, जिनमें से हरएक वर्णमाला के एक अक्षर के लिए था। जब एक विती को एक कील से संयोजित करने वाला परिपथ बन्द हो जाता था तो रिसीवर में लगे उसके प्रतिरूप कील से कुछ बुलबुले उठते थे। रिसीवर अम्लीकृत जल से भरा हुआ शीशे की एक टंकी था। ट्रांसमीटर (प्रेषी) और रिसीवर को जोड़ने के लिए सोमेरिंग को दो दर्जन तारों की आवश्यकता पड़ी थी। यह एक जटिल प्रणाली थी, पर यह कारगर सिद्ध हुई थी।

कोपेन हैगन के प्रोफेसर ओरस्टेड द्वारा विद्युत्-धारा एक चुम्बकीकृत सुई के विचलन की खोज ने दूर संदेश विद्या के क्षेत्र में प्रयोगशील वैज्ञानिकों के लिए एक नया मार्ग खोल दिया। गोटिंजेन वेधशाला के निदेशक कार्ल फ्रेडरिक गॉस ने सोमेरिंग के तार को म्यूनिख में देखा था, जिससे उसे इस विचार को लेकर काम करने की प्रेरणा मिली। गोटिंजेन विश्वविद्यालय में भौतिकी के एक प्रोफेसर विलेम वेबर नामक एक सहयोगी के साथ उसने वेधशाला से भौतिकी प्रयोगशाला तक की दो मील से अधिक की दूरी तक एक तार लाइन लगाई (उन्हें मकानों की छत पर अपने तार लगाने के विषय में अधिकारियों की अनुमति प्राप्त करने में कुछ कठिनाई भी हुई)। ट्रांसमीटर से आने वाले संवेगों के कारण रिसीवर में एक लोहे की शलाका का विचलन होता था, जिसका प्रयोग चुम्बकीय सुई के स्थान पर किया गया था। गॉस ने एक दर्पण धारामापी (मिरर गाल्वानोमीटर, का आविष्कार किया था। इस विचलन का अवेक्षण इसी के द्वारा किया जाता था। दर्पण धारामापी से एक छोटा-सा दर्पण चुम्बकीय शलाका से लगा रहता था, जिसे अनुमशोधित (कैलिब्रेटिड) मान लगे हुए लघु-परिसर (शार्ट रेंज) दूरदर्शी के माध्यम से देखा जाता था, ताकि हल्के-से-हल्के विचलन की भी बहुत दुरुस्त माप हो सके। दोनों वैज्ञानिकों ने मिलकर वर्णमाला के अक्षरों के लिए एक विचलनकूट (डिफ्लेक्शन कोड) निश्चित किया।

यद्यपि उनका उद्देश्य वेधशाला से प्रयोगशाला के बीच वैज्ञानिक आंकड़ों का आदान-प्रदान मात्र था, परंतु यह पहली विद्युत् तार-प्रणाली थी, जिसमें खासी लंबी दूरी तक संदेश भेजने की गुंजाइश थी। उनका पहला तार-[illegible] था,—'माइकेलमान आ रहा है'—माइकेलमान उस मिस्त्री का नाम था, जिसने उपकरणों को लगाने में इन वैज्ञानिकों की सहायता की थी। इस संदेश के लि[illegible] विचलनों की आवश्यकता पड़ी थी।

गॉस ने लिखा, "मेरा विश्वास है कि यदि उपयुक्त तार लगाये जाएं तो इस से गोटिंजेन से हैनोवर और हैनोवर से ब्रेमेन तक संदेश भेजे जा सकते हैं।

व्यक्ति ने टेलीग्राफ को त्रुटिहीन बनाया और इसे विश्वव्यापी उपयोग
ना दिया, वह कोई वैज्ञानिक नहीं, अपितु एक कलाकार था। सैम्युएल
, कनेक्टिकट के एक ग्रामीण पादरी का लड़का था। बचपन में वह कुछ
अपने स्कूल के छात्रों के पोर्ट्रेट बनाया करता था, पर 30 की अवस्था
तक एक चित्रकार के रूप में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर गया था। वाशिंगटन
की सार्वजनिक इमारतों में उसके बनाये कुछ इतिहास प्रसिद्ध
के चित्र, जिनमें राष्ट्रपति मनरो और लेफयेट के चित्र भी शामिल हैं
बहुत महत्त्व के साथ टंगे हैं। पर अपनी सुन्दरी पत्नी के निधन के बाद
लगा कि अब वह अपने इस कार्य को आगे जारी नहीं रख सकता और
म्बी यात्रा पर यूरोप चला गया। सन् 1832 में जब वह एक समुद्री
सवार होकर अमरीका को वापस आया तब उसकी उम्र चालीस से
। समुद्र यात्रा ने उसके जीवन में एक नया मोड़ सा दिया।

ज के यात्रियों में एक तरुण अमरीकी डॉक्टर था, जो अपने सहयात्रियों
जन कुछ वैज्ञानिक खेल-तमाशे दिखाकर करता रहता था। उसने
प्रोफेसर आपियर को एक विद्युत् चुम्बक प्रदर्शित करते देखा था, और
वह एक अपने साथ लेता आया था, जिसमें वोल्टा चित्ती भी लगा हुआ
ने खेल में यह भी दिखाया कि यदि किसी लोहे के चारों ओर बिजली
लपेट कर उसमें बिजली का करेंट गुजारा जाए तो वह लोहा भी
रूप से चुम्बक बन जाएगा। पर धारा के रुकने के साथ ही इसका
गायब हो जाएगा।

युएल मोर्स इस डॉक्टर के खेलों को बहुत गौर से देखा करता था। उसके
में अकस्मात् एक विचार कौंध गया, जो उसके ही शब्दों में इस प्रकार
दि विद्युत्-चुम्बक से किसी विद्युत् परिपथ को बंद करने के बाद उसके
हिस्से में बिजली की विद्यमानता को दृश्य बनाया जा सकता है तो कोई
हीं कि ज्ञान को भी बिजली के साथ ही प्रेषित न किया जा सके।" इस
ने ही इस कलाकार को आविष्कारक बना दिया।

उसे पहले विभिन्न आविष्कारकों ने बिजली से संकेत प्रेषित करने के जो
प्रयोग किए थे, उनकी जानकारी मोर्स को नहीं थी। उसके मन में केवल
ल आया कि अब अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क के लिए कोई आधुनिक यन्त्र हो
समय आ गया है। इंगलैंड की औद्योगिक क्रान्ति ने उस देश की सामाजिक
र्थिक रूप से इतनी कायापलट कर दी थी कि उसे पहचानना कठिन
र अमरीका भी उसी मार्ग पर चल प

सुइयों का प्रयोग किया और इन्हें दो निब चलाते थे, जिनमें स्याही का पात्र लगा होता था। फिर समाचार को एक सरकते हुए कागज के पुलिंदे पर अंकित करते जाते थे। स्टाइनील का पहला तार सन् 1837 में म्यूनिख की अकादमी और वेधशाला के बीच लगा था। इसी बीच न्यूरेम्बर्ग और फर्थ के बीच में जर्मन रेलवे लाइन बिछ चुकी थी और उनसे इस रेल लाइन से सटी एक तार की लाइन लगाने को कहा गया था।

स्टाइनील ने पहले एक ही तार लगाने और करेंट को रेल की पटरियों के जरिए लौटाने का इरादा किया, पर पटरियों के उनके जोड़ इस काम के लिए उतने उम्दा नहीं थे। खैर, इन प्रयोगों के दौरान ही स्टाइनील को यह पता चला कि धरती स्वयं ही एक उत्तम कोटि का संवाहक है। धरती को दूसरे तार के काम के लिए नम बनाने के लिए सिर्फ धातु के दो पत्तरों को क्रमश: ट्रांसमीटर और रिसीवर से तार द्वारा संलग्न करके भूमिगत जल के स्तर तक उतार देना था और धरती स्वयं परिपथ को बंद कर देगी।

बैरन पाल शिलिंग नामक एक वैज्ञानिक रुझान रखने वाले एक राजनयिक ने, जो म्यूनिख के रूसी दूतावास से सम्बद्ध था, सोमेरिंग के विद्युत् तार को देखा था और वह इसका एक नमूना 1812 में ज़ार को दिखाने के लिए पीटर्सबर्ग ले गया था। अलेक्जेंदर प्रथम उदार वृत्ति का शासक था, पर उसे यह डर था कि उसके साम्राज्य मे सचार का उन्नयन उसकी निरंकुश शक्ति को कमजोर बना सकता है, अतः उसने शिलिंग को तार लाइन का निर्माण करने से तो मना कर ही दिया, इस आविष्कार के विषय में वैज्ञानिक पत्रों मे निबन्ध लिखने से भी वर्जित कर दिया।

परन्तु शिलिंग इसके बावजूद तार के विषय में प्रयोग करता रहा और इसने 1835 में बॉन मे हुए वैज्ञानिक सम्मेलन मे पांच चुम्बकीय सुइयों से चालित एक प्रणाली का प्रदर्शन किया। आइडिलबर्ग के एक प्रोफेसर ने शिलिंग से यह उपकरण उधार लिया और अपने व्याख्यान के दौरान उसने इसे अपने छात्रों को दिखाया। विलियम फोदरगिल कुक (बाद में सर विलियम कुक) नामक एक अंग्रेज, जो आइडिलबर्ग मे चिकित्सा विज्ञान का छात्र था, इससे बहुत प्रभावित हुआ और इंगलैंड लौटने के बाद उसने किंग्स कालेज लन्दन के एक प्रोफेसर सर चार्ल्स ह्वीटस्टन के साथ मिलकर शिलिंग की प्रणाली को सुधारने का प्रयत्न आरंभ किया।

कुक-ह्वीटस्टन का तार भी पांच सुइयों से चलता था। ये सुइयां एक पारएकार पेनल पर क्रमबद्ध रूप से लगी थी। पेनल पर वर्णमाला के अक्षर इस

0 से 9 तक के अंक लिखे थे; सुइयों की स्थिति से प्रेषित अक्षर या अंक प्रकट होता था।

इन दोनों वैज्ञानिकों ने मिलकर इंगलैंड की पहली तार लाइन—पांच तारों वाली—लन्दन-ब्लैकवैल रेलवे के किनारे-किनारे लगाई। यह इतनी सफल हुई कि ग्रेट वेस्टर्न रेलवे ने पैडिंगटन से स्लो तक 19 मील लम्बी तार लाइन बिछाई। यह लाइन सन् 1844 में खुली। जनता का आह्वान करते हुए इश्तहार लगाए गए कि वह इसका उपयोग करे और देखे कि यह कैसे चलता है।

पहले तो लोगों की समझ में ही नहीं आ रहा था कि इसकी सुइयों, तारों और आपरेटरों को निहारने के अतिरिक्त अपने युग के इस अजूबे का वे और उपयोग भी क्या कर सकते हैं। परन्तु इसके कुछ ही बाद 'तात्कालिक संचार' की शक्ति का बहुत प्रभावशाली ढंग से प्रदर्शन हुआ। 1 जनवरी 1845 को पैडिंगटन के आपरेटर ने निम्न तार प्राप्त किया :

"साल्टहिल में एक हत्या कर दी गयी और सन्दिग्ध हत्यारे को प्रातः 7-42 पर छूटने वाली गाड़ी से लन्दन का प्रथम श्रेणी का टिकट लेकर सवार होते देखा गया। उसने क्वेकरों का भूरे रंग का ओवरकोट पहन रखा है, जो लगभग उसके पांवों तक पहुंचता है। वह द्वितीय-प्रथम श्रेणी के अन्तिम डिब्बे में है।"

आपरेटर की समझ में 'क्वेकर' शब्द का अर्थ नहीं आ रहा था और उसने उसे दरयाफ्त करने के लिए स्लो से पूछताछ की। उसे जवाब मिला 'क्व' पी (P) और 'आर' (R) के बीच वाले अक्षर के लिए है। तार के पैनल पर 'क्यू' (Q) अक्षर नहीं था। वह भाग कर थाने पहुंचा और संदेश दे दिया। जब गाड़ी पैडिंगटन पहुंची, उस समय सादे कपड़े में दो सिपाही उस 'क्वेकर' की तलाश में खड़े थे। एक घोड़ा गाड़ी से वे उसका पीछा करते हुए लन्दन के पार चले गए और अन्ततः उसे गिरफ्तार कर लिया।

जान टॉवेल की हत्या का मुकदमा 1845 की एक सनसनीखेज घटना थी। पुलिस के सिपाहियों ने अपने बयान में बताया था कि कैसे तार के जरिये वे अपराधी को पकड़ने में सफल हुए। टॉवेल ने अपराध स्वीकार किया और उसे फांसी की सज़ा हुई और लन्दन-निवासियों की जबान पर एक ही वाक्य था : "तो फिर तारों ने जान टॉवेल को फांसी पर चढ़ा दिया।"

कुक-व्हीटस्टन सूची तार को अन्ततः इस तरह पुनर्निर्मित किया गया कि यह एक ही सुई के सहारे ही काम कर सके। यह बहुत बाद तक ब्रिटेन में काम करता रहा। *अभी हमारी शताब्दी तक भी उसकी कुछ लाइनें चालू रही हैं।* पर इस बीच ही अमरीका में एक इससे भी उम्दा पद्धति विकसित कर ली गयी।

Under the Special Patronage of Her Majesty

And H. R. H. Prince Albert

GALVANIC AND MAGNETO

ELECTRIC TELEGRAPH,

GT. WESTERN RAILWAY.

The Public are respectfully informed that this interesting & most extraordinary Apparatus, by which upwards of 50 SIGNALS can be transmitted to a Distance of 280,000 MILES in ONE MINUTE,

May be seen in operation, daily, (Sundays excepted,) from 9 till 8, at the

Telegraph Office, Paddington,

AND TELEGRAPH COTTAGE, SLOUGH.

ADMISSION 1s.

"*This Exhibition is well worthy a visit from all who love to see the wonders of science.*"—Morning Post.

Despatches Instantaneously sent to and fro with the most confiding secrecy. Post Horses and Conveyances of every description may be ordered by the Electric Telegraph, to be in readiness on the arrival of a Train, at either Paddington or Slough Station.

The Terms for sending a Despatch, ordering Post Horses, &c., only One Shilling.

N.B., Messengers in constant attendance, so that communications received by Telegraph, would be forwarded, if required, to any part of London, Windsor, Eton, &c.

THOMAS HOME, Licensee.

[illegible]

THE WONDER of the AGE ! !

INSTANTANEOUS COMMUNICATION.

Under the special Patronage of Her Majesty & H.R.H. Prince Albert.

THE GALVANIC AND ELECTRO-MAGNETIC

TELEGRAPHS,

ON THE

GT. WESTERN RAILWAY.

May be seen in constant operation, daily, (Sundays excepted) [illegible] at the

TELEGRAPH OFFICE, LONDON TERMINUS, PADDINGTON AND TELEGRAPH COTTAGE, SLOUGH STATION.

An Exhibition [illegible] Metropolis. [illegible] whole of the Nobility of England.

"This Exhibition, which has so much excited Public attention of late, is well worthy a visit from all who love to see the wonders of science."—Morning Post.

The Electric Telegraph [illegible] New York, [illegible] has been given.

The Electric Fluid travels at the rate of 280,000 Miles per Second.

By its powerful agency [illegible]

The great national importance of this wonderful invention [illegible]

जिस व्यक्ति ने टेलीग्राफ को त्रुटिहीन बनाया और इसे विश्वव्यापी उपयोग की वस्तु बना दिया, वह कोई वैज्ञानिक नहीं, अपितु एक कलाकार था। सैम्युएल ब्रीज मोर्स, कनेक्टिकट के एक ग्रामीण पादरी का लड़का था। बचपन में वह कुछ पैसे लेकर अपने स्कूल के छात्रों के पोर्ट्रेट बनाया करता था, पर 30 की अवस्था होने तक वह एक चित्रकार के रूप में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर गया था। वाशिंगटन और न्यूयार्क की सार्वजनिक इमारतों में उसके बनाये कुछ इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों के चित्र, जिनमें राष्ट्रपति मनरो और लेफयेट के चित्र भी शामिल हैं आज भी बहुत महत्त्व के साथ टंगे हैं। पर अपनी सुन्दरी पत्नी के निधन के बाद उसे लगने लगा कि अब वह अपने इस कार्य को आगे जारी नहीं रख सकता और वह एक लम्बी यात्रा पर यूरोप चला गया। सन् 1832 में जब वह एक समुद्री जहाज पर सवार होकर अमरीका को वापस आया तब उसकी उम्र चालीस से ऊपर थी। समुद्र यात्रा ने उसके जीवन में एक नया मोड़ ला दिया।

जहाज के यात्रियों में एक तरुण अमरीकी डॉक्टर था, जो अपने सहयात्रियों का मनोरंजन कुछ वैज्ञानिक खेल-तमाशे दिखाकर करता रहता था। उसने पेरिस में प्रोफेसर आपेयर को एक विद्युत् चुम्बक प्रदर्शित करते देखा था, और इसमें से वह एक अपने साथ लेता आया था, जिसमें वोल्टा चित्ती भी लगा हुआ था। उसने खेल में यह भी दिखाया कि यदि किसी लोहे के चारों ओर बिजली का तार लपेट कर उससे बिजली का करेंट गुजारा जाए तो वह लोहा भी अस्थायी रूप से चुम्बक बन जाएगा। पर धारा के रुकने के साथ ही इसका चुम्बकत्व गायब हो जाएगा।

सैम्युएल मोर्स इस डॉक्टर के खेलों को बहुत गौर से देखा करता था। उसके मस्तिष्क में अकस्मात् एक विचार कौंध गया, जो उसके ही शब्दों में इस प्रकार था: "यदि विद्युत्-चुम्बक से किसी विद्युत् परिपथ को बंद करने के बाद उसके किसी हिस्से में बिजली की विद्यमानता को दृश्य बनाया जा सकता है तो कोई वजह नहीं कि ज्ञान को भी बिजली के साथ ही प्रेषित न किया जा सके।" इस विचार ने ही इस कलाकार को आविष्कारक बना दिया।

इससे पहले विभिन्न आविष्कारकों ने बिजली से संकेत प्रेषित करने के अ विविध प्रयोग किए थे, उनकी जानकारी मोर्स को नहीं थी। उसके मन में केवल यह ख्याल आया कि अब अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क के लिए कोई आधुनिक यंत्र हो इसका समय आ गया है। इंगलैंड की औद्योगिक क्रान्ति ने उस देश की सामाजिक और आर्थिक रूप से इतनी कायापलट कर दी थी कि उसे पहचानना कठि था, और अमरीका भी उसी मार्ग पर चल पड़ा था। भाप स्थल-परिवहन

से हाथ कापने, दृष्टि की मंदता, मेरुदंड की वक्रता का कोई भय नहीं···समुद्र या रेल की यात्रा करता हुआ मनुष्य भी इससे लिख सकता है, जबकि इन अवसरों पर हाथ से लिखना असंभव होता है। 'यह मशीन कलम से बाजी मार ले जाती है', इसकी सिफारिश पत्रकारों, आशुलिपिकों, वकीलों, लेखकों, नाटककारों, पादरियों, व्यापारियों, महाजनों और पत्राचार के लिए सभी व्यवसायियों के लिए की गयी थी।

इस प्रथम व्यवहार्य टाइपराइटर के आविष्कारक और निर्माता दोनों ने इस मशीन के जिस अतिशय महत्त्वपूर्ण पक्ष का पूर्वानुमान नहीं किया था, वह था विक्टोरिया युगीन परिवारों में गरीब और मध्यवर्गीय तबकों की लड़कियों और महिलाओं की उस निकृष्ट अवस्था से मुक्ति जिसमें वे पड़ी हुई थी। टाइपराइटर ने उन्हें अर्थकर कार्य का अवसर देकर उनको स्वतंत्रता प्रदान करने में उनके उद्धार के लिए किए गए आन्दोलनों, संगठनों और प्रकाशनों से कहीं अधिक बड़ा कार्य किया, जिनमें समाज में महिलाओं के लिए बराबरी के दर्जे की माग की जाती थी। यह भी एक रोचक तथ्य है कि सन् 1885 में काउण्ट लेव तोल्स्तोय पहले ऐसे यूरोपीय लेखक थे, जिन्होंने टाइपराइटर का उपयोग किया। उन्होंने अपनी लड़की से इसका अभ्यास कराया और उसे ही वे अपनी अनेक कृतियां तथा सारे पत्र बोलकर टाइप कराते थे। वह यूरोप की सर्वप्रथम टाइपिस्ट लड़की थी और इस रूप में वह महिलाओं की उस विशाल वाहिनी की अग्रचारिणी थी, जिसे टाइपराइटर के चाबी पटल ने स्वतन्त्र वृत्तियां प्रदान कीं।

1880 के आसपास बड़े नगरों के व्यवसाय केन्द्रों में शायद ही कोई लड़की नजर आ सकती थी। उन्हीं की तरह महिलाएं भी इन स्थानों पर कभी नहीं जाती थी। आज वाणिज्यिक और प्रशासनिक संस्थानों में इनकी संख्या पुरुषों से बहुत अधिक है। इस अति महत्त्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन को घटित करने में सबसे प्रधान तत्त्व टाइपराइटर ही था।

पर अपनी प्रणाली के विकास की दिशा में न तो उसने कोई खास काम किया, न वेबर ने ही और यह वैज्ञानिकों के एक छोटे से दायरे को छोड़ शेष जगत के लिए अज्ञात बनी रही। इससे 22 वर्ष बाद उसकी मृत्यु के कुछ ही उपरान्त जब विद्युत् तार यूरोप और अमरीका में स्थापित हो गया, तब गास ने सर डेविड ब्रेव्स्टर नामक अपने एक मित्र अंग्रेज वैज्ञानिक को, जो दूसरी चीजों के साथ ही बहुवर्णदर्शी (कैलेइडोस्कोप) का भी आविष्कर्ता था, पत्र लिखते हुए अपनी प्रणाली का विवरण दिया, जिसमे उसने लिखा कि उसके इस विचार का व्यावहारिक उपयोग उसके मस्तिष्क पर कभी बहुत हावी नही रहा। परन्तु वेबर इससे पुलकित था : "यदि सारी दुनिया को रेल लाइनों और टेलीग्राफ के तारों से भर दिया जाय तो कुछ तो परिवहन के साधन के रूप में और कुछ अंशो में बिजली की गति से विचारों और भावनाओं को प्रेषित करने की दृष्टि से इसका वही महत्त्व होगा जो मानव शरीर में तंत्रिकातंत्र का है।"

वहरहाल गास ने म्यूनिख के अपने एक भूतपूर्व छात्र कार्ल आगस्त को यह सलाह दी थी कि वह उसके टेलीग्राफ को दैनिक जीवन में उपयोग के लिए विकसित करे। स्टाइनील ने भारी चुम्बकीय शलाका के स्थान पर दो चुम्बकीय

स्टाईनील का तार : ग्राही, अक्षरों को चाबी ए से डी तक विद्युत चुम्बकीय। ई और एफ स्विवेल आर्मेचर; एच और जे लेखन-हस्त; के-सचल कागजी-टेप, एन और एम

पर अपनी प्रणाली के विकास की दिशा में न तो उसने कोई खास काम किया, न वेबर ने ही और यह वैज्ञानिकों के एक छोटे से दायरे को छोड़ शेष जगत के लिए अज्ञात बनी रही। इसके 22 वर्ष बाद उसकी मृत्यु के कुछ ही उपरान्त जब विद्युत तार यूरोप और अमरीका में स्थापित हो गया, तब गास ने सर डेविड ब्रेस्टर नामक अपने एक मित्र अंग्रेज वैज्ञानिक को, जो दूसरी चीजों के साथ ही बहुवर्णदर्शी (कैलिडोस्कोप) का भी आविष्कर्ता था, पत्र लिखते हुए अपनी प्रणाली का विवरण दिया, जिसमें उसने लिखा कि उसके इस विचार का व्यावहारिक उपयोग उसके मस्तिष्क पर कभी बहुत हावी नहीं रहा। परन्तु वेबर इससे पूर्वाकित था : "यदि सारी दुनिया को रेल लाइनों और टेलीग्राफ के तारों से भर दिया जाय तो कुछ तो परिवहन के साधन के रूप में और कुछ अंशों में बिजली की गति से विचारों और भावनाओं को प्रेषित करने की दृष्टि से इसका वही महत्त्व होगा जो मानव शरीर में तन्त्रिकातन्त्र का है।"

वहरहाल गॉस ने म्यूनिख के अपने एक भूतपूर्व छात्र कार्ल आगस्त को यह सलाह दी थी कि वह उसके टेलीग्राफ को दैनिक जीवन में उपयोग के लिए विकसित करे। स्टाइनील ने भारी चुम्बकीय शलाका के स्थान पर दो चुम्बकीय

स्टाईनील का तार : शाही, अक्षरों को चाबी ए से डी तक विद्युत चुम्बकीय। ई और एफ स्विवेल आर्मेचर; एच और जे लेखन-हस्त; के-संचल कागजी-टेप; एन और एस

जिस व्यक्ति ने टेलीग्राफ को त्रुटिहीन बनाया और इसे विश्वव्यापी उपयोग वस्तु बना दिया, वह कोई वैज्ञानिक नहीं, अपितु एक कलाकार था। सैम्युएल ज मोर्स, कनेक्टिकट के एक ग्रामीण पादरी का लड़का था। बचपन में वह कुछ ' लेकर अपने स्कूल के छात्रों के पोर्ट्रेट बनाया करता था, पर 30 की अवस्था ते तक वह एक चित्रकार के रूप में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर गया था। वाशिंगटन र न्यूयार्क की सार्वजनिक इमारतों में उसके बनाये कुछ इतिहास प्रसिद्ध क्तियों के चित्र, जिनमे राष्ट्रपति मनरो और लेफवेट के चित्र भी शामिल हैं ज भी बहुत महत्त्व के साथ टंगे हैं। पर अपनी सुन्दरी पत्नी के निधन के बाद उसे लगने लगा कि अब वह अपने इस कार्य को आगे जारी नही रख सकता और एक लम्बी यात्रा पर यूरोप चला गया। सन् 1832 में जब वह एक समुद्री जहाज पर सवार होकर अमरीका को वापस आया तब उसकी उम्र चालीस से ऊपर थी। समुद्र यात्रा ने उसके जीवन मे एक नया मोड ला दिया।

जहाज के यात्रियों में एक तरुण अमरीकी डॉक्टर था, जो अपने सहयात्रियों का मनोरंजन कुछ वैज्ञानिक खेल-तमाशे दिखाकर करता रहता था। उसने पेरिस में प्रोफेसर आपेयर को एक विद्युत् चुम्बक प्रदर्शित करते देखा था, और उसमें से वह एक अपने साथ लेता आया था, जिसमें वोल्टा चित्ती भी लगा हुआ था। उसने खेल में यह भी दिखाया कि यदि किसी लोहे के चारों ओर बिजली का तार लपेट कर उससे बिजली का करंट गुजारा जाए तो वह लोहा भी अस्थायी रूप से चुम्बक बन जाएगा। पर धारा के रुकने के साथ ही इसका चुम्बकत्व गायब हो जाएगा।

सैम्युएल मोर्स इस डॉक्टर के खेलो को बहुत गौर से देखा करता था। उसके मस्तिष्क में अकस्मात् एक विचार कौंध गया, जो उसके ही शब्दों मे इस प्रकार था: "यदि विद्युत्-चुम्बक से किसी विद्युत् परिपथ को बद करने के बाद उसके किसी हिस्से मे बिजली की विद्यमानता को दृश्य बनाया जा सकता है तो कोई वजह नही कि ज्ञान को भी बिजली के साथ ही प्रेषित न किया जा सके।" इस विचार ने ही इस कलाकार को आविष्कारक बना दिया।

इससे पहले विभिन्न आविष्कारकों ने बिजली से सकेत प्रेषित करने के जो विविध प्रयोग किए थे, उनकी जानकारी मोर्स को नही थी। उसके मन में केवल यह ख्याल आया कि अब अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क के लिए कोई आधुनिक यन्त्र होने का समय आ गया है। इंगलैंड की औद्योगिक क्रान्ति ने उस देश की सामाजिक और आर्थिक रूप से इतनी कायापलट कर दी थी कि उसे पहचानना कठिन था, और अमरीका भी उसी मार्ग पर चल पड़ा था। मार्ग स्थल-परिवहन से

घोड़े को, और समुद्र में पाल को पछाड़ रही थी; मन्द शारीरिक उत्पादन के स्थान बड़े पैमाने पर होने वाले उत्पादन लेते जा रहे थे। उद्योगों में अधिकाधिक धन लगाया जा रहा था, जिससे विभिन्न देशों और महाद्वीपों के बीच तेजी से माल पहुंचा कर लाभ कमाने की मांग बढ़ रही थी। हर ओर दैनिक जीवन की गति तीव्रतर होती जा रही थी। केवल समाचारों और संदेशों का प्रेषण ही हजार वर्ष पूर्व की भांति आज भी कछुए की चाल चल रहा था। शेप का दूर संदेश तो था, पर वह इतनी मंहगी प्रणाली थी कि इसका उपयोग करना केवल सरकारों के ही बूते की बात थी। एक औसत लम्बाई के तार का भी खर्च 10 पौंड के आस-पास आता था। इसके अतिरिक्त सेमाफोर कूट को कोई भी सीखकर इसे पढ़ सकता था।

समुद्र की पूरी यात्रा के दौरान मोर्स इसी विचार से जूझता रहा और अपनी स्केच बही के पन्नों को तकनीकी नक्शों से भरता रहा। न्यूयार्क लौटने पर उसने चित्र बनाने के लिए कोई नया ठेका नहीं लिया, बल्कि ड्राइंग की शिक्षा देते हुए किसी तरह अपनी रोटी चलाता रहा था और रात-दिन अपने आविष्कार के पीछे जुटा रहा। उसने एक पुराने ईजल को ही अपने तार का पाया और ढांचा बनाया था। इसके दूसरे हिस्सों में था एक थोड़ा-सा विद्युत्-चुम्बक, जिसे उसने स्वयं ही लपेट कर तैयार किया था, लकड़ी के एक पुराने टूटे खिलौने की घड़ी का एक पहिया, एक-सेल की एक गैल्वनी बैटरी और ऐसे ही कुछ जोड़-तोड़ के सामान।

कुछ हफ्तों के बाद ही अनुभवहीन मोर्स ने अपने यन्त्र को तैयार कर लिया, जो कि यह बहुत छोटे फासले तक ही काम करता था, और वह भी बहुत अच्छी तरह नहीं, फिर भी उसका यंत्र कारगर हो गया था। जब वह विद्युत्-चुम्बक और बैटरी के बीच के परिपथ को बंद कर देता था, तो एक छोटा-सा लोहे का टुकड़ा-आर्मेचर-चुम्बक से खिंच आता था। इससे एक पेंसिल जुड़ी हुई थी, नीचे कागज की एक पट्टी लगी थी, जो एक भार के सहारे दीवार घड़ी के नमूने पर बने दांतों से खिंचती रहती थी। पेंसिल से इस कागज पर तिरछी तस्वीरें बनती जाती थीं।

दो वर्ष तक मोर्स अपने [illegible] माडल से जूझता रहा। वह यह तो जानता था कि [illegible] अपने संकेतों को चालीस पचास फुट से [illegible] पा रहा था। करेंट ऐसी [illegible] कई सेल लगे हुए होने [illegible] क्या करे और अन्ततः

उसे एक पते की बात सूझी। इसे उसने 'रिले' की संज्ञा दी। यह एक ऐसी युक्ति थी, जो बाद में चलकर विद्युत् इंजीनियरी की सभी शाखाओं में बहुत महत्त्वपूर्ण बन गयी। उस जमाने में जब डाक के लिए घोडागाड़ियां चला करती थीं, रिले उस मुकाम को कहते थे, जहां थके हुए घोड़ों को अलग करके उनके स्थान पर नये घोड़े जोते जाते थे। मोर्स ने इस सिद्धांत को ही तकनीकी जामा पहना दिया। वेध-क्षेत्र की सीमा पर पहुंचने वाली कमजोर धारा को अब केवल एक विद्युत् चुम्बक को चालू कर देने से अधिक कुछ नहीं करना था। जैसे ही यह आर्मेचर को अपनी ओर आकर्षित करता था, एक दूसरी बैटरी से शक्ति पाकर एक नया परिपथ बंद हो जाता था। अब इस तरह इसमें प्रवेश करने वाला संकेत तार की एक और लम्बाई तक जारी रह सकता था—और फिर अगला अगले को जारी रख सकता था, क्योंकि इस बात की कोई वजह नहीं थी कि रिले की कोई शृंखला किसी समाचार को किसी भी दूरी तक न पहुंचाए।

इसी बीच मोर्स को न्यूयार्क नगर विश्वविद्यालय में आर्ट के प्रोफेसर की नौकरी मिल गयी। उसने अपने रिले के आविष्कार को कुछ छात्रों के सम्मुख प्रदर्शित किया। इनमें से एक छात्र ने, जिसका नाम अल्फ्रेड वेल था, और जो एक लोहे के कारखाने के मालिक का लड़का था, अपने यंत्र कौशल और अपने पिता द्वारा प्रदत्त कुछ हजार डालरों के व्यय से इस पद्धति को निर्दोष बनाने के लिए अपने को प्रस्तुत किया।

4 सितम्बर 1837 को मोर्स और वेल ने पूरे विश्वविद्यालय को इस नौजवान द्वारा तैयार किए गए नये माडल को देखने के लिए निमंत्रित किया; उसने इसमें अपना भी एक आविष्कार जोड़ दिया था। यह थी परिपथ को तेजी से और अधिक आसानी से खोलने और बंद करने के लिए एक चाबी। हम इसे 'मोर्स चाबी' कहते हैं। विश्वविद्यालय के हाल के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जो समाचार भेजा गया था, वह इस प्रकार था :

"सक्सेसफुल एक्सपेरिमेण्ट विद टेलीग्राफ सेप्टेम्बर 04/1837 (तार पर सफल प्रयोग सितम्बर 04/1837)"—इसे संयुक्त राज्य की नौसेना के कूट में प्रेषित किया गया था। पर मोर्स तथा वेल दोनों ने यह महसूस किया कि यदि मोर्स तार का प्रचार सामान्य जनता में करना है, तो आर्मेचर की गतिविधि के लिए अधिक उपयुक्त किसी अधिक सादे कूट का प्रयोग करना होगा।

मोर्स का विचार इस कूट को बिन्दुओं, छोटे संकेतों और डैशों तथा लम्बे डैशों से तैयार करने का था। उसने तथा वेल ने यह गिनती की कि एक समाचार पत्र में वर्णमाला के विविध अक्षरों की आवृत्ति क्या है और फिर उन्होंने इन

अन्ततः मार्च 1843 मे पुनः कार्यसूची मे 'मोर्स विधेयक' को भी रखा गया। यह एक नाटकीय सत्र था जो आधी रात के बाद कम चलता रहा था। मोर्स अपनी पराजय का सामना करने में असमर्थता अनुभव कर रहा था। अत. कांग्रेस की गैलरी, जहां से वह इस बहस को देख रहा था, छोड़कर निकल आया और आधी रात की गाड़ी पकड़ कर अपने नगर न्यूयार्क को लौट आया। अपने टिकट का पैसा चुकाने के बाद उसके जेब मे केवल 27½ सैंट बच रहे थे।

अगले दिन उसके एक मित्र ने धड़ाके के साथ उसके कमरे मे प्रवेश किया—"तुम्हारी जीत हुई। विधेयक 83 के मुकाबले 89 मतो से पारित होग या।"

वाशिंगटन बाल्टी मोर लाइन पर काम तत्काल आरम्भ हो गया। एक यात्री विक्रेता ने, जिसका नाम एजरा कोर्नेल था, तांबे के तार सप्लाई किए, जिनका मिलना कठिन था (उसने अपने जीवन का अन्त तार व्यापार के सम्राट के रूप मे किया और अपने खर्चे से उसने अपने नगर इथाका, न्यूयार्क मे कार्नेल विश्वविद्यालय की स्थापना की)। जनरल पोस्टमास्टर ने अपनी ओर से कठिनाइयां पैदा करने में कोई कसर नही छोड़ी; उसके गुण्डे रात को तार काट ले जाते और खम्भे गिरा देते। उन्होने काम करने वाले मजदूरो पर ढेले भी बरसाए। इस तोड़-फोड़ को रोकने के लिए मोर्स और वेल ने पहरेदार नियुक्त किए और इसके साक्ष्य राष्ट्रपति के समक्ष पेश किए, जिसने जनरल पोस्टमास्टर को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य किया।

इस पर पहला तार जो 24 मई 1844 को प्राप्त किया गया, वह था—"ईश्वर ने भी क्या करिश्मा किया है।" पर आम जनता ने इस आविष्कार की ओर विशेष ध्यान नही दिया। इगलैंड की भांति इसको संयोगवश ही लोकप्रियता प्राप्त हो गयी। उस समय डेमोक्रेटिक दल का अगले राष्ट्रपति पद के निर्वाचन के लिए अपना उम्मीदवार चुनने के लिए बाल्टीमोर मे अधिवेशन हो रहा था। अधिवेशन मे जान नाक्स पोक को, जो कि आगे चलकर अमरीका के ग्यारहवें राष्ट्रपति बने, इस अधिवेशन मे राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार और सिलास राइट को उपराष्ट्रपति पद का उम्मीदवार तय किया गया था। वेल ने इस समाचार को तार से वाशिंगटन भेज दिया, जहां राइट कांग्रेस में भाग ले रहे थे। मोर्स ने यह सूचना उसे पहुंचाई, पर राइट ने यह कहा कि वह चुनाव मे खड़े ही नहीं होंगे। मोर्स ने झट यह खबर बाल्टीमोर को भेज दी, जहां यह खबर पाकर किसी को इस पर यकीन ही नहीं हुआ। आखिर राइट का नामांकन भी तो अभी आध घण्टे ही पहले हुआ था। पर जब कई घण्टे बाद वाशिंगटन से विशेष सन्देशवाहक पहुंचा तो इस समाचार की पुष्टि हुई। अब तो मोर्स और उसका

चों के लिए तरह-तरह के नमूने तैयार करने और प्रयोग करने मे ही अपने
य का एक-एक क्षण बिताया करता था। श्रवण और भाषण की यांत्रिकी मे
चि विशेष रूप से जागृत हो गयी थी। उसने मनुष्य के कान की एक यथातथ्य
तिकृति तैयार की, क्योंकि वह यह जानता था कि उसके लक्ष्य—बिजली से
वनियो का संचारण—की दिशा मे पहला कदम इस अंग की कार्य प्रणाली के
ध्ययन से ही सम्भव है। उसने लकड़ी का जो कान बनाया था, उसमे मनुष्य के
ान की भांति ही एक घनास्थि, ऐरन और कर्ण पटल लगे हुए थे, पर तंत्रिकाओ
 स्थान पर उसने बिजली के तारो का उपयोग किया था। इस तरह के दो
ानो को एक तार से जोड़कर बीच मे बैटरी लगा देने के बाद एक कान मे जो
ुछ कहा जाता था, वह दूसरे कान मे मद्धिम सुनाई पड़ जाता था।

उसने महसूस किया कि ट्रांसमीटर (प्रेषी) और रिसीवर (ग्राही) को भिन्न
रीतियो से तैयार करना होगा। उसने कान की शक्ल को छोड़ दिया, एक पुराने
पीपे की टोंटी लेकर उसमे सूराख बनाया और उसके ऊपर एक जानवर का
मसाना चढ़ा दिया कि वह झिल्ली का काम कर सके। यह पहला ट्रांसमीटर
था। उसने वायलिन के भीतर एक सुई घसाई, जिसके चारो ओर पृथक्न्यस्त
(इनसुलेटिड) तार लपेट रखा था और इस तरह उसने ध्वनि के पुनरुत्पादन के
लिए एक यंत्र तैयार किया।

एक दिन वह अपना 'ट्रांसमीटर' लेकर कक्षा मे आया और फिर अपने शेड
मे चला गया, जहां उसने माइक्रोफोन मे कुछ धुनें बजायीं और गाना गाया। तार
के दूसरे सिरे पर बालकों को चिड़ियो के चहकने जैसी कुछ आवाजें सुनाई देती
रहीं।

अक्तूबर 1861 में उसने फ्रांकफुर्त के भौतिकी संगठन (फीजिक्स एसो-
सिएशन) में वैज्ञानिको की एक सभा मे एक भाषण दिया और इस यंत्र का
प्रदर्शन किया। उसका विषय था,'गाल्वानी धारा के माध्यम से दूर-ध्वनि'। उसने
कहा, "प्रत्येक ध्वनि और ध्वनि-समूह हमारे कान के पर्दे मे कम्पन पैदा करता
है, जिसे ग्राफ (चित्ररेख) द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। ये कम्पन ही हमारे
मस्तिष्क मे उन ध्वनियो की छाप डालते हैं, जिनमे वे उत्पन्न होते हैं। यदि हम
कृत्रिम रीति से इन कम्पनो को पुनरुत्पादित कर सकें तो इसके परिणामस्वरूप
हमें वे स्वाभाविक ध्वनियो की भांति सुनाई देंगे।"

राइज का प्रदर्शन बहुत सफल रहा, पर यदि उसे यह आशा हो कि इसने
सनसनी पैदा हो जाएगी तो उसे निराशा ही हाथ लगी होगी। इन महारथियो
को सिलाई की उस सुई से उठती हुई ध्वनियो को सुनकर हंसी आयी और

वे अपने घर चले गए। 'ऐनल्स आफ दि फिजिकल सोसायटी', में इस व्याख्यान की केवल एकमात्र रिपोर्ट प्रकाशित हुई; लेखक ने अपना विचार व्यक्त करते हुए लिखा था कि यह 'टेलीफोन' एक मजाक से अधिक कुछ नहीं था। पर कुछ उत्साही शौकीनों ने इस यन्त्र के सेट मांगे और उसने फ्रैंकफुर्त के एक मिस्त्री से ऐसे एक दर्जन सेट तैयार कराए।

भौतिकीविदों की इस गोष्ठी के दो वर्ष बाद जर्मनी की एक लोकप्रिय पत्रिका 'दी गार्तेनलावे' ने राइज के टेलीफोन का विवरण "होशियार बच्चों के लिए एक खिलौना" शीर्षक से प्रकाशित किया। इसके साथ इस विषय में भी हिदायतें दी गयी थीं कि इसे घर पर कैसे बनाया जा सकता है। इसके एक साल और बाद जब फिलिप राइज ने अपने यंत्र का प्रदर्शन गिसेन स्थित 'नेचुरल हिस्ट्री कांग्रेस' के समक्ष किया तो उसे थोड़ी और सफलता प्राप्त हुई। तरुण वैज्ञानिकों में से कुछ ने उसे बधाई दी और 'ऐनल्स' (सस्था का मुख-पत्र) की ओर से उसे टेलीफोन पर एक निबन्ध लिखने का आमंत्रण मिला। उसने चिढ़कर जवाब दिया 'अब समय हाथ से निकल गया' और साथ ही यह भी कहा, "यदि ऐनल्स में इसकी रिपोर्ट नहीं छपी तो भी यह दुनिया के लिए अज्ञात नहीं रहेगा।"

समय सचमुच हाथ से निकल चुका था। कुछ ही वर्ष बाद केवल 40 वर्ष की आयु में उसकी एक लम्बी बीमारी के बाद मृत्यु हो गयी; जिसमें उसे अपनी वाक्शक्ति से भी वंचित हो जाना पड़ा था—यह वही आवाज थी, जिसे वह अपने यंत्र के सहारे देश-देशान्तर तक पहुचाने के सपने देख रहा था, "मैंने दुनिया को एक महान् आविष्कार प्रदान किया है", अपनी मृत्यु से कुछ ही पूर्व उसने अपने एक मित्र से फुसफुसाकर कहा था, "पर अब इसे विकसित करने का दायित्व दूसरों पर है।"

राइज के टेलीफोन का एक सेट किसी तरह एडिनबर्ग विश्वविद्यालय के विज्ञान विभाग मे पहुंच गया था, जहा एक स्काट-अमरीकी नौजवान, जिसका जन्म एडिनबर्ग मे हुआ था, जो पला और बढ़ा मैसाच्यूसेट्स के बोस्टन नगर मे, सन् 1862-63 में अध्ययन कर रहा था। उसका नाम था अलेक्जेण्डर ग्राहम बेल। चूंकि वह मूक-बधिर व्यक्तियों को बोलना सिखाने के कार्य में लगना चाहता था। अतः उसने इस यंत्र में विशेष रूप से दिलचस्पी ली। वह लन्दन में ह्वीटस्टन से मिला, जिसने उसे बताया कि हेमोल्त्स नामक एक जर्मन वैज्ञानिक को विद्युत्-चुम्बकीय प्रणाली से स्वरित्र (ट्यूनिंग फोर्क्स) बनाने में सफलता मिली है। सर चार्ल्स और इस नौजवान के बीच 'संगीतात्मक तार प्रणाली' की

संभावनाओं के विषय में लम्बी बातें हुईं।

बोस्टन वापस आने के बाद बेल ने मूक-बधिरों के शिक्षक का काम संभाला, पर अपने खाली समय में वह 'संगीतात्मक तार प्रणाली' के विषय में प्रयोग करता रहा। उसकी सगाई अपनी ही एक छात्रा, एक रूपसी बधिर बालिका से पक्की हो गयी थी और उसके पिता उसके प्रयोगों के लिए आर्थिक सहायता दे रहे थे।

उसकी खोज से पता चला कि जब किसी स्थायी-चुम्बक के चारों ओर तार का कुंडलक लपेट कर इसके निकट लोहे के मध्यच्छद को कंपित कराया जाए तो, कुंडलक (क्वायल) में एक क्षीण सी करेंट पहुंच जाती है, जो स्पन्दनों के लय के अनुसार घटती बढ़ती रहती है। बेल को ऐसा लगा कि यही ध्वनियों के प्रेषण की कुंजी है। दो वर्ष तक वह टामस वैट्सन नामक एक मिस्त्री के साथ इस अछूते तकनीकी क्षेत्र के टेढ़े-मेढ़े मार्ग पर बढ़ता हुआ काम करता रहा। अनेक बार उसे विफलताओं और निराशाओं का सामना करना पड़ा और बाहरी दुनिया से कोई प्रोत्साहन तो मिल ही नहीं रहा था। उसने एक पत्र में लिखा, "केवल इस डर से कि मौखिक ध्वनियों को टेलीफोन से प्रेषित करने के ख्याल पर लोग केवल उपहास ही करेंगे, मैंने इस योजना के विषय में शायद ही कभी कोई बात की हो।" यहां तक कि उसके भावी श्वसुर भी इसी नतीजे पर पहुंच रहे थे कि यह सब एक 'हवाई स्वप्न' है।

जून 1875 को एक दिन जब बेल और वैट्सन अपने कारखाने के सटे कमरों में ट्रांसमीटर और रिसीवर की परीक्षा कर रहे थे, एकाएक एक मध्यच्छद अपने चुम्बक से जा सटा। जब वैट्सन इसे छुटाने का प्रयत्न कर रहे थे, बेल ने पाया कि उसके अपने यंत्र में भी कंपन हो रहा है। उसने अपना कान उसके पास सटा लिया और अब वैट्सन अपने कमरे में जितनी बार लोहे की डिस्क को अलग करने का प्रयत्न करता, बेल को एक धीमी सी आवाज सुनाई पड़ती।

बेल ने इस घटना का स्मरण करते हुए लिखा है, "उस दिन डिस्क को अलग करने और उसका प्रभाव देखने के अतिरिक्त और कोई काम नहीं हुआ। उसे लगा कि संयोग ने ही उसे सही मार्ग दिखा दिया है।" मध्यच्छद (डायफ्राम) चुम्बक के इतना निकट होना चाहिए कि यह लगभग उससे छूटा हुआ रहे, पर बिलकुल चिपका हुआ नहीं।

कुछ महीनों तक बेल और वैट्सन पहला व्यावहारिक टेलीफोन तैयार करने में लगे रहे, जिसमें एक बहुत कारगर पर्दा था, जो सभी प्रकार की ध्वनियों को ट्रांसमीटर में विद्युत् आवेगों में और रिसीवर में उन्हीं विद्युत् आवेगों को

वाद्य-यंत्र बजाता और अपनी सामर्थ्य भर राग अलापता रहा और सैलेम में बेल श्रोता मंडली को इसका श्रवण कराता रहा। सच कहें तो यह सर्वप्रथम प्रसारण (ब्राडकास्ट) था।

1877 के ग्रीष्म काल में बेल अपनी मधुरात्रि मनाने के लिए इंगलैंड गया और अपने यंत्र का एक सेट अपने साथ लेता गया—इस तरह यह एक पथ दो काज था। उसने वैज्ञानिकों के समक्ष भाषण दिए, तालाबों में डुबकियां लेने वाले गोताखोरों से टेलीफोन पर बात की और इस यंत्र को महारानी विक्टोरिया को दिखाया, जिन्होंने इसमें गहरी रुचि ली। उन्होंने वाइट द्वीप स्थित आसबोर्न हाउस से कोवे और साउथैम्पटन होते हुए लन्दन तक एक निजी लाइन लगवाई। बेल ने एक टेलीफोन हाउस आफ़ कामन्स की गैलरी में भी लगाया और पहली बार पार्लियामेण्ट की एक बहस का कुछ अंश वेस्टमिंस्टर में फ्लीट स्ट्रीट के एक आशुलिपिक को लिखवाया गया।

टेलीफोन को संचार के एक स्थायी साधन के रूप में व्यवहृत करने में सबसे तेजी जर्मनों ने दिखाई, पर उनका निशाना चूक गया। बर्लिन के अग्रणी पोस्टमास्टर जनरल यूनिवर्सल पोस्टल यूनियन (अन्तर्राष्ट्रीय डाक यूनियन) के संस्थापक तथा पोस्ट कार्ड के आविष्कर्ता हाइनरिख स्टेफान ने कुछ अफवाहें तो सुन रखी थीं कि बिजली के तारों के सहारे बातें करने में कतिपय प्रयत्न चल रहे हैं, पर उसे इसके तकनीकी कैफियतों का पता नहीं था। अक्तूबर, 1877 में जब साइंटिफिक अमेरिकन में टेलीफोन का विवरण अपने शीर्ष लेख में प्रकाशित किया तो स्टेफान ने तत्काल अमरीका से एक सेट मंगाने के लिए पत्र लिखा। पर वह अपने पत्र का जवाब पाए, इससे पहले ही लन्दन के टेलीग्राफ आफिस का प्रबंधक बर्लिन की यात्रा पर गया था और वह अपने साथ दो टेलीफोन भी ले गया था। स्टेफान ने उसी दिन इसे अपने मुख्यालय और पोतसडम में जो वहां से सोलह मील की दूरी पर था, इसे लगवा दिया। वर्नर साइमेन्स ने इसकी परीक्षा की और उसने दो बातें अनुभव कीं। पहली तो यह कि इस यंत्र में अभी कुछ विकास करने की संभावना है, और दूसरी यह कि अभी तक बेल ने जर्मनी का पेटेण्ट नहीं लिया है। कुछ ही हफ्तों के भीतर वह अपनी फैक्ट्री में बड़े पैमाने पर टेलीफोन बनाने लगा और उसने पहली स्थायी लाइन बर्लिन में नवम्बर 1877 के आरंभ में महा डाकघर तथा तारघर के बीच लगाई। इस नये आविष्कार पर बर्लिन के निवासी पागल हुए जा रहे थे और साइमेन्स जितने भी टेलीफोन बनाता जा रहा था, उन्हें वे अपने घरों में बच्चों के लिए खिलौने के तौर पर खरीदते जा रहे थे।

बोलने और सुनने का संयुक्त टेलीफोन (लगभग 1900)

पहला केन्द्रीय स्विच बोर्ड, जिसके बिना कोई स्थानीय या क्षेत्रीय तार नहीं बिछ सकता था, कनेक्टिकट स्थित न्यू हैवेन में 1878 में स्थापित हुआ। इसके एक साल बाद लन्दन, मान्चेस्टर, लिवर पुल में क्रमशः पचास, बत्ती और चालीस उपभोक्ताओं के साथ टेलीफोन केन्द्र स्थापित हुए। ये गैर सरकारी उपक्रम थे, और 1911 मे जाकर ही जनरलपोस्ट आफिस (महा डाक घर) ने ब्रिटेन की समूची टेलीफोन सेवा को अपने हाथ मे लिया।

आरंभ में, बेल का बोलने-का-चोंगा और सुनने-का-चोंगा दोनों एक जैसे ही यंत्र थे। दूसरे सिरे पर आवाज सुनाई पड़ सके, इसके लिए पूरे जोर से बोलना पड़ता था। आवाज की करेंट कमजोर थी, और यदि डेविड एडवर्ड ह्यूजेस ने ध्वनि विस्तारण का, यंत्र जिसे हम माइक कहते हैं, नही आविष्कृत किया होता तो लम्बी दूरी का संचार सभव नहीं हो पाता।

टाइप-मुद्रक तार के अपने निजी आविष्कार के लगभग पच्चीस वर्ष बाद ह्यू 1878 मे ह्यू जेस ने टेलीफोन ट्रासमीटर की ध्वनि की धाराओं को प्रवर्धित करने के लिए एक बहुत सीधी-सादी तरकीब निकाली। शुरू में इसमे कार्बन की दो सलाखें लगी हुई थीं, इन पर उसने एक तीसरी सलाख लगा दी। पेंदे की दोनों सलाखों को एक बैटरी के भीतर से एक तीसरी सलाख को गुजारकर जोड़ा गया था, अतः करेंट को उन दो बिन्दुओ को पार करना पड़ता था,

ऊपरी सलाख नीचे की सलाखों पर टिकी हुई थी। इससे बोलने वाले चोंगे से आने वाले ध्वनि संवेगों के अनुसार करेंटों का दोलन होता था। अन्ततः कार्बन की छड़ों का स्थान कार्बन कणिकाओं ने ले लिया। इन्हें मध्यच्छद के ठीक पीछे भर दिया गया था, और इसके कई साल बाद सुनने-के-चोंगे के साथ ध्वनि विस्तारक भी संलग्न कर दिया गया। आज हम टेलीफोन रिसीवर को जिस छोटे, हल्के-फुल्के रूप में देखते हैं, वह इसी रूप में है। पर प्रसारण (ब्राडकास्टिंग) दूरदर्शन (टेलीविजन) फिल्म उत्पादन, टेप और ग्रामोफोन के तवे के लिए माइक को अलग ही रखा गया।

तीस, चालीस या इससे भी अधिक वर्षों तक दुनिया में बड़े-बड़े नगरों को टेलीफोन संयोजन के लिए मानव आपरेटरों पर निर्भर रहना पड़ा। टाइप राइटर की ही भांति इस काम के लिए भी लड़कियां सबसे दक्ष सिद्ध हो रही थी और वे इसके सहारे सामाजिक स्वाधीनता प्राप्त करती जा रही थी। परन्तु टेलीविज़न का कार-चालन उपभोक्ताओं के लिए खीझ का विषय बना हुआ था। जब वह जल्दी में होता, आपरेटर प्रायः व्यस्त मिलता और उससे प्रतीक्षा करने को कहता। गलत संयोजन—गलती करना मनुष्य का स्वभाव ही है—प्राय होते रहते थे। अभी उपभोक्ता किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर बात कर ही रहे होते कि पाते लाइन कट गयी है, और इस बात की तो बराबर आशंका बनी रहती थी कि दो व्यक्तियों की गोपनीय बातचीत पर कोई तीसरा व्यक्ति, आपरेटर, चुपके से कान लगाए बैठा है।

एक निहायत गुस्सैल मिजाज, रुग्ण अमरीकी, आलमन बी॰ स्ट्रोजर जो बहुत पुराने उपभोक्ताओं में से एक था, आपरेटरों के साथ किसी न किसी बात पर उलझता ही रहता था और अन्ततः उसने अनुभव किया कि अब यह उसकी सहन सीमा से परे जा चुका है। उसने एक स्वचल टेलीफोन का आविष्कार करने का निश्चय किया। उसने ऐसा कर भी लिया और 1889 में उसने इसका पेटेंट भी ले लिया। उसने कैन्सास नगर के एक दफ्तर में एक ऐसे स्विच बोर्ड का प्रदर्शन किया जो बिना मानव आपरेटरों के चलता था। बेल टेलीफोन कम्पनी के डाइरेक्टरों में से एक इसकी कार्यप्रणाली को देख रहा था और उसने घोषित किया कि कर-चालित टेलीफोन केन्द्रों की पूरी धारणा ही एक भूल थी। स्वचल स्विच बोर्ड को त्रुटिहीन बनाने से पहले टेलीफोन का जाल बिछाना ही नहीं था। चूंकि यह भूल हो चुकी थी, अतः टेलीफोन कम्पनियां अपने टेलीफोन केन्द्रों को, जिन पर उन्होंने इतना धन व्यय किया था, उखाड़ने और स्वचल केन्द्रों की स्थापना करने के, जिसपर उससे भी अधिक खर्च आने वाला था, इच्छुक नहीं थी।

3
रेडियो

सन् 1860 में जब ड्यूक आफ डेवोनशायर ने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय को प्रायोगिक भौतिकी के लिए एक नया अनुसंधान संस्थान भेंट किया, जिसका नाम कैवेंडिश लेबोरेटरी पड़ा, तब जेम्स क्लर्क मैक्सवेल को एक मत से इसका प्रथम अध्यक्ष (हेड) चुना गया। पर जिन महान् वैज्ञानिकों ने उन्हें इस रूप में सम्मानित किया था, उनमें से भी बहुत कम ऐसे रहे होंगे, जो यह मानते रहे हों कि मैक्सवेल के विद्युत् और चुम्बक के सिद्धान्तों में कोई सार है, और ऐसा तो शायद ही कोई रहा हो उनके इस विश्वास का समर्थक रहा हो कि प्रकाश तरंगें वस्तुतः विद्युत् और चुम्बकीय शक्तियों की तरंगें हैं।

इस सिद्धान्त के सत्य को जब हेनरिख हर्त्स नामक एक जर्मन भौतिकीविद ने कार्ल्सरूए के पोलिटेक्निक की प्रयोगशाला में एक विलक्षण प्रयोग करके सिद्ध किया उससे दस साल पूर्व ही मैक्सवेल की मृत्यु हो चुकी थी। 1887 के नवम्बर मास में हर्त्स ने अपनी प्रयोगशाला के एक कोने में एक विद्युत् प्रेरण यंत्र लगाया और दूसरे कोने में एक दूसरा प्रेरक यंत्र जिसे उसने रिजोनेटर (अनुनादक) नाम दिया : यह एक तार का कुण्डल था जिसके दोनों सिरों पर धातु की दो गोलियां लगी हुई थीं, इन दोनों के बीच इंच के अंश मात्र का अन्तर था। प्रेरक (इंडक्टर) में आमतौर पर धातु के बड़े-बड़े फलक लगे हुए थे, जो इससे उत्पादित विद्युत-चुम्बकीय दोलनों की आवृत्ति को बढ़ा देते थे, इंडक्टर (प्रेरक) और अनुनादक इन दो यंत्रों के बीच में केवल हवा को छोड़ और कोई संयोजन नहीं था।

खिल्ली उड़ाते हुए इस तरुण इतालवी को 'बिना बन्दर का मदारी' कहा था, उनके मुंह पर ताले पड़ गए। थल गंवार से गंवार आदमी को भी यह साफ पता चल गया था कि सुदूर सागर में चलते हुए जहाजों के साथ भी संचार कायम किया जा सकता है।

एक ओर तो स्लावी और आर्को बर्लिन लौट आए और उन्होने बेतार के अपने प्रयोग आरंभ किए (जिनमें एरियल के तारो को गुब्बारे के सहारे एक हजार फुट की ऊंचाई तक ऊपर ले जाया गया) दूसरी ओर मार्कोनी अपने सकेतों के परिसर को आश्चर्यजनक गति से बढाने में सफल हुआ। 1898 के ग्रीष्म मे डबलिन के एक समाचापत्र ने मार्कोनी को जो एक कुशल नाविक भी था, अपने पाठकों के लिए किंग्स टाउन रिगेटा का समाचार भेजने के लिए नियोजित किया; इन नौकाओं के पीछे एक टग (कर्षनौका) में बेतार के साज-सामान लगाकर उसने इस समाचार को सीधे मोर्स चाबी मे उतार दिया। इसे तट के एक केन्द्र पर ग्रहण किया गया और वहा से समाचारपत्र के कार्यालय को इसे फोन पर पहुंचाया गया। बेतार से भेजा गया यह पहला संवाद था। आयरलंड के तट प्रदेश के दो अलग-थलग पड़े हुए प्रकाश स्तम्भो मे ट्रासमीटर लगाने का काम जिसे लायड द्वारा पूरा किया गया था, सभवतः इससे भी महत्त्वपूर्ण, गो कम प्रदर्शनीय घटना थी।

इसके कुछ ही समय बाद प्रिंस आफ वेल्स, बाद मे एडवर्ड सप्तम, वाइट द्वीप से दूर अपने पोत पर बीमार पड़ गए। रानी विक्टोरिया जो इस द्वीप में आस्बोर्न हाउस में ठहरी हुई थी, अपने पुत्र का कुशल-क्षेम जानने को व्यग्र थी। सोलह दिनो तक बिना किसी व्याघात के सपर्क निरन्तर बना रहा और दोनों ओर को 150 तार भेजे गए।

इसके कुछ ही महीने बाद मार्च 1899 मे बेतार सदेश के कारण ही बहुत से आदमियों की जानें बचाई जा सकी। एक गश्ती पोत जो ब्रिटेन के ऐसे बहुत थोड़े से पोतो मे से एक था, जिन्हे मार्कोनी के यंत्रो से सज्जित किया जा चुका था, गुडविन सेंड्स में फंसे हुए एक स्टीमर को खोजने मे सफल हुआ और उसने इसकी सूचना बेतार से साउथ फोरलैण्ड के प्रकाश स्तम्भ को दी। इसके बाद रक्षा नौकाएं भेजी गयीं और स्टीमर का प्रत्येक सवार बचा लिया गया।

इसका अगला चरण था, ब्रिटिश चैनेल के आरपार बेतार संचार का उद्घाटन। बाइस मील के इस फासले को बड़ी सुगमता से जोड़ दिया गया। अभी तीन ही साल पहले की तो बात थी कि मार्कोनी कुछ सौ गजो तक का परिसर कायम कर पाने पर खुशी से फूला नहीं समा रहा था। इतने ही थोड़े समय में उसने वेध

खिल्ली उड़ाते हुए इस तरुण इतालवी को 'बिना बन्दर का मदारी' कहा था, उनके मुंह पर ताले पड़ गए। अब गंवार से गंवार आदमी को भी यह साफ पता चल गया था कि सुदूर सागर में चलते हुए जहाजों के साथ भी सचार कायम किया जा सकता है।

एक ओर तो स्लाबी और आर्को बर्लिन लौट आए और उन्होंने बेतार के अपने प्रयोग आरंभ किए (जिनमें एरियल के तारों को गुब्बारे के सहारे एक हजार फुट की ऊंचाई तक ऊपर ले जाया गया) दूसरी ओर मार्कोनी अपने संकेतों के परिसर को आश्चर्यजनक गति से बढ़ाने में सफल हुआ। 1898 के ग्रीष्म में डबलिन के एक समाचापत्र ने मार्कोनी को जो एक कुशल नाविक भी था, अपने पाठकों के लिए किंग्स टाउन रिगेटा का समाचार भेजने के लिए नियोजित किया; इन नौकाओं के पीछे एक टग (कर्षनौका) में बेतार के साज-सामान लगाकर उसने इस समाचार को सीधे मोर्स चाबी में उतार दिया। इसे तट के एक केन्द्र पर ग्रहण किया गया और वहां से समाचारपत्र के कार्यालय को इसे फोन पर पहुंचाया गया। बेतार से भेजा गया यह पहला संवाद था। आयरलैंड के तट प्रदेश के दो अलग-थलग पड़े हुए प्रकाश स्तम्भों में ट्रांसमीटर लगाने का काम जिसे लायड द्वारा पूरा किया गया था, संभवतः इससे भी महत्त्वपूर्ण, गो कम प्रदर्शनीय घटना थी।

इसके कुछ ही समय बाद प्रिंस आफ वेल्स, बाद में एडवर्ड सप्तम, वाइट द्वीप से दूर अपने पोत पर बीमार पड़ गए। रानी विक्टोरिया जो इस द्वीप में आस्बोर्न हाउस में ठहरी हुई थी, अपने पुत्र का कुशल-क्षेम जानने को व्यग्र थीं। सोलह दिनों तक बिना किसी व्याघात के संपर्क निरन्तर बना रहा और दोनों ओर को 150 तार भेजे गए।

इसके कुछ ही महीने बाद मार्च 1899 में बेतार संदेश के कारण ही बहुत से आदमियों की जानें बचाई जा सकीं। एक गश्ती पोत जो ब्रिटेन के ऐसे बहुत थोड़े से पोतों में से एक था, जिन्हें मार्कोनी के यंत्रों से सज्जित किया जा चुका था, गुडविन सेंड्स में फंसे हुए एक स्टीमर को खोजने में सफल हुआ और उसने इसकी सूचना बेतार से साउथ फोरलैण्ड के प्रकाश स्तम्भ को दी। इसके बाद रक्षा नौकाएं भेजी गयीं और स्टीमर का प्रत्येक सवार बचा लिया गया।

इसका अगला चरण था, ब्रिटिश चैनेल के आरपार बेतार संचार का उद्घाटन। बाइस मील के इस फासले को बड़ी सुगमता से जोड़ दिया गया। अभी तीन ही साल पहले की तो बात थी कि मार्कोनी कुछ सौ गजों तक का परिसर कायम कर पाने पर खुशी से फूला नहीं समा रहा था। इतने ही थोड़े समय में उसने वेध

लन्दन पहुंचकर मार्कोनी ने जो पहला काम किया वह था अपने आविष्कार का पेटेंट लेना। तब उसने बड़े डाकघर के मुख्य इंजीनियर श्री (बाद में सर) विलियम प्रीस को इसका परिचय दिया तो उन्होंने इस यंत्र को अपने डाकघर की इमारत की छत पर और दूसरा यंत्र टेम्स के तट पर स्थित एक मकान में रखकर इसका प्रदर्शन करने का निमंत्रण दिया। मार्कोनी इस उलझन में था कि उसका यह अविकसित, स्वयं तैयार किया हुआ उपकरण इतनी अच्छी तरह काम कर भी सकेगा कि वह वैज्ञानिकों, डाकघर के इंजीनियरों, व्यवसायियों की उन सब संशयी को तुष्ट कर पाए जो उस छत पर इस परीक्षण का जायजा लेने को एकत्र हुए थे, पर परीक्षण सफल रहा। दूसरा प्रदर्शन स्पेन और नौसेना के अधिकारियों के आमंत्रण पर सैलिसबरी प्लेन में हुआ। मार्कोनी आठ मील की दूरी तक प्रेषण करने में सफल हुआ।

मई सन् 1897 में दुनिया का पहला बेतार संदेश कार्डिफ के निकट लेवरनॉक प्वाइंट में एरियल के 100 फुट का एक मस्तूल लगाकर यह पता लगाने के लिए किया गया कि ये संकेत पानी के ऊपर कैसे चलते हैं। पहली बार फ्लैट होम द्वीप से, जो ब्रिस्टल चैनेल के बीच एक द्वीप है, संकेत से प्रेषित किए गए, पर वे बिलकुल पहुंचे ही नहीं। इसके बाद संकेत आए, पर वे क्षीण और विकृत थे। मार्कोनी ने एरियल को बहुत लम्बा कर दिया और नये परीक्षण करने लगा।

प्रोफेसर आदोल्फ स्लाबी नाम के एक जर्मन विशेषज्ञ और काउन्ट आर्को नामक उसके एक सहायक को बर्लिन के प्राधिकारियों ने मार्कोनी के परीक्षणों का जायजा लेने को भेजा था। प्रोफेसर स्लाबी ने लिखा है, "रिसीवर को देखने के लिए हमारी आंखें और कान बिलकुल सधे हुए थे और तेज हवा के झोंकों से बचने के लिए हम पांच आदमी एक-दूसरे से सटे हुए काठ के एक डिब्बे मे किस तरह बैठे थे,इसे मैं कभी भूल नहीं सकता। एकाएकद्वीप की पताका ऊपर उठी, और इसके साथ ही वहां के चट्टानी पट से धीरे से और अदृश्य रूप में स्पष्ट मोर्स संकेतो का पहला खटका हुआ, जिसे धुंध में हम लोग बड़ी मुश्किल से देख पाए···यह स्वीकार किया गया कि इस पार जो संकेत आया है, वह मोर्स का अक्षर 'वी' है।"

मार्कोनी मुड़ा और डिब्बे मे बैठे लोगों की ओर देखकर मुस्कराया। उसके मुंह से निकला, "देखो, यह रहा!" उसे इस विषय मे कोई संदेह नहीं था कि उसकी पद्धति कारगर होगी।

थोड़े ही समय के भीतर — [illegible] की कहानी पूरे यूरोप में फैल गयी [illegible] के जिन लोगों ने दुढ़कर

खिल्ली उड़ाते हुए इस तरुण इतालवी को 'बिना बन्दर का मदारी' कहा था, उनके मुंह पर ताले पड़ गए। अब गंवार से गवार आदमी को भी यह साफ पता चल गया था कि सुदूर सागर में चलते हुए जहाजों के साथ भी संचार कायम किया जा सकता है।

एक ओर तो स्लाबी और आर्को बर्लिन लौट आए और उन्होंने बेतार के अपने प्रयोग आरंभ किए (जिनमें एरियल के तारों को गुब्बारे के सहारे एक हजार फुट की ऊंचाई तक ऊपर ले जाया गया) दूसरी ओर मार्कोनी अपने संकेतों के परिसर को आश्चर्यजनक गति से बढ़ाने में सफल हुआ। 1898 के ग्रीष्म में डबलिन के एक समाचारपत्र ने मार्कोनी को जो एक कुशल नाविक भी था, अपने पाठकों के लिए किंग्स टाउन रिगेटा का समाचार भेजने के लिए नियोजित किया; इन नौकाओं के पीछे एक टग (कर्षनौका) में बेतार के साज-सामान लगाकर उसने इस समाचार को सीधे मोर्स चाबी में उतार दिया। इसे तट के एक केन्द्र पर ग्रहण किया गया और वहां से समाचारपत्र के कार्यालय को इसे फोन पर पहुंचाया गया। बेतार से भेजा गया यह पहला संवाद था। आयरलैंड के तट प्रदेश के दो अलग-थलग पड़े हुए प्रकाश स्तम्भों में ट्रांसमीटर लगाने का काम जिसे लायड द्वारा पूरा किया गया था, संभवतः इससे भी महत्त्वपूर्ण, गो कम प्रदर्शनीय घटना थी।

इसके कुछ ही समय बाद प्रिंस आफ वेल्स, बाद में एडवर्ड सप्तम, वाइट द्वीप से दूर अपने पोत पर बीमार पड़ गए। रानी विक्टोरिया जो इस द्वीप में आस्बोर्न हाउस में ठहरी हुई थीं, अपने पुत्र का कुशल-क्षेम जानने को व्यग्र थीं। सोलह दिनों तक बिना किसी व्याघात के संपर्क निरन्तर बना रहा और दोनों ओर को 150 तार भेजे गए।

इसके कुछ ही महीने बाद मार्च 1899 में बेतार संदेश के कारण ही बहुत से आदमियों की जानें बचाई जा सकीं। एक गश्ती पोत जो ब्रिटेन के ऐसे बहुत थोड़े से पोतों में से एक था, जिन्हें मार्कोनी के यन्त्रों से सज्जित किया जा चुका था, गुडविन सेंड्स में फंसे हुए एक स्टीमर को खोजने में सफल हुआ और उसने इसकी सूचना बेतार से साउथ फोरलैण्ड के प्रकाश स्तम्भ को दी। इसके बाद रक्षा नौकाएं भेजी गयीं और स्टीमर का प्रत्येक सवार बचा लिया गया।

इसका अगला चरण था, ब्रिटिश चैनेल के आरपार बेतार संचार का उद्घाटन। बाइस मील के इस फासले को बड़ी सुगमता से जोड़ दिया गया। अभी तीन ही साल पहले की तो बात थी कि मार्कोनी कुछ सौ गजों तक का परिसर कायम कर पाने पर खुशी से फूला नहीं समा रहा था। इतने ही थोड़े समय में उसने वेध

क्षेत्र को निरन्तर प्रयोग और संशोधन करते हुए पचास गुना बढ़ा लिया था। पर अभी परीक्षा की सबसे बड़ी घड़ी तो आने वाली थी।

कुछ दर्जन मील स्थल या जल की दूरी तक के बेतार संदेश को [illegible] की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है—इतना तो सिद्ध हो ही चुका था। पर कुछ हजार मील की दूरी का क्या होगा? यह मात्र ट्रांसमीटर की [illegible] और रिसीवर की संवेदनशीलता को ही बढ़ाने का प्रश्न नहीं था। बुनियादी प्रश्न यह था: जैसा कि कुछ भौतिकीविदों का विश्वास था, विद्युत् चुम्बकीय तरंगें अंतरिक्ष में सीधी रेखा में चलती हैं अथवा वे धरती की वक्रता के समानान्तर चलती हैं? पहली स्थिति में बेतार से महासागरों के पार की विराट् दूरियों के परस्पर जोड़ने का ख्याल ही छोड़ देना होगा।

इसका पता लगाने के लिए प्रयोग के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। 12 दिसम्बर 1901 को मार्कोनी और उसके कुछ सहायक न्यूफाउंडलैंड में सेंट [illegible] के निकट एक लकड़ी के बने परित्यक्त कुटीर में बैठे हुए थे। तापमान जमाव बिंदु से काफी नीचे था। दीवारों की संधियों से तूफानी हवा सरसराती हुई भीतर आ रही थी और छतों की सुराखों से पानी चू रहा था। कुछ कोकोआ और एक बोतल व्हिस्की छोड़कर खाने-पीने को भी कुछ नहीं था। इस तूफान में बाहर 400 फुट की ऊंचाई पर एक पतंग फड़फड़ा रही थी जिससे एक एरियल [illegible] रहा था।

पूर्वी अमरीका की घड़ियों के अनुसार दोपहर के समय 2170 मील की दूरी पर कार्नवाल स्थित पोल्डु का ट्रांसमीटर मोर्स अक्षर 'स' का प्रेषण करने लगा था। पर वायुमंडल के शोर के अतिरिक्त हेडफोन में और कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा था। "मेरा अभी तक यही विचार था कि विद्युत् तरंगें धरती की वक्रता से अवरुद्ध नहीं होंगी, मार्कोनी ने बाद में कहा था, और इसलिए [illegible] किसी भी दूरी पर पहुंचाया जा सकता था।"

12.30 पर मार्कोनी के साथी ने, जो सुन रहा था, एकाएक [illegible] और [illegible] मुस्कुराहट से [illegible] उसके मुंह से निकला, "[illegible]" मार्कोनी ने हेडफोन लगा लिया और अपने कानों पर [illegible] [illegible] था। [illegible] के बाद [illegible] [illegible] महासागर को पार कर लिया था।

[illegible]

शिकार था। दूसरों ने उसे धोखेबाज कहा। अमरीका की एक तार कम्पनी ने उसके खिलाफ मुकदमा दायर करने की धमकी दी कि उसने न्यूफाउंडलैंड में उसके तार-एकस्व को भंग किया है। कुछ दूसरे व्यापारियों और राजनीतिज्ञों ने मार्कोनी पर यह आरोप लगाया कि वह बेतार के क्षेत्र में अपना निजी एकस्व कायम करने की चेष्टा में है, और जर्मन जहाजों को, जिन पर स्लाबी का ट्रांसमीटर लगा हुआ था, उन जहाजों से संचार करने से मना कर दिया गया जो मार्कोनी पद्धति से काम लेते थे। एक तरह से 'मार्कोनी काण्ड' ही शुरू हो गया जिसमें इस आविष्कारक को तरह-तरह से दूषित इरादों और हथकंडों का अपराधी घोषित किया जा रहा था।

इसके बावजूद एक पर एक घटना उसके आविष्कार के अपार महत्व को प्रमाणित करती जा रही थी। सन् 1909 में दो जहाजों में टक्कर हो गयी और यदि बेतार से रक्षा-पोत नहीं बुला लिए गए होते, तो सत्रह सौ यात्रियों को प्राणों से हाथ धोना पड़ता। इसके कुछ समय बाद ही एक हत्यारा इंगलैंड से भागने की कोशिश कर रहा था। यह था कुख्यात डा० क्रिपेन जिसे एक जहाज पर सवार होने के बाद पहचान लिया गया और जहाज के कप्तान ने बेतार से इसकी सूचना स्कॉटलैंड यार्ड को दे दी; कनाडा पहुंचने के साथ ही उसे गिरफ्तार कर लिया गया।

इस शताब्दी के आरम्भ में प्रथम बेतार अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन एस० ओ० एस० को आपदा का संकेत मानने पर सहमत हो गया। जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है, यह 'सेव अवर सोल्स' का संक्षेप नहीं है, बल्कि इसका चुनाव मोर्स संकेतों की सरलता के ख्याल से किया गया था—तीन नुक्ते, तीन डेश, तीन नुक्ते। इसने 'टाइटैनिक' की आपदा में बहुत नाटकीय भूमिका प्रस्तुत की थी। यह जहाज अप्रैल 1912 में अपनी पहली ही यात्रा में हिमशैल (आइसबर्ग) से टकरा गया था। इस जहाज के बहादुर बेतार चालक द्वारा अनवरत भेजे जाने वाले एस० ओ० एस० के संकेतों की कृपा से इस जहाज के सात सौ यात्री बचा लिए गए, जबकि स्वयं बेतार चालक जहाज के साथ ही समुद्र के गर्भ में चला गया।

अभी बेतार संदेश का जादू सिर पर ही था कि लोग सवाल करने लगे कि बेतार तरंगों से मात्र मोर्स संकेत ही नहीं, अपितु ध्वनि और संगीत और वह भी यथासंभव लोगों के अपने घरों में, प्रसारित करने में कितना समय और लगेगा। पर यहां बहुत भारी तकनीकी अड़चनें थीं।

आरंभिक बेतार संदेश केन्द्र बहुत उच्च आवृत्ति के अनिश्काम में लाते
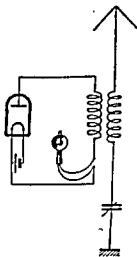
टेलीफोन प्रदर्शन के लिए फ्लेमिंग का तापायनिक वाल्व परिपथ

थे, जिनसे तरंगों का एक सिलसिला विद्युत् आर्क (चाप) उत्पन्न होता था, जो इनके ट्रांसमीटरों मे बीच-बीच में खड़खड़ाहट पैदा करता था। संकेत ग्रहण करने के लिए मार्कोनी ने ब्रांली के आदिम कोहेरर के स्थान पर आवक तरंगों के लिए चुम्बकीय परिचायक (मैग्नेटिक डिटेक्टर) लगाया था; इसमे संकेतों से एक रिले परिपथ बंद हो जाता था, जिससे ध्वनि इतनी प्रवधित हो जाती थी कि इसे हेडफोन में सुना जा सकता था या जिनके सहारे लेखन-तार (रजिस्टर टेलीग्राफ) का काम कर सकता था। यहां तक तो सब कुछ ठीक था, सीधे-सादे मोर्स संकेतों के लिए वह पर्याप्त था, पर यह मौखिक ध्वनियों और संगीत जैसी जटिल ध्वनियों के प्रेषण और ग्रहण में समर्थ नहीं था। रेडियो दूरभाष प्रणाली को अभी एक और उपस्कर के विकास तक प्रतीक्षा करनी थी।

एक-दूसरे के स्वतन्त्र भाव से तीन व्यक्ति इस विषय पर काम कर रहे थे—एक अंग्रेज, एक आस्ट्रियाई और एक अमरीकी। प्रोफेसर (बाद में सर) एम्ब्रोज फ्लेमिंग ने, जो संचागागार के निवासी थे, और जिन्होंने पोद्धू का केन्द्र स्थापित करने में मार्कोनी की सहायता की थी, 1904 में यह खोज की कि दो धातों

ऊपर : 1860 के दशक मे कैबल बिछाने वाले 'फराडे' नामक जहाज पर सवार।

नीचे : 1857 मे अटलांटिक मे ब्रिटेन के शाही पोत 'आगमेमन' पर कैबल लपेटा जा रहा है।
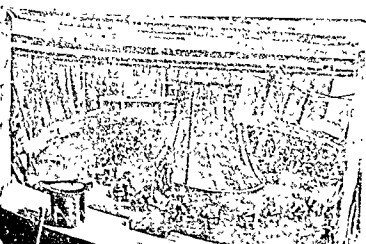
हेनरिख हर्त्स

प्रथम जनित्र ट्रांजिस्टर का आकार अंगूठे के नाखून की तुलना में।

नीचे बाएं : समन्वित परिपथ परिवर्धित रूप में बाएं छोर का 17 मि० मी० लम्बा।
नीचे दाएं : सिलिकन का प्लानार ट्रांजिस्टर। इनमें जो सबसे ऊपर है, उसकी धुरी का आकार 40 मि० मी० है।
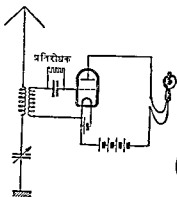
ली दि फारस्ट का प्रवर्धक वाल्व परिपथ

(इलेक्ट्रोडों) वाली एक निर्वात नली, जिसका एक अग्र तप्त हो और दूसरा ठंडा, वही प्रभाव रखती है, जो एकान्तर बेतार तरंगों का परिचायक (डिटेक्टर) इससे वे तप्त ऋणाग्र (कैथोड) से छूटते रहने वाले इलेक्ट्रोनों के साथ एक ही दिशा में प्रवाहित होने पाते हैं। इस परिष्कारक प्रभाव के कारण नली एक परिचायक का सा प्रभाव ग्रहण कर लेती है। उसने इसका नाम रखा तापायनिक वाल्व (थर्मिआनिक वाल्व)

वियना के रावर्ट फान लीबेन और अमरीका के ली दि फारस्ट इन दोनों ने ही यह अनुभव किया कि फ्लेमिंग के तापायनिक वाल्व में बहुत बड़ी संभावनाएं हैं और दो वर्ष बाद ही उन्होंने इसे इतना समुन्नत कर दिया कि अब यह तरंगों का परिचायक यंत्र ही नहीं, अपितु उनका प्रवर्धन करने वाला यंत्र भी बन गया। ये दोनों ही आरम्भ में तार से दूर-भाषण (टेलीफोनी) के लिए एक रिले तैयार करने की बात सोच रहे थे। इन्होंने एक तीसरा अग्र (इलेक्ट्रॉड) अर्थात् एक छिद्रित ग्रिड फ्लेमिंग के दोनों अग्रों के बीच में लगाया; इसमें संवाहक से आते हुए ध्वनि संवेग पहुंचते थे और ये अधिमिश्रित तरंगें कैथोड और एनोड के बीच

इलेक्ट्रोनों के प्रवाह के लिए अवरुद्ध रोध (ग्रिड) का काम करती थी और इसे बहुत सुन्दर ढंग से नियमित करती थी। इस रीति से माइक के क्षीण आवेगों का अपेक्षा के अनुसार, पूरी सुनिश्चितता के साथ प्रवर्धित किया जा सकता था पर इतना ही सब कुछ नहीं था, इसके कुछ वर्ष बाद अनेक अनुसंधानकर्ताओं ने यह भी पता लगा लिया कि तापायनिक वाल्व का प्रयोग उच्च आवृत्ति ट्रान्समीटर मे उच्च आवृत्ति अविरत-तरंग दोलन के जनन के लिए भी हो सकता है।

लीबेन की मृत्यु बहुत छोटी उम्र मे ही हो गयी, अतः रेडियो टेलीफोनी और प्रसारण के विकास में वह कोई भाग नहीं ले सका। पर ली फारस्ट ने अपनी प्रणाली का विस्तार प्रसार और ग्रहण दोनों ही उद्देश्यों के लिए किया। उसका 'आडियन' वाल्व उस विद्या के प्रवेश द्वार पर स्थित है जिसे हम 'इलेक्ट्रानिकी' कहते हैं।

तो यहा था वह यंत्र जिससे अधिमिश्रित माइक्रोफोन तरंगों का प्रेषण सम्भव हो सका। ट्रांसमीटर से एक अविरत 'वाहक तरंग' छोडी जाती है जिसमें इस पर अध्यारोपित माइक से सवेग आते रहते हैं; अध्यारोपण तापायनिक वाल्वों से किया जाता है। रिसीवर मे वही तरग छंट कर अलग हो जाती है और यह हेडफोन या लाउड स्पीकर मे पुनः ध्वनि मे बदल जाती है।

सन् 1907 मे ब्रिटिश नौसेना के प्रविधिज्ञों ने एक विश्व परिक्रमा के दौरान एक पोत से दूसरे पोत को 'गाड सेव दि किंग' (ईश्वर सम्राट की रक्षा करे) का प्रसारण करते रहे। 1909 मे ली दि फारस्ट ने न्यूयार्क मेट्रोपोलिटन आपेरा में एक माइक्रोफोन लगाया और कारुजो की आवाज को उसकी प्रयोगशाला तक प्रेषित किया। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान मार्कोनी ने बेतार टेलीफोनी मे प्रयोग किए और समुद्र तट के एक केन्द्र और समुद्र मे तीस मील दूर के एक युद्धपोत के बीच सपर्क स्थापित करने मे सफल हुआ। सन् 1917 मे जर्मन प्रविधिज्ञ पश्चिमी मोर्चे के दो केन्द्रो के बीच वाणी और सगीत का प्रेषण करने मे सफल हुए।

1919 की शरद् ऋतु मे डॉ० हान्स ब्रेदोव नामक तेलेफुंकेन के निर्देशक ने बर्लिन मे प्रदर्शन के साथ व्याख्यान दिए; राजधानी के निकट कोनिग्सवुस्टे-राजेन के ट्रांसमीटर से वाणी और संगीत रिसीव किए गए। पर लाउडस्पीकर द्वारा इन ध्वनियों का पुनरुत्पादन बहुत विकृत था और जब डॉ० ब्रेदोव ने डाक मंत्री से कहा कि एक दिन वह अपनी मेज से बिना तार की सहायता के जर्मनी के प्रत्येक डाक कर्मचारी से बात कर सकेंगे तो मत्री महोदय ने उनकी पीठ थपथपाई मानों उनका दिमाग खराब हो और उन्हें दिलासा देना जरूरी हो। वहां उपस्थित एक ही पत्रकार ऐसा था, जिसने इस विषय पर बड़े उत्साहपूर्वक

लिखा, "यह जुलूस वर्न के कल्पनालोक जैसा ही दृश्य था—भावी राजनीतिक बेतार प्रेषण यंत्रों से व्याख्यान दे रहा है और पूरे जर्मनी में हजारों भिन्न-भिन्न हालों में बँटे हुए करोड़ों लोग उनका भाषण सुन रहे हैं।" उसने कल्पना भी नहीं की थी कि उसका यह अनुमान भी वास्तविकता से बहुत घटकर ही था। दो वर्ष बाद ब्रेदोव को जर्मन महा डाकघर में बेतार टेलीग्राफी और टेलीफोनी का राज्य सचिव नियुक्त किया गया।

मार्कोनी पेरिस शान्ति सम्मेलन में एक सदस्य के रूप में शरीक हुआ था पर वह वहां से छूटते ही अपने नये याट (पोत) 'इलेत्रा' पर पहुंच गया जिस पर उसने अपनी बेतार टेलीफोनी की प्रयोगशाला बना रखी थी। उसने लिस्बन के समुद्र तट पर एक केन्द्र स्थापित किया और 300 मील की दूरी पर बात करने में सफल हुआ। कुछ महीने बाद 2 नवम्बर 1920 को पिट्सबर्ग में दुनिया के सबसे पहले प्रसारण केन्द्र ने हार्डिंग के संयुक्तराज्य अमरीका के राष्ट्रपति पद पर चुने जाने के समाचार के प्रसारण से अपनी नियमित सेवा आरम्भ की।

प्रसारण में रुचि लेने वाला पहला यूरोपीय देश था इंगलैंड। जहां अमरीका में ट्रांसमीटर स्थापित करने और कुछ भी प्रसारित करने पर कोई पाबन्दी नहीं थी, वहां ब्रिटेन के कानून ने तकनीकी प्रगति में बहुत बाधा पहुंचाई। शौकिया लोग, जो कि बेतार अनुसंधान में (विशेषतः लघु तरंग संचार के क्षेत्र; में अग्रणी रहे थे, दस वाट से ऊपर ट्रांसमीटरों पर प्रतिबन्ध लगने के कारण बुरी तरह आहत थे। अधिकारियों को इस बात पर राजी करने में कई महीने लग गए कि सौ वाट तक के केन्द्र से कोई क्षति नहीं हो सकती और अन्ततः मार्कोनी कम्पनी को चेम्सफोर्ड के निकट राइटल में अपनी प्रयोगशाला लगाने की अनुमति मिली। इससे 1922 के फरवरी माह में सप्ताह में एक बार का एक कार्यक्रम आरम्भ किया। यह कार्यक्रम केवल आधे घंटे तक चलता था और इस थोड़े से समय का भी कुछ हिस्सा मोर्स संकेतन के लिए काम में लाया जाता था। प्रत्येक सात मिनट के बाद तीन मिनट का मध्यांतर होता था, जिस अवधि में केन्द्र को एक सरकारी ट्रांसमीटर के तार आवृत्ति पर लगा दिया जाता था। और कभी-कभी अधिकारीगण हठात् यह निर्णय कर लेते थे कि आगे कोई प्रसारण नहीं होगा। इस केन्द्र का मनोरंजन कार्यक्रम बहुत घटिया था; कोई भी कलाकार केवल कुछ मिनटों के कार्यक्रम के लिए एसेक्स के उस अंधकारपूर्ण इलाके में आने को तैयार नहीं होता था; केवल देम नेली मेबा ऐसी थी, जो यहां एक बार आयी थी।

मई 1922 में लन्दन में पहला केन्द्र स्थापित करने की अनुमति मिली जो

थी जो माइक्रोफोन का और जिसे 2 एल ओ कहा जाता था, पर स्टूडियो मार्कोनी हाउस की सबसे ऊपरी मंजिल में था। आरम्भ में इसे संगीत का प्रसारण करने की मनाही थी, पर जब इस बेतुकी पाबन्दी को हटा लिया गया, तब यह केन्द्र बहुत मशहूर हुआ और पूरे ब्रिटेन और फ्रांस से उत्साही श्रोताओं के पत्र आने लगे। एक नियमित, सुव्यवस्थित, तकनीकी दृष्टि से कुशल प्रसारण सेवा की मांग, जिसके ट्रांसमीटरों का जाल पूरे राष्ट्र में फैला हुआ हो, दिन प्रतिदिन जोर पकड़ती गयी और नवम्बर 1922 में बेतार के साज-सामान के आधे दर्जन निर्माताओं के साथ एक सार्वजनिक निकाय के रूप में ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कंपनी की स्थापना हुई। इसे एक अधिकार पत्र देते हुए ब्रिटेन में प्रसारण का एकल प्रदान किया गया। 14 नवम्बर को लंदन का स्टेशन चालू हुआ, जो दैनिक कार्यक्रम प्रसारित करता था; अगले ही दिन बर्मिंघम से और इसके कुछ ही समय बाद मान्चेस्टर से भी प्रसारण आरम्भ हो गया।

जनता में मनोरंजन और सूचना के इस नये साधन में राष्ट्रपति मसारिक ने अपनी गहरी दिलचस्पी प्रकट की और इसके बाद चेकोस्लोवाकिया, जो केवल चार वर्ष का नवजात राष्ट्र था, सबसे पहले नियमित लोकप्रिय कार्यक्रम का प्रसार करने लगा (मई 1923) जो इस दृष्टि से यूरोप महाद्वीप का सर्वप्रथम राष्ट्र था। अक्तूबर 1923 में जर्मनी ने इसका अनुगमन किया, यहां से प्रसारित होने वाला पहला कार्यक्रम था, एक सेलवादक और एक पियानोवादक का संगीत (जिसके दौरान एक परिशोधक रेक्टिफायर वाल्व जल गया) कार्यक्रम पोस्टदामर प्लात्स, बर्लिन की एक ग्रामोफोन कंपनी की काम चलाऊ स्टूडियो से प्रसारित किया गया था।

ये बहुत मामूली किस्म की शुरुआतें थीं। उत्साही श्रोताओं को अपने कानों पर तकलीफदेह चोंगे लगाकर क्रिस्टल परिचायकों के माध्यम से सुनना पड़ता था, जिसमें उन बारीक तारों को जो क्रिस्टल के एक संवेदनशील स्थल पर स्पर्श करते थे, बारबार समायोजित करते रहना पड़ता था। पर उन आरम्भिक दिनों में भी यह साफ जाहिर हो गया था कि तकनीकी कठिनाइयों को पार करने के बाद रेडियो, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कितनी विराट भूमिका प्रस्तुत करने जा रहा है। इस शताब्दी के तीसरे दशक के अन्त तक औसत मूल्य के निर्दोष लाउडस्पीकर रिसीवर जिनके साथ ध्वनि प्रवर्धक वाल्व भी लगे हुए थे, दुकानों पर आने लगे और इस नये उपकरण के अनगिनत सेट प्रसारण स्टूडियों में दिखाई देने लगे। उदाहरण के लिए कार्बन-ग्रैन्यूल वाला पुराना माइक 'रिबनी' माइक के सामने घुटने टेक गया। इसमें स्थायी चुम्बक के सिरों पर एल्यूमिनियम की

के बहुत हल्के रिबन लटकते रहते हैं ताकि यह ध्वनि तरंगों के साथ कम्पित होता रहे और चुम्बक में ध्वनि आवृत्ति की करेंट प्रेरित कर सके, रिबन लाउड-स्पीकर मे इसके विपरीत प्रक्रिया चलती है।

आरम्भ में प्रसारण केवल मध्यम (100-550 मीटर) और दीर्घ तरंग (1,000-2000 मीटर) बैंडों पर चलता था, पर बेतार प्रविधिज्ञों का सामान्य रुझान अधिक लघु तरंगों का उपयोग करने की ओर रहा है, क्योकि तरग जितनी ही दीर्घ होगी, तरंग बैंड में उसके लिए उतनी ही अधिक जगह की जरूरत पड़ेगी। और चूंकि रेडियो केन्द्रों की संख्या बहुत बढ गयी थी, अतः ये एक दूसरे को बाधा भी पहुचाने लगे थे, जो कि अन्तर्राष्ट्रीय करार के अनुसार कोई भी केन्द्र दूसरे के मीटर पर कार्यक्रम प्रसारित नही कर सकता था। लघु तरग के क्षेत्र मे (16-75 मीटर) फिर भी बहुत गुजाइश है, जहां लम्बी दूरी का प्रसारण करना होता है (अन्य बातो के अतिरिक्त राजनीतिक प्रचार करने के लिए एक देश से दूसरे देश को) वहां इसका व्यापक उपयोग होता है, क्योकि लघु तरगों को तभी ग्रहण किया जा सकता है, जब कि ये पृथ्वी के चतुर्दिक व्याप्त ऊपरी पर्यावरण की निचली पर्त से परावर्तित होती है।

परन्तु अपने स्थानीय या क्षेत्रीय ट्रासमीटर के लिए उत्कृष्ट और बाधा-मुक्त ग्राहिता की समस्या का समाधान करती हैं, अति लघु तरगें। इस प्रणाली को हम अति उच्च आवृत्ति (वी. एच. एफ.) के रूप मे जानते हैं, क्योंकि तरग-दीर्घता जितनी ही कम होगी, ट्रासमीटर वाल्व द्वारा जनित विद्युत्-चुम्बकीय दोलनों की आवृत्ति उतनी ही अधिक होगी। इस प्रणाली को आरम्भ मे आवृत्ति अधिमिश्रण नाम दिया गया था और आज भी इसे इस नाम से पुकारना गलत नही होगा। यह माया है एडविन एच आर्मस्ट्राग नामक एक अमरीकी के अनुसंधान की कि पौचे दशक में इसका प्रयोग न केवल ध्वनि प्रसारण के क्षेत्र में अपितु लघु परिसर के संकेतों के उत्कृष्ट प्रेषण के लिए दूरदर्शन (टेलीविजन) मे भी होने लगा। सामान्यतः ध्वनि प्रसारण आयाम अधिमिश्रण (एम्प्लिट्यूड माड्यूलेशन) प्रणाली से किया जाता है: वाहक तरग का आयाम या पार्श्व प्रवाह एक माइक्रोफोन करेंट से अधिमिश्रित हो जाता है, पर आवृत्ति स्थिर बनी रहती है। आवृत्ति अधिमिश्रिना मे आयाम नही बदलता है, पर वाहक तरग की आवृत्ति माइक्रोफोन करेंट से अधिमिश्रित हो जाती है। यह प्रणाली 1 से 10 मीटर दीर्घता के बहुत छोटे तरग बैण्डों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है और इसके द्वारा बहुत सारे रेडियो केन्द्र एक दूसरे को बाधा दिए बिना काम कर सकते हैं। पर अति उच्च आवृत्ति प्रणाली का सबसे बड़ा लाभ यह है कि

यह धीमी से धीमी और ऊंची से ऊंची ध्वनियों और लयों के इस पूरे दायरे का प्रेषण कर सकता है, जो आयाम अधिमिश्रण से सम्भव हो सकता है।

आवृत्ति अधिमिश्रण के कारण बेतार प्रविधिज्ञ अपनी एक अन्य पुरानी महत्वाकांक्षा को चरितार्थ करने में समर्थ हुए हैं : यह है ध्वनि का स्टीरियोफोनिक—'त्रि-आयाम' पारेषण। इसके लिए न केवल स्टूडियो में एक निश्चित दूरी पर दो माइक्रोफोन रखने पड़ते हैं, अपितु दो ऐसी शाखाओं की भी आवश्यकता पड़ती है, जो अपने दोलनों का दो ट्रांसमीटरों तक वहन करती हैं, और साथ ही श्रोता के निवास में दो रिसीवरों (ग्राही) और दो लाउडस्पीकरों की आवश्यकता पड़ती है। कम से कम पहले प्रायोगिक प्रेषण में तो व्यवस्था इसी तरह की थी। पर 1960 में ब्रिटेन में एक प्रणाली आजमाई गयी जिसमें दोनों धाराओं को एक ही केन्द्र से एक ही ट्रांसमीटर तक जहां दो लाउडस्पीकर लगे होंगे, प्रेषण सम्भव हुआ। स्टीरियोफोनी (त्रिमितीय ध्वनि विद्या) पर हम ग्रामोफोन के तत्वों के सिलसिले में चर्चा करेंगे।

रेडियो की ग्राहिता (रिसेप्शन) के क्षेत्र में वाल्व रिसीवर के प्रारम्भ से छठे दशक तक कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुआ। पर तभी ट्रांजिस्टर के आविष्कार के साथ ही इलेक्ट्रॉनिक्स के पूरे क्षेत्र में एक बिलकुल नया विहान आरम्भ हो गया।
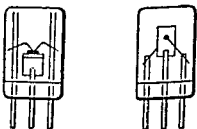
बाएं—अग्र-स्पर्श ट्रांजिस्टर, काला भाग मणिभ है। दाएं—संगम ट्रांजिस्टर, पतले तार मणिभ के दो बिन्दुओं पर पहुंचते हैं।

यद्यपि इसका उद्भव रेडियो के आरम्भिक दिनों के पतले तारों वाले रिसीवर (इसको 'कैट व्हिस्कर' अर्थात् 'बिल्ली की मूंछ' की संज्ञा दी गयी थी) में ढूंढा जा सकता है, पर यह द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान की अद्भुत उपलब्धि है। परिशोधक मणिभ (रेक्टिफायर क्रिस्टल) सामान्यतः लेड सल्फाइड का एक टुकड़ा

अर्थात् शीशाम अश्म (गैलिना) होता है, जो प्रत्यावर्ती विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों को एक सीधी धारा में मोड़कर वाचक रेडियो संकेतों को परिशोधित कर देता है, परिशोधित संकेत (आकर्णकों) को चालित करते थे। इस तरह के मणिभ को अर्ध सवाहक अर्ध पृथक्कारी कहा जाता है।

जब लाउडस्पीकर से सज्जित ध्वनिवर्धक रेडियो प्रयोग में आने लगा तब अर्ध सवाहकों के क्षेत्र में अनुसंधान लगभग खत्म हो गया। तापायनिक वाल्व रेडियो संकेतों के परिचयन और प्रवर्धन में बहुत सक्षम प्रतीत होता था। पर युद्ध ने इन मणिभों में पुन: उस समय रुचि जाग्रत कर दी जब वैज्ञानिक भंगुर वाल्वों का कोई विकल्प तलाशने लगे, क्योंकि इनके ऋणाग्रों को गर्म करने के लिए उच्च वोल्टता की करेंट अपेक्षित होती थी।

अमरीकी बेल टेलीफोन प्रयोगशाला के 1948 में अनुसंधानकर्ताओं के एक दल—जान बार्डीन, वाल्टर एच० ब्रैटेन और विलियम शॉकली ने पहली बार अपने ट्रांजिस्टर का प्रदर्शन किया। यह तापायनिक वाल्व का काम करता है: यह इलेक्ट्रॉनों का नियंत्रण करता है। ट्रांजिस्टर का मुख्य हिस्सा जर्मेनियम या
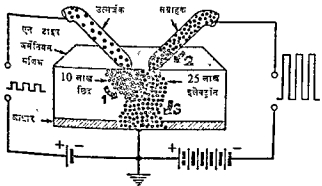
वर्धित बल सम्पर्क ट्रांजिस्टर छिद्र ऐसे अशुद्ध परमाणु हैं जिनमें इलेक्ट्रॉन नहीं होता और जो 1 की दिशा में प्रवाहित होते हुए दूसरे इलेक्ट्रॉनों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं जिसमें प्रवाह 2 और 3 की दिशा में होने लगता है।

[illegible] ता है। इसके मणिभ में कुछ 'अपद्रव्यता' लाने के बाद यह इलेक्ट्रॉनों के लिए एक नन्हा-सा घुड़दौड़ का मैदान बन जाता है। यदि आवक रेडियो संकेत मणिभ में दस लाख इलेक्ट्रॉन अन्तःक्षिप्त करें तो पांच करोड़ इलेक्ट्रॉन एक बन्द परिपथ में प्रवाहित होने लगेंगे। नतीजा यह होता है कि बहुत कम शक्ति से ही प्रवर्धन हो जाता है—वस्तुतः वाल्व के स्थान पर किसी लाउडस्पीकर रेडियो में यदि ट्रांजिस्टर लगे हों तो एक टार्च की बैटरी से ही वह महीनों काम कर सकता है।

यह अनोखी छोटी-सी युगत, जो माचिस की एक तीली से भी छोटी और ज़रा-सी ही मोटी थी, पहली बार सुवाही (पोर्टेबल) रेडियो सेटों में प्रयुक्त हुई। अपने प्रकट लाभों के अतिरिक्त—कि यह इतना छोटा है, कि इसके लिए उच्च वोल्टता की आवश्यकता नहीं होती, कि यह 'ठंडा' ही काम करता है, कि यह टूट नहीं सकता और यह बहुत लम्बे समय तक चलता है, यह 'मुद्रित' परिपथों में लाजवाब ढंग से अन्तःप्रविष्ट हो सकता है, जो रिसीवरों के विनिर्माण में एक और महत्त्वपूर्ण विकास था। अब इसने सेटों पर हाथ से लिखने या पट्टी चढ़ाने के श्रम को भी व्यर्थ बना दिया। अनेक स्वचल प्रक्रियाओं के क्रम में रिसीवर के प्लास्टिक चेसिस पर तांबे की पर्त चढ़ा दी जाती है, इसके बाद परिपथ के पैटर्न अम्ल रोधक स्याही से तांबे की पन्नी पर जमा दिए जाते हैं और अन्ततः एक-दूसरे रसायन से तांबे की वह पर्त जो स्याही से सुरक्षित नहीं है, धोकर अलग कर दी जाती है। अब परिपथ तांबे के अक्षरों में 'मुद्रित' हो जाता है। इस प्रविधि से ट्रांजिस्टर जैसे छोटे हिस्से को जिन्हें सिर्फ फंसा भर दिया जाता है, जोड़ना आसान हो गया।

रेडियो सेटों में ट्रांजिस्टर का प्रयोग तो महज एक शुरुआत थी; जल्द ही श्रव्य साधनों से लेकर गिटार तक, अंतरिक्ष राकेटों से लेकर इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटरों तक के इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियरी के बहुत से उत्पादनों में यह तापायनिक वाल्वों का स्थान लेने लगा। हमने यह उल्लेख किया है (देखें भाग-1) कि सौर तथा परमाणु ऊर्जा को भी अर्ध संवाहकों के प्रयोग से सीधे बिजली में परिवर्तित किया जा सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक नियोजकों की दृष्टि में अभी ट्रांजिस्टर भी कुछ बड़े मालूम होते हैं; वे विश्वास करते हैं कि पूरे समेकित परिपथ एक डाक-टिकट से भी छोटे हो सकते हैं। इसे उन्होंने 'माइक्रोमिनिएचराइजेशन' अर्थात् अति सूक्ष्मीकरण की संज्ञा दे रखी है। यह या तो अर्ध-संवाहक पदार्थ से बना होगा ताकि मणिभ स्वयं ही ट्रांजिस्टर, प्रतिरोधकों और धारित्र (कैपेसिटरों) की शृंखला तैयार कर सके;

अथवा शीशा या मिट्टी की पपडी पर फिल्म जैसी तह से अति सूक्ष्म परिपथ जोड़े जा सकते हैं। जहां आकार को कम करना महत्त्वपूर्ण है—जैसे कम्प्यूटर में जिसमें बहुत अधिक परिपथों की आवश्यकता होती है—वहां के लिए यह प्रगति बहुत सार्थक है।

लघु तरंग रेडियो-टेलीफोन—मनोरंजनार्थ प्रसारण से भिन्न-ने अनेक क्षेत्रों में विजय पाई है। यह समुद्र में बेतार टेलीग्राफी से बहुत आगे बढ़ गया है। जहाज के तट तथा वायुयान के स्थल के संचार में तो यह अपरिहार्य है। यातायात नियंत्रक, पुलिस के सिपाही, पर्वत शिखरों और ध्रुवों के वीरानों के खोजयात्री, एम्बुलेंस तथा टैक्सी चालक, परमाणु शक्ति केन्द्रों और विशाल निर्माण परियोजनाओं में काम करने वाले, और सशस्त्र सेना की सभी शाखाएं (जहां वाकी-टाकी का प्रयोग सर्वप्रथम हुआ था) रेडियो-टेलीफोन का बहुत अधिक प्रयोग कर रहे हैं। कुछ क्षेत्रों में तो आप किसी साधारण टेलीफोन उपभोक्ता के साथ चलती गाड़ी से बात कर सकते हैं; अस्पतालों में डाक्टरों और बड़ी-बड़ी फैक्टरियों या आफिसों की इमारतों में कर्मचारियों के साथ एक छोटे-से 'व्यक्तिगत पुकार' सेट के सहारे स्विचबोर्ड के माध्यम से सम्बद्ध रखा जाता है और अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के संचालन में इसके सदस्य जेबी रिसीवरों के सहारे अनेक भाषाओं में से किसी एक के साथ ट्यून करके अपनी मनचाही भाषा में कार्यवाहियां सुन सकते हैं, जिनमें दुभाषिये अपने निजी माइक और ट्रांसमीटर के सहारे अनुवाद करते रहते हैं। ये विविध उपयोग ट्रांजिस्टर के कारण ही सम्भव हो सके हैं।

4

परिरक्षित ध्वनियां

टामस अल्वा एडिसन ने, जो 1876 में न्यू जर्सी के मेनलो पार्क चले गए थे, अपनी नयी प्रयोगशाला में जिन समस्याओं का हल ढूंढ़ना आरंभ किया, उनमें एक थी तार संकेतों के लिए एक रिकार्डिंग मशीन बनाना : यह एक मोम का सिलिंडर था, जिसमें एक सुई मोर्स कोड के बिन्दुओं और डैशों को छापती जाती थी। एक बार वह अपने एक सहायक से बात कर रहा था कि उसके होंठों से निकली आवाज से सुई हिल गयी और उसकी उंगली में चुभ गयी।

कोई साधारण व्यक्ति इस घटना की ओर कोई ध्यान नहीं देता, बल्कि अपनी उंगली के खून की बूंद को चाट कर फिर मशीन के साथ प्रयोग में जुट जाता। पर एडिसन—वह आदमी जिसने एक बार कहा था कि प्रतिभा 98 प्रतिशत श्रम है और 2 प्रतिशत प्रेरणा—ने अपना ध्यान तुरन्त इस तथ्य की ओर लगाया कि सुई चुभी क्यों। यदि मनुष्य की वाणी द्वारा प्रेरित कंपन इतना शक्तिशाली है कि इसे हिला सके तो किसी उपयुक्त तल पर ध्वनि रेखाएं अंकित करना और इस प्रक्रिया को उलट कर उस तल पर सुई चलाकर जिस पर इसने चिह्न अंकित किए हैं, इसे पुन: उत्पादित कर पाना संभव हो सकता है।

एडिसन के मस्तिष्क में एक मशीन का जो रूप उभरा, उसका उसने एक नक्शा बनाकर खाका तैयार किया और अपने मिस्त्रियों से इसे तुरन्त तैयार कराया। यह पीतल का एक सिलिंडर था जो एक आड़े स्पिंडल पर लगाया गया था जिसे घुमाने के लिए एक हैंडिल लगा हुआ था और एक तरह कान का छिद्र [illegible] और [illegible] पार्चमेंट का एक टुकड़ा, जो सिलिंडर के ऊपर एक [illegible] पर लगा हुआ था। यह सब एक ही दिन में बनाकर तैयार कर लिया गया। एडिसन ने मुलायम टीन की एक पतली [illegible] सिलिंडर के चारों ओर [illegible] फिर हैंडिल घुमाकर [illegible] उसके दिमाग में जो पहला [illegible] [illegible] । यह एक शिशु-गीत था, "मेरी हैड अ लिटिल लैंब, [illegible]

फिर उसने सुई को उस स्थान पर लगाया जहा से यह चली थी और हैंडिल को फिर घुमाया, और इससे धीमी, पर स्पष्ट आवाज आयी, "मेरी हैड ए—लैम्ब..."

एडिसन ने बाद मे स्वीकार किया, "मैं इतना कभी भौंचक्का नही हुआ था। मैं उन चीजो से बहुत डरता रहा हू, जो पहली ही बार कारगर हो जाती हैं।"

एडिसन ने इस बोलने वाली मशीन का नाम रखा फोनोग्राफ और इससे एक सनसनी-सी मच गयी। जो दर्शक इस मशीन को देखना और सुनना चाहते थे, उनकी प्रयोगशाला के चारो ओर भीड़ लगाए रहते थे। मेनलो पार्क को विशेष गाडिया चलाई गयी; एडिसन को वाशिंगटन आकर अपनी मशीन वरिष्ठ सरकारी कर्मचारियों के सम्मुख प्रदर्शित करने और राजनीतिज्ञो की आवाज़ रिकॉर्ड करने का निमंत्रण मिला। सारे अमरीका के लोग इस आविष्कारक को मेनलो पार्क का जादूगर कहने लगे थे। कुछ लोगो को अपने कानो पर विश्वास ही नही होता था और उन्हें शक होता था कि वे किसी मायावी ध्वनि से छले जा रहे हैं।

बहुत जल्द ही एडिसन ने यह महसूस किया कि उसने इस मशीन को जो किसी कदर त्रुटिहीन नहीं है, लोगो को दिखाकर बहुत बड़ी गलती की है। जिस वस्तु पर रेकार्डिंग की जा रही थी, वह थी टीन की पन्नी जिसे सम्भाल पाना बहुत कठिन था, रेकार्डिंग उत्कृष्ट कोटि की नहीं थी, और कुछ बार दुहराने के बाद ही आवाज इतनी धीमी हो जाती थी कि इसे सुना नहीं जा सकता। कुछ ही महीनो के भीतर ही फोनोग्राफ मे जनता की सारी दिलचस्पी खत्म हो गयी।

दस वर्ष बाद 1888 मे उसने इस काम को फिर हाथ मे लिया। उसने पांच दिन और पांच रात लगातार काम करते हुए इस मशीन को हर तरह से विकसित कर लिया। इस बार टीन की पन्नी के स्थान पर मोम का एक सिलिंडर लिया गया था और हैंडिल घड़ी के पहियो की जुगत पर तैयार किया गया था। इस नये रूप मे फोनोग्राफ तमाशेबाजी की जगहों पर बडा लोकप्रिय हुआ, जहां कि सिक्का डालने पर इसे चलाया जाता था। इससे एडिसन को खासी आमदनी हुई। आफिसों और अन्य स्थानो पर जहां ध्वनियों को बहुत तेज़ी से रेकार्ड किया जाता है और बिना किसी खास साज सम्भार के इसे पुनः बनाया जाता है, इसका प्रयोग एडिसन की मृत्यु के बहुत बाद टेप-रिकार्डर का समय आने पर आरम्भ हुआ।

दूसरे आविष्कारको ने उन्नीसवी शताब्दी के नवें दशक में ही ध्वनि रेकार्ड

करने की पद्धति विकसित करने का प्रयत्न किया। अलेक्जेंडर ग्राहम बेल ने चार्ल्स एस टेंटर नामक एक अंग्रेज की सहायता से अपनी 'ग्राफोफोन' मशीन तैयार की जिसमें गत्ते का सिलिंडर लगा था। इस पर मोम की पर्त चढ़ाई गयी थी और रेकार्ड करने के लिए एक नुकीला काँटा, जिसका अगला हिस्सा धारदार था लगा हुआ था, और ध्वनि का पुनरुत्पादन एक गोल नोक वाले काँटे के सहारे किया जाता था जो मोम को अधिक क्षति नहीं पहुँचाता था। एडिसन की मशीन की ही तरह ध्वनि के कम्पन मोम पर सर्पवत् कटे रहते थे, जिनसे नाली 'पहाड़ियों और घाटियों' के ध्वनिपथ बन जाते थे।

इस क्षेत्र में निर्णायक कदम एक जर्मन-अमरीकी आविष्कारक एमिल बर्लिनर ने 1897 में लिया जब उसने एडिसन के सिलिंडर के स्थान पर एक चपटा डिस्क (तवा) लगाया और 'पहाड़ियों और घाटियों' की अंकन प्रणाली के स्थान पर दोलित्र प्रणाली का उपयोग किया; बाद में उसने रेकार्डों की प्रतियाँ, उसी ढंग से जैसे फोटोग्राफ के चित्रों की प्रतियाँ तैयार की जाती हैं, तैयार करना आरम्भ किया। आवाज मोम के एक तवे पर रेकार्ड की जाती थी, जिससे धातु का 'ऋणात्मक' सपुटक तैयार किया जाता था और इससे एक लोचदार मालदी के प्रेस से इच्छानुसार प्रतियां निकाली जा सकती थीं। उसकी प्रक्रिया का अधिकांश आज भी तवे तैयार करने में प्रयोग में लाया जाता है—यों बर्लिनर के समय से लेकर अब तक रेकार्डिंग और ध्वनि के पुनरुत्पादन में अपार प्रगति हो चुकी है जिनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है शताब्दी के तीसरे दशक में माइक और ध्वनि-प्रवर्धक की सहायता से ध्वनि की विद्युत् रेकार्डिंग, जिसने मशीनी रेकार्डिंग को मात दे दी, जिसमें आवाजें एक मशीन के चोंगे में बोली या बजाई जाती थीं। कुछ दिन बाद मशीनी पुनरुत्पादन प्रणाली का स्थान विद्युत् पिक-अप प्रणाली ने ले लिया। तवे की रेकार्डिंग और पुनरुत्पादन में कुछ और विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद हुए। कोलाम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सिस्टम के डॉ० पीटर गोल्ड-मार्क 'लाग प्लेइंग' रेकार्ड में जो 1948 में बाजार में आया और जिसमें प्रति इंच 300 ध्वनिपथ हैं और बर्लिनर द्वारा प्रवर्तित डिस्क की तुलना में जो प्रति मिनट 78 चक्कर काटता था, यह प्रति मिनट सवा तैंतीस या पैंतालीस चक्कर ही काटता था जिससे एक पूरी की पूरी सिम्फनी एक ही तवे पर उतारी जा सकती थी; 'उच्च तद्रूपता' (हाई फिडेलिटी) रेकार्डिंग और पुनरुत्पादन, जिससे मात्र मनुष्य की आवाज और वाद्ययन्त्रों की ध्वनियों को ही नहीं, बल्कि समस्त ध्वनियों को समेटा जा सकता था (यह किसी बिलकुल नयी प्रणाली का नहीं अपितु उच्च कोटि के इलेक्ट्रॉनिक उपस्करों का मामला है)। और 'स्टिरियो'

(स्टीरियो) ध्वनि में हमारे दो कानों की तरह दो माइक्रोफोन और दो लाउड-स्पीकर लगे रहते हैं, जो एक ही ध्वनि को किंचित भिन्न समयों पर सुनते हैं, जिससे हमें स्थान और तीव्रता की प्रतीति होती है (इसमें एक ही तवे पर एक माइक्रोफोन और दूसरा लाउडस्पीकर के लिए, यानी दो ध्वनिपथ कटते हैं)।

बर्लिनर ने 1898 में जब ग्रामोफोन कम्पनी की स्थापना की तभी से इसका व्यापारिक नाम ग्रामोफोन पड़ गया है। ग्रामोफोन के सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। एडिसन के मोम के सिलिंडर की नकल नहीं की जा सकती थी, पर इसे एक चपटे तवे में बदल देने की बर्लिनर की सूझ के कारण अनेकानेक प्रतियां तैयार हो सकती हैं। इस तरह ग्रामोफोन एक व्यावहारिक यन्त्र बन गया और हमारी शताब्दी इस दृष्टि से सौभाग्यशाली है कि इसके महापुरुषों की आवाजें, इसके सर्वोत्कृष्ट कलाकारों की आवाजें हमारे लिए और हमारी अगली पीढ़ियों के लिए रेकार्ड की जा सकती हैं।

अगले अध्याय में हम फिल्म पर ध्वनि की रेकार्डिंग का वर्णन करेंगे, पर यहां हम रेकार्डिंग की एक नयी प्रविधि का विकासक्रम दिखाएंगे जो मनोरंजन और संचार की अनेक शाखाओं में बहुत महत्त्वपूर्ण बन गयी है। इसका प्रारम्भ 1899 से होता है, जब कोपेनहैगन में बेतार टेलीग्राफी के अग्रणी व्यक्तियों में से एक वाल्देमार पोल्सेन ने अपने 'टेलीग्राफोन' का आविष्कार किया। यह एक डिबिया थी, जिसमें स्टील के फीते या स्टील के तार, 'विद्युत्-चुम्बकीय' खम्भों में लिपटे रहते थे और जब यह चलता था, तो एक डिबिया का फीता या तार खुलता और दूसरे में लिपटता जाता था। (पोल्सन ने चुम्बकक्षमधूलि लिप्त कागज के टेप या ऐसी ही किसी दूसरी सामग्री का भी उल्लेख किया था)। ध्वनि-संवेग एक माइक्रोफोन में विद्युत् अधिमिश्रणों में परिवर्तित होकर विद्युत्-चुम्बक पर अभिक्रिया करते थे, और इससे उसका इस्पात चुम्बकित हो जाता था। इन अभिलिखित ध्वनियों को पुनः विद्युत्-चुम्बक से पीछे की ओर घुमाकर ध्वनि में बदला जा सकता था। इस समय यह उन ध्वनियों को ग्रहण करने और पुनः एक झिल्ली की तरह काम करते हुए इन्हें श्रव्य बनाने के लिए अन्तरित कर दिया जाता था। या पोल्सेन के अपने पेटेंट की कैफियतों या विवरण उसी के शब्दों में रखें तो :

"यह आविष्कार इस तथ्य पर आधारित है कि जब किसी चुम्बकक्षम धातु का किसी विद्युत् परिपथ में समाहित विद्युत्-चुम्बक से जो ध्वनि के कम्पनों के अनुसार बदलती रहने वाली विद्युत् करेंट को वहन करता है, अलग-अलग बिन्दुओं पर और अलग-अलग समयों पर स्पर्श कराया जाता है, तो इन हिस्सों

करने की पद्धति विकसित करने का प्रयत्न किया। अलेक्जेंडर ग्राहम बेल ने चार्ल्स एस. टेन्टर नामक एक अंग्रेज की सहायता से अपनी 'ग्राफोफोन' मशीन तैयार की, जिसमें दफ्ती का सिलिंडर लगा था। इस पर मोम की पर्त चढ़ाई गयी थी और रेकार्ड करने के लिए एक नुकीला कांटा, जिसका अगला हिस्सा चपटा था, लगा हुआ था, और ध्वनि का पुनरुत्पादन एक गोल नाक वाले कांटे के सहारे किया जाता था, जो मोम को अधिक क्षति नहीं पहुंचाता था। एडिसन की मशीन की ही तरह ध्वनि के कम्पन मोम पर लम्बवत् कटे रहते थे, जिनसे नन्हीं 'पहाड़ियों और घाटियों' के ध्वनिपथ बन जाते थे।

इस क्षेत्र में निर्णायक कदम एक जर्मन-अमरीकी आविष्कारक एमिल बर्लिनर ने 1887 में लिया जब उसने एडिसन के सिलिंडर के स्थान पर एक चपटा डिस्क (तवा) लगाया और 'पहाड़ियों और घाटियों' की अंकन प्रणाली के स्थान पर क्षैतिज प्रणाली का उपयोग किया; बाद में उसने रेकार्डों की प्रतियां, उसी रीति से जैसे फोटोग्राफ के चित्रों की प्रतियां तैयार की जाती हैं, तैयार करना आरम्भ किया। आवाज मोम के एक तवे पर रेकार्ड की जाती थी, जिससे धातु का 'ऋणात्मक' सांचा तैयार किया जाता था और इससे एक लोचदार सामग्री में प्रेस से इच्छानुसार प्रतियां निकाली जा सकती थीं। उसकी प्रक्रिया का अधिकांश आज भी तवे तैयार करने में प्रयोग में लाया जाता है—जो बर्लिनर के समय से लेकर अब तक रेकार्डिंग और ध्वनि के पुनरुत्पादन में अपार प्रगति हो चुकी है, जिनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण है शताब्दी के तीसरे दशक में माइक और ध्वनि-प्रवर्धक की सहायता से ध्वनि की विद्युत् रेकार्डिंग, जिसने मशीनी रेकार्डिंग को मात दे दी, जिसमें आवाजें एक मशीन के भोंपे में बोली या बजाई जाती थीं। कुछ दिन बाद मशीनी पुनरुत्पादन प्रणाली का स्थान विद्युत् पिक-अप प्रणाली ने ले लिया। तवे की रेकार्डिंग और पुनरुत्पादन में कुछ और विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद हुए। कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सिस्टम के डॉ० पीटर गोल्डमार्क 'लांग प्लेइंग' रेकार्ड में जो 1943 में बाजार में आया और जिसमें प्रति इंच 300 ध्वनिपथ हैं और बर्लिनर द्वारा प्रचलित डिस्क की तुलना में जो प्रति मिनट 78 चक्कर काटता था, यह प्रति मिनट साढ़े तैंतीस या पैंतालीस चक्कर ही काटता था जिससे एक पूरी की पूरी सिम्फनी एक ही तवे पर उतारी जा सकती [illegible] 'उच्चस्तरीय' (हाई फिडेलिटी) रेकार्डिंग और पुनरुत्पादन, जिससे [illegible] वादयन्त्रों की ध्वनियों को ही नहीं, बल्कि समस्त [illegible] (अब किसी बिल्कुल नयी प्रणाली का नहीं [illegible] उपकरणों का मामला है)। और 'स्टीरियोफोनी'

(स्टीरियो) ध्वनि मे हमारे दो कानों की तरह दो माइक्रोफोन और दो लाउडस्पीकर लगे रहते हैं, जो एक ही ध्वनि को किंचित भिन्न समयों पर सुनते हैं, जिससे हमें स्थान और तीव्रता की प्रतीति होती है (इसमे एक ही तवे पर एक माइक्रोफोन और दूसरा लाउडस्पीकर के लिए, यानी दो ध्वनिपथ कटते हैं)।

बर्लिनर ने 1898 में जब ग्रामोफोन कम्पनी की स्थापना की तभी से इसका व्यापारिक नाम ग्रामोफोन पड़ गया है। ग्रामोफोन के सिद्धान्तो मे कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। एडिसन के मोम के सिलिंडर की नकल नही की जा सकती थी, पर इसे एक चपटे तवे मे बदल देने की बर्लिनर की सूझ के कारण अनेकानेक प्रतिया तैयार हो सकती हैं। इस तरह ग्रामोफोन एक व्यावहारिक यन्त्र बन गया और हमारी शताब्दी इस दृष्टि से सौभाग्यशाली है कि इसके महापुरुषो की आवाजें, इसके सर्वोत्कृष्ट कलाकारों की आवाजें हमारे लिए और हमारी अगली पीढ़ियों के लिए रेकार्ड की जा सकती हैं।

अगले अध्याय में हम फिल्म पर ध्वनि की रेकार्डिंग का वर्णन करेंगे, पर यहां हम रेकार्डिंग की एक नयी प्रविधि का विकासक्रम दिखाएंगे जो मनोरंजन और संचार की अनेक शाखाओं में बहुत महत्त्वपूर्ण बन गयी है। इसका प्रारम्भ 1899 से होता है, जब कोपेनहैगन में बेतार टेलीग्राफी के अग्रणी व्यक्तियो मे से एक वाल्देमार पोलसेन ने अपने 'टेलीग्राफोन' का आविष्कार किया। यह एक डिबिया थी, जिसमे स्टील के फीते या स्टील के तार, 'विद्युत्-चुम्बकीय' खम्भों में लिपटे रहते थे और जब यह चलता था, तो एक डिबिया का फीता या तार खुलता और दूसरे में लिपटता जाता था। (पोलसन ने चुम्बकक्षमधूलि लिप्त कागज के टेप या ऐसी ही किसी दूसरी सामग्री का भी उल्लेख किया था)। ध्वनि-संवेग एक माइक्रोफोन में विद्युत् अधिमिश्रणों में परिवर्तित होकर विद्युत्-चुम्बक पर अभिक्रिया करते थे, और इससे उसका इस्पात चुम्बकित हो जाता था। इन अभिलिखित ध्वनियों को पुनः विद्युत्-चुम्बक से पीछे की ओर घुमाकर ध्वनि में बदला जा सकता था। इस समय यह उन ध्वनियों को ग्रहण करने और पुनः एक झिल्ली की तरह काम करते हुए इन्हें श्रव्य बनाने के लिए अन्तरित कर दिया जाता था। या पोलसेन के अपने पेटेंट की कैफियतों का विवरण उसी के शब्दो मे रखें तो :

"यह आविष्कार इस तथ्य पर आधारित है कि अब किसी चुम्बकक्षम धातु का किसी विद्युत् परिपथ में समाहित विद्युत्-चुम्बक से जो ध्वनि के कम्पनों के अनुसार बदलती रहने वाली विद्युत् करेंट को वहन करता है, अलग-अलग बिन्दुओं पर और अलग-अलग समयों पर स्पर्श कराया जाता है, तो इन हिस्सों

वी॰ सी (पोली वाइनिल क्लोराइड) की खोज। इससे कुछ पहले से ही यह ज्ञात किया गया था कि यह रेशम आवश्यक इस कोटिंग के लिए सर्वोत्तम आधार है। यह सस्ता तो होता है, पर उत्पादन के समय तान देकर इसे पर्याप्त मजबूत बनाया जा सकता है।

युद्ध के बाद ही ब्रिटेन, अमरीका और जर्मनी में छोटे, व्यवहार्य घरों और कार्यालयों में काम देने लायक सर्वप्रयोजन टेपरेकार्डर बनकर तैयार होने लगे। इन्हें चलाना भी आसान था। बड़े माडल जिनमें प्रति सेकंड 15 इंच टेप खिसकता है, केवल प्रसारण केन्द्रों, फिल्म, टेलीविजन के लिए और ग्रामोफोन स्टूडियो के लिए हैं। यहां यह बात सर्वोपरि महत्त्व की है कि टेप रेकार्डिंग को नये सिरे या दूसरे टेप पर सुनने का तनिक भी ह्रास हुए बिना उतारा जा सकता है और इतनी ही सुगमता से इन्हें फिल्मों की तरह काटकर संपादित भी किया जा सकता है। यदि तवे पर रेकार्डिंग करते समय कोई गड़बड़ी पैदा हो जाए तो पूरा तवा पुनः रेकार्ड करना होगा; टेप पर कार्यक्रम का कोई भी अंश — यहां तक कि एक अक्षर तक — काटकर अलग किया जा सकता है। जो दोषपूर्ण है उसे मिटाया और पुनः रेकार्ड किया जा सकता है। टेप पर पृष्ठभूमि का शोर और मिश्रण भी अपेक्षाकृत कम होता है और प्लास्टिक रीलों को तवों की तुलना में काफी लापरवाही से भी संभाला जाए तो भी उनको विशेष क्षति नहीं होती।

अनगिनत प्रयोजनों से इन मशीनों की जाने कितनी ही किस्में विकसित की गयी हैं, जिनमें स्टूडियो की रेकार्डिंग के लिए बड़ा 15 इंच कोन्सोल से लेकर जेबी—आकार के डिक्टेशन माडल तक आते हैं, जिनमें एक छोटी सी रील लगी रहती है जो 1⅞ इंच प्रति सेकंड की गति से सरकती है। अव्यावसायिक व्यक्तियों के लिए पौने चार का आकार पर्याप्त है; साढ़े सात इंच पर तो संगीत का रेकार्ड बहुत अच्छी तरह सुना जा सकता है। घर में मनोविनोद के उपकरण के रूप में इसके प्रयोग को छोड़ भी दें तो टेप रेकार्डर आज प्रसारण के सबसे महत्त्वपूर्ण यंत्रों में से एक बन गया है। अपने सुवाह्य, बैटरी चालित ट्रांजिस्टरीकृत रूप में यह संवाददाताओं के लिए अनिवार्य उपयोगी है। इससे अभिनेताओं, गायकों, सार्वजनिक व्याख्यानदाताओं के लिए अपनी आवाज स्वयं सुन पाना और अपने दोषों को दूर कर पाना संभव हो गया है। विदेशी भाषाओं की शिक्षा, अभिनय का प्रशिक्षण, संगीत का रसास्वादन, वाग्दोष चिकित्सा, सार्वजनिक भाषणों की पुनरावृत्तियां, महत्त्वपूर्ण व्यावसायिक वार्तालापों की अविकल रेकार्डिंग, और वायुयान की गतिविधियों के हर ब्यौरे का एक 'ब्लैक बाक्स' रेकार्डर

में संग्रह—इन सभी क्षेत्रों में टेप-रेकार्ड बिलकुल अपरिहार्य बन गया है। आगे चलकर हम देखेंगे कि टेलीविजन में यह बहुत विशिष्ट भूमिका प्रस्तुत करता है।

पर इस बहु प्रयोजनीय उपकरण के संभवतः इनसे भी महत्त्वपूर्ण उपयोग औद्योगिक स्वचालन में हो रहे हैं : इन उपयोगों पर भी हम आगे एक अध्याय में विचार करेंगे।

... प्रेरित होकर हमारे आदिम पूर्वजों ने उन गुफाओं की दीवारों पर, जिनमें वे रहते थे, पशुओ और अपने दैनिक उपयोग की वस्तुओ के चित्र बनाना और उन्हें रंगना आरंभ किया था ? क्या उनका विश्वास था कि अपने शत्रुओं या शिकार के पशुओ के चित्र बना लेने से उनके साथ युद्ध करते समय या उनका पीछा करते समय उनमे जादुई शक्ति आ जाएगी ? क्या इन गुहावासियों के बीच कुछ रेम्ब्रां और पिकासो विद्यमान थे, जो अपनी कला-प्रतिभा का प्रदर्शन करना चाहते थे ? क्या वे जिन दृश्यो को देखते या अनुभव करते थे, उन्हें चित्रों में अंकित करना चाहते थे ? या उन्होंने मात्र भावुकता मे ही इन्हें बनाया ?

हमें कुछ मालूम नही। हम केवल इतना ही जानते हैं कि चित्र खीचने, रंग भरने और मूर्तियां गढ़ने का आरंभ मानव सभ्यता में बहुत पहले ही हो गया था, पर बहुत लम्बे समय से यह भावना भी काम कर रही थी कि किसी न किसी तरह प्रकृति को स्वयं अपने को चित्रांकित करने को प्रेरित किया जाए। इस प्रकार की घटनाएं अनेक कथाओ मे वर्णित हैं। उदाहरण के लिए किवदंती बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है कि जब ईसा मसीह काल्वेरी की ओर जा रहे थे, उस समय संत वेरोनिका ने जिस रूमाल से उनका मुंह पोंछा था, उस पर ईसा मसीह का चित्र उतर आया था।

ऐसा लगता है कि अठारहवीं शताब्दी में एक धुंधला-सा खयाल पकने लगा था कि किसी रासायनिक पदार्थ पर धूप की क्रिया से इस तरह के चित्र उभारे जा सकते हैं। सन् 1760 में टाइफे दि ला रोश नामक एक फ्रांसीसी ने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें उसने सिलवर नाइट्रेट से आच्छादित किसी फलक पर प्रकाश के प्रभाव का उल्लेख किया था और इस संभावना की चर्चा की थी कि इस तरह स्थायी चित्र बनाए जा सकते हैं। स्वीडेन के एक रसायनी कार्ल विलेम शीले ने ... के प्रकाश से सिलवर साल्टों के विरंजीकरण का अध्ययन किया और प्रोफेसर

तो यह है इसका रहस्य। सिलवर आयोडायड की प्लेटें पारे की भाप की रासायनिक अभिक्रिया से डिवलप हो गयी हैं। दाग्युरे ने अपनी इस धारणा की परीक्षा की। उसने एक प्लेट को थोड़े समय तक उद्भासित करने को रोशनी में रखा और फिर इसे एक अंधेरे कमरे में एक गर्म पात्र में पारा रखकर उसके ऊपर प्लेट को रखा। चित्र इस तरह उभर आया जैसे जादू का असर हुआ हो। उसने सोडियम सल्फेट मे इसे धोकर पक्का कर दिया जिससे कि सिलवर हेलोइड्स घुल जाते हैं। अब उसके हाथों में पहला 'दाग्युरोटाइप' था।

दाग्युरे ने अपनी खोज का प्रदर्शन प्रसिद्ध भौतिकविद् व ज्योतिर्विद् फ्राकोइ आर्गो के समक्ष किया, जो अकादेमी आफ साइंस के सचिव थे। उन्होंने अगस्त 1839 में अकादेमी की एक बैठक बुलाई और इसमें उन्होंने इस आविष्कारक का तथा प्रकाश के द्वारा प्रकृत चित्रों का अक्स उतारने की उसकी पद्धति का परिचय स्वयं दिया। आर्गो ने यह भी घोषित किया कि यह आविष्कार गुप्त नहीं रखा जाएगा, अपितु फ्रांस सारे संसार को इसे उपहार रूप में देना है। पार्लियामेंट के एक अधिनियम द्वारा दाग्युरे और नाइस के पुत्र को राज्य की ओर से पेंशन प्रदान की गयी। इस विधेयक को प्रस्तुत करने वाले सदस्य ने घोषित किया था, "एक दिन ऐसा आएगा जब केवल धरती पर ही नहीं, बल्कि आकाश मे और समुद्र की गहराइयों में कहीं भी प्रकृति की प्रतिछवि उतार पाना सभव हो जाएगा।"

दाग्युरे की सफलता उसकी अपनी आशा को भी पार कर गयी। पेरिस के लोग तो इस घटना पर उसी तरह पागल हुए जा रहे थे जैसे वे तब हुए थे, जब उन्होंने पहली बार गुब्बारे को ऊपर चढ़ते देखा था। पर इस बार संभावना इस बात की थी कि वे स्वयं इस करिश्मे में भाग ले सकते हैं, क्योंकि दाग्युरोटाइप का इन्तजाम करने के लिए हर आदमी कुछ सिक्कों का जुगाड़ कर ही सकता था। यदि धातु की एक छोटी-सी पट्टी पर उनका हूबहू अक्स उभर आता है तो इसके लिए आध घंटे तक धूप में बैठे रहने का भी गम नहीं था। शौकीन लोगों में तो कैमरा, प्लेट और दूसरे साज-सामान को हासिल करने की होड़-सी लग गयी। यह सनक अमेरिका तक मे फैल गया। अप्रैल, 1840 मे बोस्टन के एक दन्त चिकित्सक ने पहली बार दाग्युरे कैमरा का प्रयोग किया। टेलीग्राफ के आविष्कारक सैम्युएल मोर्स ने दाग्युरे स्वय से ही पेरिस मे एक कैमरा खरीदा था और इसे न्यूयार्क नगर मे विश्वविद्यालय की छत पर लगाया था।

आविष्कारों के इतिहास मे हम प्राय: बड़े विलक्षण सयोगों को घटित होते पाते हैं और एक ऐसे ही सयोग से फोटोग्राफी की एक प्रणाली भी, जिसको दाग्युरे की प्रणाली का अतिक्रमण करना था, उसी वर्ष अर्थात् 1839 में ही खोज निकाली

तो यह है इसका रहस्य। सिलवर आयोडायड की प्लेटें पारे की भाप की रासायनिक अभिक्रिया से डिवलप हो गयी हैं। दाग्युरे ने अपनी इस धारणा की परीक्षा की। उसने एक प्लेट को थोड़े समय तक उद्भासित करने को रोशनी में रखा और फिर इसे एक अंधेरे कमरे में एक गर्म पात्र में पारा रखकर उसके ऊपर प्लेट को रखा। चित्र इस तरह उभर आया जैसे जादू का असर हुआ हो। उसने सोडियम सल्फेट में इसे धोकर पक्का कर दिया जिससे कि सिलवर हेलो-इड्स धुल जाते हैं। जब उसके हाथों में पहला 'दाग्युरोटाइप' था।

दाग्युरे ने अपनी खोज का प्रदर्शन प्रसिद्ध भौतिकविद् व ज्योतिर्विद् फ्राकोइ आर्गो के समक्ष किया, जो अकादेमी आफ साइंस के सचिव थे। उन्होंने अगस्त 1839 में अकादेमी की एक बैठक बुलाई और इसमें उन्होंने इस आविष्कारक का तथा प्रकाश के द्वारा प्रकृत चित्रों का अक्स उतारने की उसकी पद्धति का परिचय स्वयं दिया। आर्गो ने यह भी घोषित किया कि यह आविष्कार गुप्त नहीं रखा जाएगा, अपितु फ्रांस सारे संसार को इसे उपहार रूप में देता है। पार्लियामेंट के एक अधिनियम द्वारा दाग्युरे और नाइस के पुत्र को राज्य की ओर से पेंशन प्रदान की गयी। इस विधेयक को प्रस्तुत करने वाले सदस्य ने घोषित किया था, "एक दिन ऐसा आएगा जब केवल धरती पर ही नहीं, बल्कि आकाश में और समुद्र की गहराइयों में कहीं भी प्रकृति की प्रतिछवि उतार पाना संभव हो जाएगा।"

दाग्युरे की सफलता उसकी अपनी आशा को भी पार कर गयी। पेरिस के लोग तो इस घटना पर उसी तरह पागल हुए जा रहे थे जैसे वे तब हुए थे, जब उन्होंने पहली बार गुब्बारे को ऊपर चढ़ते देखा था। पर इस बार संभावना इस बात की थी कि वे स्वयं इस करिश्मे में भाग ले सकते हैं, क्योंकि दाग्युरोटाइप का इन्तजाम करने के लिए हर आदमी कुछ सिक्कों का जुगाड़ कर ही सकता था। यदि धातु की एक छोटी-सी पट्टी पर उनका हूबहू अक्स उभर आता है तो इसके लिए आध घंटे तक धूप में बैठे रहने का भी गम नहीं था। शौकीन लोगों में तो कैमरा, प्लेट और दूसरे साज-सामान को हासिल करने की होड़-सी लग गयी। यह लहर अमेरिका तक में फैल गया। अप्रैल, 1840 में बोस्टन के एक दन्त चिकित्सक ने पहली बार दाग्युरे कैमरा का प्रयोग किया। टेलीग्राफ के आविष्कारक सैम्युएल मोर्स ने दाग्युरे स्वयं से ही पेरिस में एक कैमरा खरीदा था और इसे न्यूयार्क नगर में विश्वविद्यालय की छत पर लगाया था।

आविष्कारों के इतिहास में हम प्रायः बड़े विलक्षण संपातों को घटित होते पाते हैं और एक ऐसे ही संपात से फोटोग्राफी की एक प्रणाली भी, जिसको दाग्युरे की प्रणाली का अतिक्रमण करना था, उसी वर्ष अर्थात् 1839 में ही खोज निकाली

उत्कृष्टता का रहस्य यही है। इंगलैंड में डेविड आक्टेवियस हिल और फ्रांस में ब्लाकुआ-एवरार्द, जिसने सन् 1851 मे लिली मे सर्वप्रथम कला प्रकाशगृह की स्थापना की—इस काल के दृश्य अभिलेख तो हैं ही, साथ ही उत्कृष्ट कलाकृतियां भी हैं।

पर लोगों और दृश्यखण्डों का फोटो लेने के अतिरिक्त इस नयी प्रविधि का उपयोग अन्य उद्देश्यों से भी होने लगा था। सन् 1846 मे ही एक अंग्रेज वैज्ञानिक ने कैलोटाइप पर चुम्बकत्व मापी (मैग्नेटोमीटर) तथा दूसरे यंत्रो के पाठ्यांकों को स्वचल रीति से अभिलिखित करने के लिए इसका उपयोग मौसम विज्ञान के क्षेत्र में किया। इसके दस वर्ष बाद फोटोग्राफी का प्रयोग ज्योतिविज्ञान तथा सूक्ष्मदर्शिकी के क्षेत्रो में भी होने लगा था। इसके साथ फ्रांस मे एक नया फैशन चित्रात्मक परिचय कार्डों का चल पड़ा। दिस्देरी नामक एक फ्रांसीसी फोटोग्राफर अनेक लैंसों वाले एक कैमरे का प्रयोग करके और एक ही ग्राही के एक ही निगेटिव पर एक दर्जन विभिन्न मुद्राओं को उतारता और पुन: उन्हें छोटे कार्डों पर अंकन करता था और इस तरह वह काफी बड़े पैमाने पर तस्वीरें उतारता था, जो एक दिन मे 1800 की संख्या तक पहुंच जाती थी। यह सनक इंगलैंड मे और बाद मे अमरीका मे भी फैली, जहां गृह-युद्ध के दौरान तो यह सबसे जोरोंपर थी।

ब्रन्सविक के फ्रीड्रिक वोइगलान्दर ने दाग्युरोटाइप्स के लिए दुनिया का सबसे पहला धातु का कैमरा सन् 1840 मे ही बना लिया था। इसके लेंस को बहुत वैज्ञानिक सूझ-बूझ से तैयार किया गया था और इसके प्रकाश की सवेदन 1:3·4 थी जिसके कारण उद्भासन का समय घटकर एक से दो मिनट तक रह गया था।

यद्यपि 'आटोटाइप' प्रक्रिया जिससे समाचारपत्रों मे फोटो उतारे जा सकते थे (जिसका आविष्कार माइजेनबाख और स्मादेल नामक दो जर्मनों ने 1881 में किया) अभी दूर की चीज थी, फिर भी फोटो सहित सवाद उन्नीसवीं शताब्दी के छठें और सातवें दशक में ही आने लगे थे। युद्ध के सर्वप्रथम चित्र क्रीमिया में रोजर फेंटन नामक एक अंग्रेज फोटोग्राफर ने तैयार किए थे और अमरीकी गृहयुद्ध के दौरान उत्तरी सेना के सप्लाई दस्ते के साथ एक पूरा अंधकक्ष संस्थापन ही एक गाड़ी मे लाद कर ले जाया गया था। ठीक इसी समय सबसे पहला 'फोटोयुक्त लेख' म्यूनिख में तैयार किया गया था, जिसमें बवेरिया नगर मे एक ऊंची पहाड़ी पर बनती देवाकार प्रतिमा के निर्माणकार्य के क्रमिक चरणों को दिखाया गया था।

1870-1 के दौरान युद्धकालीन आवश्यकता के कारण ही पेरिस मे फोटोग्राफी की एक नयी प्रविधि का जन्म हुआ। इसे एक ऐसी पद्धति से घटाकर बहुत छोटे

आकार का कर लिया जाता था और इन्हें गत्तों पर छापा जाता था। इन्हें घि आकाश नगर से बाहर अनाधिकृत काम में संदेशवाहक कबूतरों के जरिये भेज दिया जाता था।

उन्नीसवीं शताब्दी के आठवें दशक तक फोटोग्राफी एक जटिल और नाजुक धंधा था। यदि किसी परिवार का समूह-चित्र लेना होता था, तो फोटोग्राफर पहले अपने ग्राहकों को ऐसी कुर्सियों पर बैठा देता था, जिनमें पीछे सिर के लिए टेक लगा रहता था। ताकि वे इस दौरान बिल्कुल निश्चल बने रहें। फोटो खींच कर लेने के बाद उसे भाग कर अंधेरे कमरे में अपना प्लेट होल्डर (वह डिब्बा जिसके भीतर फलक रखा जाता है) लिए हुए ही झटपट पहुंच जाना पड़ता था, जहां वह शीशे के उस फलक पर कोलोडियन तथा प्रकाशग्राही क्षारों के एक घोल मिश्रण का लेप करके झटपट कैमरे के पास आकर प्लेट होल्डर को कैमरे में घुसा कर इसके स्लाइड को बाहर निकालकर प्रकाश में मिनट दो मिनट रखकर लेंस की टोपी को हटाकर फलक को उद्भासित करना होता था, जो कि इस समय भी गीला ही रहता था और इस बीच लोगों को एकदम निश्चल बैठे रहना पड़ता था। इसके बाद फोटोग्राफर को झपटकर फिर अंधकक्ष में जाकर इसकी तुरन्त धुलाई करनी होती थी।

अन्ततः 1871 में डॉ० आर० एल० मैडोक्स तथा सर जोजेफ विल्सन स्वान (जिसने आगे चलकर एडिसन से पहले ही एक उद्दीप्त लैम्प का आविष्कार किया था) नामक दो अंग्रेजों ने सूखे फोटो प्लेट तैयार किए, जिनमें जिलाटिन इमल्सन द्वारा संवेदनशील सिलवर ब्रोमाइड क्षार चिपके रहते थे। इसकी सिद्धि के बाद फोटोग्राफी की भावी प्रगति की बाधाएं समाप्त हो गयीं और ऐसे लोगों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी, जो शौकिया फोटोग्राफी करने लगे। सूखी प्लेटों का सबसे बड़ा लाभ यह था कि यदि बाहर कहीं चित्र लेना हो तो अपने साथ अब सचल अंधकक्ष ले जाने की कोई जरूरत नहीं रह गयी।

इसके कुछ वर्ष बाद 1884 में, एक अन्य बड़ी प्रगति ने फोटोग्राफी को और अधिक सुकर और सरल बना दिया। जार्ज ईस्टमैन नामक एक अमरीकी ने प्रकाश संवेदी इमल्सन के स्थान पर सेलुलाइड का प्रयोग करते हुए फोटोग्राफी की फिल्म का आविष्कार किया। यह सबसे पहली मानव निर्मित 'प्लास्टिक' सामग्री थी, जिसका आविष्कार बर्मिंघम के एक रसायनी अलेक्जेंडर पार्क्स ने 1856 में किया था। सन् 1891 में ईस्टमैन और उसके सहयोगी हैनिबाल गुडविन ने एक रोल फिल्म का प्रादुर्भाव किया, जिसे खुली रोशनी में कैमरा में भरा जा सकता था। एक सच्चे लोकप्रिय हॉबी कालक्षेपी के रूप में फोटोग्राफी की एक

शुरुआत थी।

इसके बाद अनेक विकास हुए। ईस्टमैन ने सबसे पहले एक छोटे आकार का शौकिया 'कोडक' बाक्स कैमरा बनाया, अधिक संवेदनशील लेंस और इमल्सन तथा इनके अधिक सम्यक विश्लेषण के कारण फिल्म और कैमरा का आकार बहुत अधिक घटा लिया गया (लाइका पहला ऐसा कैमरा था, जिसमे 35 मि० मीटर की फिल्म का प्रयोग हो रहा था और इसके इमल्सन इस शताब्दी के तीसरे दशक में बिक्री के लिए जारी किए गए थे जो स्वाभाविक रंगों के अधिक निर्दोष सादे प्रभाव दे रहे थे) नये शटरों के सहारे एक सेकण्ड के भी बहुत छोटे अंशों मे ही चित्र लिए जाने लगे। सस्ते एनग्रेवरों के कारण अव्यावसायी फोटोग्राफर को भी अपने चित्रों को घर पर ही कम्पोज करने का आधार मिला और प्रतिवर्ती कैमरों से एक पार्श्विक-फोकस-पर्दे पर वह उस दृश्य को पूरे आकार में देख
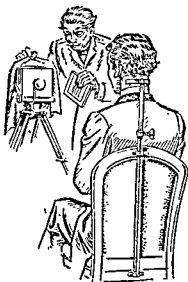
आरंभिक दिनों की फोटोग्राफी : उद्भासन के दौरान चित्र खिंचाने वाले के सिर को अचल रखने के लिए टेक लगाया गया है।

सकता था, जिसका वह चित्र ले रहा है। कुछ आधुनिक कैमरों में न केवल उद्भासन मापी (एक्सपोजर मीटर) लगे हुए हैं, बल्कि ये फोटोग्राफर की गति,

डायल (एनर्जी) और कोडक के समायोजन की छोटी-छोटी बातों से बंधा गये हैं। अब उसे केवल एक ही काम करने को रह जाता है और वह है ट्रिगर दबाना। यहां दिन की रोशनी जरूरी नहीं है, क्योंकि ट्रिगर के साथ जुड़े हुए फ्लैश बल्ब या इलेक्ट्रॉनिक यंत्रों से कृत्रिम प्रकाश प्राप्त हो जाता है। (जब जेकब रिस्मन स्वाम ने 1880 के आसपास अपने न्यूयॉर्क के स्टूडियो में पहली बार मार्ग-लाइट का प्रयोग किया था) अब वे फ्लैशलाइट पाउडर पुराने दिनों की चीज हो गए हैं, जिनसे आंखें चौंधिया जाती थीं, धुंआ निकलने लगता था और दुर्गंध फूटती थी।

परिष्कृति का उत्कृष्टतम उदाहरण है, इस शताब्दी के छठे दशक का एक उत्कल्पित अमरीकी 'पोलरायड लैंड कैमरा' जो एक मिनट की अवधि के दौरान ही स्वचल रीति से चित्र की धुलाई और छपाई भी कर डालता है। इस कैमरे का आविष्कार डॉ० एडविन लैंड ने किया था। इस कैमरे में अपेक्षित सूखे रसायन और कागज के दो रोल होते हैं, जिनमें एक निगेटिव के लिए और दूसरा पॉजिटिव के लिए होता है और ये दोनों बहुत ही कम स्थान घेरते हैं। निःसंदेह फोटोग्राफी के क्षेत्र में पूर्ण स्वचालन सभी व्यावसायिक फोटोग्राफरों की रुचि के अनुकूल नहीं हो सकता और बहुत से लोग जो मात्र एक शटरी नहीं, अपितु कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट चित्र खींचना चाहते हैं, वे इन कामों को खुद करने की पद्धति को अधिक पसन्द करेंगे ही।

नयी वैज्ञानिक और औद्योगिक अपेक्षाओं के कारण नये ढंग के कैमरों का नियोजन आवश्यक हो गया है, जैसे विशालकाय वेकर उपग्रह-अनुवर्ती कैमरा जिसमें बहुत पेचीदा किस्म के लेंस लगे हुए हैं। जिस समय पृथ्वी की कक्षा में घूमने वाला कोई उपग्रह आकाश में गतिमान होता है, यह कैमरा उसका अनुगमन करता है और इससे प्रतिशत से भी कम की अनुवर्तन भूल होती है। कैलीफोर्निया माउण्ट पालोमर की वेधशाला में लगा 48 इंच कास्मिक दूरदर्शी 'श्मिट' का प्रयोग नेशनल ज्योग्राफिकल सोसायटी के लिए एक नया मानचित्र बनाने के लिए फोटो लेने के लिए होता रहा है। इनके द्वारा एक अरब प्रकाश वर्ष की दूरी के तारों के चित्र लिए जा सके हैं।

इसके दूसरे छोर पर है डा० हैरोल्ड ई० एजर्टन नामक एक अमरीकी द्वारा ब्राजील और अफ्रीका के बीच अटलांटिक के सबसे गहरे भाग रोमांस ट्रेंच की 24,600 फुट की गहराई में चित्र लेने के लिए बनाया गया एक कैमरा। इस कैमरे से इलेक्ट्रॉनिक कौंधों से महासागर की तलहटी के अभेद्य अंधकार का भेदन उस समय तक करते हुए अनेक चित्र उभारे गए, जब तक कि पानी के अपार

दबाव के कारण इसकी डेढ़ इंच मोटी लेंस चिटख नहीं गयी। सौभाग्य से कैमरे के भीतर पानी का तनिक भी प्रवेश नहीं हुआ।

स्टीरियोस्कोप—या त्रिविमितिदर्शी फोटोग्राफी का आविष्कार बहुत पहले 1855 में ही एक अंग्रेज भौतिकविद सर चार्ल्स व्हीटस्टन ने किया था। इसमें हमारी दोनों आखों के प्रतिरूप, दो लेंस अलग-अलग चित्र लेते हैं और जब हम उन पर एक दृश्य-साधन से देखते तो ये दोनों स्वाभाविक घनत्व से युक्त एक बिम्ब में बदल जाते थे, पर त्रिविमितीय फोटोग्राफी की आधुनिक प्रणाली है होलोग्राफी।

संयुक्त राज्य अमरीका के ब्यूरो आफ स्टैंण्डर्स ने सूक्ष्मदर्शी प्रकाशीय प्रणाली का एक अनुसंधान कैमरा विकसित किया है, जो एक वर्ग सेंटीमीटर फिल्म पर पूरे बाइबिल का चित्र उतार सकता है। ऐसे कैमरे हैं जो 35 मि० मीटर फिल्म पर प्रति सेकण्ड 150 लाख चित्र वह भी रंगीन, की रफ्तार से खींच सकते हैं, या जो विस्फोटों से उत्पन्न पांच मील प्रति सेकण्ड चलने वाली आघात तरंगों के फोटो ले सकते हैं।

फोटोग्राफी की अनेक प्रक्रियाओं का प्रयोग मुद्रण में और दस्तावेजों, नक्शों आदि की नकलें उतारने आदि में हो रहा है। दस्तावेजों और नक्शों के क्षेत्र में कुछ सुगठित और तेजी से काम करने वाली मशीनें आफिस के लिए एक संवेदित कागज चाहे निगेटिव या पॉजिटिव पर फोटोस्टेट प्रतियां तैयार करने के लिए विकसित की गयी हैं, और ये वस्तुतः नये आविष्कार नहीं हैं ? पर इनमें से एक प्रक्रिया के क्रान्तिकारी होने का दावा किया जा सकता है। यह है एक्सरोग्राफी। इसका आविष्कार इस शताब्दी के चौथे दशक में चेस्टर कार्लसन नामक एक अमरीकी वैज्ञानिक ने किया था। यह वैज्ञानिक बड़ी गरीबी में पला-बढ़ा था। एडिसन तथा अन्य आविष्कारों की सफलताओं की कहानियों ने उसे बहुत अधिक प्रभावित किया था। एक्सरोग्राफी परम्परागत फोटोग्राफी की प्रक्रिया की तुलना में तीन दृष्टियों से अधिक लाभकारी है। इसमें निगेटिव प्लेटों का प्रयोग बार-बार किया जा सकता है, प्रिंट किसी भी तरह के कागज पर किया जा सकता है, और इसमें किसी तरल द्रव का प्रयोग नहीं होता। इसमें एक धातु की चादर पर एक पतला प्रकाश-संग्राही लेप लगी प्लेट का उपयोग किया जाता है। प्रकाश संवाहकता एक प्रकाश-विद्युत प्रभाव है, जिसमें सेलेनियम जैसे कुछ विशेष द्रव्यों की विद्युत संवाहकता इन पर पड़ने वाले प्रकाश की तीव्रता के साथ बढ़ा देती है। प्लेट का लेप अंधेरे में विद्युत-चार्ज होता है और जब इसे किसी बिम्ब के प्रति उद्भासित किया जाता है और फिर इस पर पाउडर बुरका जाता है, तब

पाउडर से बना स्थिर-विद्युत चित्र कागज के किसी भी भाग पर उतारा जा सकता है।

कार्लसन को पहले अपने आविष्कार में सफलता नहीं मिली। 1946 में न्यूयार्क की फोटोग्राफी की एक फर्म ने उसके पेटेंट प्राप्त किए और चार वर्ष बाद सबसे पहली एक्सरोग्राफ मशीन बाजार में आ गयी। इस पद्धति का प्रयोग उसके बाद से आफसेट मुद्रण में, ऐसी औद्योगिक फर्मों में जहां बड़े पैमाने पर विज्ञापन सामग्री की छपाई होती है, कटाई और जोड़ाई की एक्स-रे फोटोग्राफी, माइक्रोफिल्मों के परिवर्धन और अन्त यह भी किसी से कम महत्वपूर्ण नहीं है—इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटरों से प्राप्त होने वाले निष्कर्षों की छिप्रगति से छपाई में प्रयोग हो रहा है। एक्सरोग्राफिक प्रक्रिया से प्रति मिनट 3000 पंक्तियां, अर्थात् औसत आकार का पूरा का पूरा—छापी जा सकती है।

अब तक काम में लाई गयी फोटोग्राफी की प्रक्रियाओं में संभवतः सबसे कठिन वह थी, जिसका प्रयोग करते हुए रूसी अंतरिक्ष यान लूनिक तृतीय ने अक्तूबर 1959 में चन्द्रमा के उपर पार्श्व के चित्र लिए और पारेषित किए थे। इसकी असेम्बली में एक कैमरा लगा हुआ था, जिसमें दो लेंस थे, एक धुलाई और स्थिरीकरण का एकक था। एक नन्ही ऋणाग्र-किरण नली थी और (सूक्ष्मावलोकी) स्वचल नियन्त्रण, समय समायोजन के यन्त्र-तंत्र और एक बेतार चित्र-प्रेषी। चन्द्रमा के चित्र उस समय लिए गए थे, जब लूनिक तृतीय चन्द्रमा से 40,000 मील की दूरी पर था। लेंसों को दृश्य पर अनेक क्रमबद्ध स्वचालित क्रियाओं के द्वारा फोकस किया गया था। एक छोटे से इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर से निर्देशित जाइरोस्कोप ने इस यान की परिक्रमा बन्द कर दी। कैमरे को चन्द्रमा की ओर अभिमुख करने के लिए दो प्रकाश संवेदी सेल सूर्य और पृथ्वी की ओर को स्थिर हो गए। एक मास्टर सेल ने इस समय तक चन्द्रमा से प्रत्यावर्तित प्रकाश को बीम किया जिससे यान का मुंह उस समय तक घूमता रहा, जब तक कि चन्द्रमा से उसे सर्वाधिक प्रकाश मिलना आरंभ नहीं हो गया, और इसने कपाटों को चालित नहीं कर दिया। चालीस मिनट के बाद जब पूरी फिल्म शूट कर ली गयी, यान पुनः परिक्रमा करने लगा कि कहीं सूर्य का ताप इस यंत्र के उस भाग को पिघला न दे जो सूर्य की ओर है। स्वचल रीति से चित्रों की धुलाई करने और उन्हें स्थिर कर लेने के बाद ये चित्र परिषण एकक में पहुंच गए, जहां धरती के निर्देशन-केन्द्र से प्राप्त रेडियो आदेशों पर निगेटिव का सूक्ष्मावलोकन किया गया और उनका प्रकाश मूल्य विद्युत संकेतों में रूपान्तरित हो गया। इसके बाद इन्हें 2,90,000 मील की दूरी से धरती की ओर बीम किया गया और फोटो-

टेलीग्राफिक रिसीवरों में पुनः एकत्र किया गया।

रंगीन फोटोग्राफी के जनकों में से एक गेटे को माना जा सकता है। उसने अपने 'प्रकाश का सिद्धान्त' (1812) में सिलवर क्लोराइड पर रंगीन प्रकाश के प्रभाव का विवेचन किया था। इससे कुछ ही वर्ष पूर्व टॉमस यंग नामक एक अंग्रेज वैज्ञानिक ने अपने इस सिद्धान्त को प्रमाणित किया था कि तीन बुनियादी रंगों को अलग-अलग अनुपातों में मिलाकर सभी रंग पैदा किए जा सकते हैं। जर्मन भौतिकविद हर्मन फान हेलमोल्त्स ने उन्नीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में इन रंगों को नीला, हरा और लाल बताया था, और चार्ल्स क्रास नामक एक फ्रांसीसी ने 1869 में पहली बार यंग-हेमोल्त्स के सिद्धान्त पर रंगीन फोटो लिए। उसने एक ही पदार्थ के बुनियादी रंगों में तीन निगेटिव रंगीन फिल्टरों का प्रयोग करते हुए चित्र लिए और तीनों रंगीन पाजिटिव चित्रों को एक-दूसरे पर अध्यारोपित कर दिया।

चार्ल्स क्रास के एक सहयोगी, दूको दु आरों ने एक दूसरे तरीके का सुझाव रखा। यह पद्धति भी बुनियादी रंगों के तीन फिल्टरों के साथ काम करती है, पर निगेटिवों को पूरक रंगों में रंगा जाता है (हरा लाल का पूरक रंग है, बैंगनी पीले का इत्यादि)। फिर इन निगेटिवों को एक प्रिंट या पारदर्शी चित्र तैयार करने के काम लाया जाता है, फिर अध्यारोपण द्वारा रंगों को उलट दिया जाता है।

इस पद्धति को जिसे शेष पद्धति (सब्ट्रैक्टिव सिस्टम) का नाम दिया गया है, अनेक रीतियों और उद्देश्यों से परिपूर्णता तक पहुंचाया गया है। अव्यावसायिक फोटोग्राफी में विपर्यास फिल्म सबसे पहले अमरीका, जर्मनी, ब्रिटेन, इटली और बेल्जियम के बाजारों में इस शताब्दी के पांचवें दशक में पहुंच गयी थी। इसके द्वारा साधारण कैमरे से बिना फिल्टर के रंगीन फोटो लिए जा सकते थे। इनसे पाजिटिव ट्रान्सपेरेंसी ली जाती थी, जिसकी प्रतिलिपि उतारना या परिवर्धन करना कठिन होता था। इन फिल्मों में इमल्शन की तीन पर्तें होती हैं, जिनमें एक केवल नीले रंग के प्रति संवेदनग्राही होती है। दूसरी केवल हरे और तीसरी केवल लाल के प्रति। इसकी धुलाई केवल, सादी फिल्मों की धुलाई की तुलना में बहुत जटिल पड़ती है। इन तीनों पर्तों के लिए अलग डेवलपरों का प्रयोग होता है।

कुछ शेष प्रक्रियाओं (सब्ट्रैक्टिव प्रोसेसेज) में कागज पर छाप उभर आती है। निगेटिव फिल्म के तीन इमल्शनों के अनुरूप कागज पर भी तीन इमल्शन होते हैं। पर इनमें फोटो तैयार करना खर्चीला होता है और फिर मूल रंगों को

हमेशा यथातथ्य रूप में प्रस्तुत नहीं करते। फिर भी परिकथाओं और पुराणों की घटनाओं में, तथा कलाकृतियों के प्रदर्शन में टेक्नीकलर को बहुत अधिक लोकप्रिय कर लिया गया है। पर ये भी अपेक्षाकृत व्ययसाध्य हैं।

सिनेमा के लिए उपयुक्त रंग-प्रणाली के आविष्कारकों के लिए प्रोत्साहन इसलिए विशेष रूप से अधिक था, क्योंकि सिनेमा बड़ी तेजी से एक बड़ा उद्योग बनता गया। अनेक वर्षों के प्रयोगों के बाद सन् 1926 में डी० एफ० कामस्टाक, एच० टी० कैल्मस तथा डब्ल्यू० बी० वेस्कोट इन तीन वैज्ञानिकों ने रंग-प्रणाली में मैसाचुसेट्स इन्स्टीट्यूट आफ टेक्नालॉजी, बोस्टन में पहली परीक्षण फिल्म तैयार की। अगले चार वर्षों में उन्होंने इसको निर्दोष बनाया। सन् 1933 में वाल्ट डिज़्नी ने पहली टेक्नीकलर कार्टून फिल्म 'फ्लावर्स एण्ड ट्रीज़' को प्रस्तुत किया। यद्यपि यह किसी भी दृष्टि से सफल फिल्म नहीं थी, फिर भी बहुत जल्द ही अमरीका और ब्रिटेन में फिल्म कम्पनियों ने टेक्नीकलर को अपना लिया।

इस प्रणाली में एक विशेष कैमरे की जरूरत होती है। इसमें लेंस में प्रवेश करने वाली प्रकाश रश्मियां इस तरह विभाजित हो जाती हैं कि समकालिक रूप से तीन फिल्में उद्भासित होती हैं। इनमें से एक प्रकाश रश्मि के हरे तत्व को रेकार्ड करती है, दूसरी लाल को और तीसरी नीले को। इनमें से प्रत्येक की एक 'सम्पुटक' या जेलाटिन में रिलीफ फिल्म बनती है और उसे पूरक रंगों में रंगा जाता है। इन तीनों सम्पुटकों से एक चौथा 'प्रधान चित्र' काले और सफेद में बनता है। फिर क्रमशः चार प्रक्रियाओं में इन चारों फिल्मों को एक पर प्रिन्ट किया जाता है, जिसमें सभी रंग होते हैं।

जिस पहली 'मोनोपैक' प्रणाली में एक ही फिल्म की तीन वर्ण-संवेदी पर्तों को प्रयोग में लाया गया था, वह थी अमरीका की 'कोडाक्रोम'। इसको न्यूयार्क के लियो गोडोव्स्की तथा ल्योपोल्ड माने नामक संगीत के दो छात्रों ने प्रायमिक रूप में 1923 में ही विकसित किया था और यह अन्ततः 1935 में बाजार में आ गयी थी। फिर जर्मन अगफाकलर प्रक्रिया आयी, जिसे 1936 में पूरा कर लिया गया था। उस समय से अनेक मोनोपैक प्रक्रियाएं काम में आती रही हैं (पर टेक्नीकलर को पूरी तरह निष्कासित करने में उन्हें सफलता नहीं मिली है।) इनके लिए विशेष कैमरों की आवश्यकता नहीं होती। इनमें से अधिकांश में चार पर्तें होती हैं, जो नीले, हरे, लाल के प्रति संवेदी होती है। पहली दोनों के बीच में पीले फिल्टर की एक पतली तह होती है, जो नीले प्रकाश को निचली दोनों पर्तों से अनावृत रखती है। धुलाई की प्रक्रिया में—ये पर्तें अपने पूरक रंगों में बदल जाती हैं—नीली, बैंगनी, हरी पर्पल और लाल हरी हो जाती है। इस निगेटिव

से ही पॉजिटिव प्रिंट-कलर फिल्टरों के माध्यम से उपयुक्त रंगों मे तैयार किए जाते हैं।

पर यह सिनेमा के तकनीकी इतिहास का मात्र एक अंश है। अब हम इसकी विकसित अवस्था की चर्चा में नहीं पड़ेंगे, अपितु पूरे विकास को यथाक्रम प्रस्तुत करेंगे।

चल चित्रों अर्थात् फिल्म आविष्कार मे जितने आविष्कर्ताओं ने प्रयत्न किए उतनों ने अन्य किसी आविष्कार में शायद ही किए हों। मनुष्य में उस तरह के स्पष्ट चित्र उभारने की लालसा बहुत प्राचीन काल से विद्यमान रही है, जैसे चित्र दीवारों पर जादुई खेल की तरह उभर आते हैं। जो भी हो, उन्नीसवीं शताब्दी के प्रत्येक आविष्कारक को जो इस समस्या से जूझ रहा था, यह निर्भ्रान्त पता था कि वह सचमुच चाहता क्या है, इसी कारण यह निर्णय करना आसान नहीं है कि इनमें से किसने सिनेमा का आविष्कार किया। उन्हें अपने आविष्कार के सारे तत्त्व इधर-उधर बिखरे रूप मे पहले से ही उपलब्ध थे, जिन्हें अब सूत्र-बद्ध करना ही शेष था।

इनमें से एक तत्त्व था, जादुई लालटेन। इसका आविष्कार एक जर्मन जेसुइट अथेनेसियस किर्कर ने सत्रहवीं शताब्दी में ही कर लिया था। यह कैमरा आब्स्क्योरो का ही एक विकास था और काफी लम्बे समय तक इसका प्रयोग एक मनोरंजक खिलौने के रूप में तो किया ही जाता रहा, लेक्चरर लोग अपने रेखा-चित्रों को प्रक्षेपित करके उनका प्रदर्शन करने के लिए भी इसका उपयोग करते थे। कभी-कभी पाखण्डी किस्म के लोग जनता को आतंकित किया करते थे। शिलर ने अपनी एकमात्र रोमांच कथा मे इसी तरह के एक धूर्त आदमी की कहानी दी है। फोटोग्राफी के आविष्कार ने इसके एक दूसरे आधारभूत तत्त्व को उपस्थित कर दिया, क्योंकि कैमरे मे अब रेखाचित्रों के स्थान पर जीवन्त बिम्बों का प्रेक्षण सम्भव हो गया था। अब केवल एक ही कसर रह गयी थी कि उन्हें किस तरह चलाया जा सके।

पर ऊपर से यह बात जितनी सीधी मालूम होती है, उतनी थी नहीं। जिस व्यक्ति ने इस काम को कर दिखाया उसने उस आनन्द के लिए जो कि हम सिनेमा से प्राप्त करते हैं, बहुत बड़ी कीमत चुकाई। उसकी आंखों की ज्योति ही जाती रही। उसका नाम था जोसेफ प्लातो, जिसे विज्ञान के इतिहासवृत्तों से बाहर की दुनिया में कोई जानता भी नहीं।

प्लातो बेल्जियम के एक विश्वविद्यालय में प्रोफेसर था। 28 वर्ष की उम्र मे सन् 1829 में उसने यह जानने के लिए कि यदि सूर्य की ओर एकटक देखते

रहें तो इसका दृष्टिपटल पर क्या प्रभाव पड़ता है, मनुष्य की दृष्टि तन्त्र पर अनुसंधान करना आरम्भ किया, जिसमें वह क्रमशः अधिकाधिक समय तक सूर्य की ओर एकटक ताकता रहता। 42 वर्ष की उम्र होने तक उसकी दृष्टि पूर्णतः नष्ट हो चुकी थी और इससे चालीस वर्ष बाद अपनी मृत्यु की घड़ी तक वह अंधा ही बना रहा। उसने जिस चीज की खोज की थी वह थी आंखों की अचलता—यह तथ्य कि दृष्टिपटल जो कुछ देखता है उससे अपने को तत्काल मुक्त नहीं कर लेता अपितु उस बिम्ब को सेकण्ड के अंश मात्र के लिए अपने पास रखता है और तब यह बिम्ब तिरोहित होता है। इसका अर्थ यह है कि यदि हम अलग अलग बिम्बों को एक ही क्रम में रखें तो वे हमारे मस्तिष्क में एक के ऊपर एक उतरते चले जाएंगे और यदि हम किसी गति की अनुक्रमिक अवस्थाओं को देखें तो यह गति हमें अविरत प्रतीत होगी।

इस खोज का सर्वप्रथम प्रयोग विक्टोरिया युगीन बच्चों के खिलौनों में हुआ। सर जोसेफ हर्सेल नामक एक ज्योतिर्विद ने ऐसा ही एक खिलौना बनाया था। यह गत्ते की एक गोल पट्टी थी, जिसके एक ओर एक चिड़िया (या कुत्ता) और दूसरी ओर एक पिंजड़ा (या मोरी) हुआ करता था। जब रस्सी के एक जोड़े के सहारे इस पट्टी को तेजी से उलटा पलटा जाता था, तो चिड़िया पिंजड़े में बैठी दिखाई देती थी (कुत्ता मोरी में) फ्रांस फॉन उकियस नामक एक आस्ट्रियाई अधिकारी जो बाद में फील्ड मार्शल तक के पद पर पहुंचा था, सम्भवत, पहला ऐसा आदमी था जिसने जादुई लालटेन के सहारे रेखाचित्रों का 1852 में इस तरह क्षेपण किया था कि वे दीवार पर एक के बाद एक तेजी से उतरते चले जाएं और ऐसा लगे कि वे घूम रहे हैं। दूसरे आविष्कारकों ने इसी सिद्धान्त के आधार पर जादुई पहिए और पोथे बनाए।

एडवर्ड म्युब्रिज नामक एक अंग्रेज अमरीका में उत्कृष्ट लैंडस्केप फोटोग्राफर के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था। 1872 में कैलिफोर्निया के गवर्नर ने एक बहस का निपटारा करने में उससे मदद मांगी जो उनके और उनके मित्र के बीच हुई थी। क्या कोई सरपट दौड़ता हुआ घोड़ा सरपट दौड़ में किसी चरण पर अपने चारों पावों को जमीन से एक साथ अलग करता है या नहीं म्युब्रिज ने पालो आल्टो के घुड़दौड़ के मैदान में एक कतार में 24 कैमरे लगा दिए और इनके शटरों में धागे बांध दिए। जब कोई घोड़ा सरपट दौड़ता हुआ उस सीध से गुजरता तो इसने एक पर एक धागे टूटते जाते और इससे कैमरे के शटर प्रचालित हो जाते। इस प्रयोग पर गवर्नर का बहुत अधिक पैसा बर्बाद हुआ, पर इसमें यह सिद्ध हो गया कि उनका कहना सही था। चित्रों से यह प्रमाणित हो गया कि घोड़ा सरपट

दौड़ के दौरान सचमुच अपने चारों पाँवों को जमीन से ऊपर उठा लेता है।

म्युब्रिज ने अपने चित्रों को पुस्तकाकार प्रकाशित किया। पुस्तक का शीर्षक था 'द हार्स इन मोशन' जिसने कि उन सभी लोगों के बीच एक सनसनी फैला दी जो गति फोटोग्राफी पर प्रयोग कर रहे थे। फिलाडेल्फिया में हेनरी हेल, जर्मनी में आन्सेन, फ्रांस में प्रो० ई० जे० मरे आदि ने म्युब्रिज की प्रणाली को ऐसे कैमरों का आविष्कार करके समुन्नत किया, जो शृंखलाबद्ध चित्र ले सकते थे और साथ ही ऐसे प्रोजेक्टरों का आविष्कार किया जो उनके चित्रों को त्वरित अनुक्रम में दिखा सकते थे। इन कैमरों के नाम थे 'फोटोग्राफिक रिवाल्वर' और 'फोटोग्राफिक-गन'। मरे ने वस्तुतः उस बिन्दु से अपना काम आगे बढ़ाया जहा म्युब्रिज ने इसे छोड़ दिया था। उसने फोटोप्रणाली से आदमियों और जानवरों की गति तथा पक्षियों की उड़ान का विश्लेषण किया। निश्चय ही ये सभी चित्र शीशे की प्लेटों पर लिए गए थे।

अब जैसी कि अपेक्षा की जा सकती थी, अमरीका के सबसे उर्वर मेधा से सम्पन्न आविष्कारक एडिसन ने इन चलचित्रों की समस्या को हाथ में लिया, पर यदि अमरीका के लोग आज उसकी प्रशस्ति सिनेमा के आविष्कारक रूप में करते हैं तो यह उतना ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित नहीं है, जितना राष्ट्रीय स्वाभिमान पर। एडिसन मेलों-तमाशों में दिखाए जाने वाले अपने चित्रों में लोगों की रुचि पुनः जागृत करने के किसी उपाय की ताक में था; क्योंकि अब इससे पहले जैसी आमदनी नहीं हो रही थी। यदि लोग फोनोग्राफ सुनते हुए चित्र देख सकते तो बिना हिचक के अपने सिक्के खर्च कर सकते थे, ऐसा उसका खयाल था। इसका परिणाम था, उसका 'काइनेटोस्कोप'। यह एक झांक कर देखने का बाइस्कोप था जिसमें दर्शकों के लिए एक खिड़की बनी होती थी। सबसे पहले उसने मेनलोपार्क के एक दफ्तर में शीशे की 158 प्लेटों पर शॉट लिए। इस छोटे से प्रणय-दृश्य के 'सितारे' वहां के ही दो कर्मचारी थे जिन्हें इन चित्रों को उतरवाने के दौरान आठ घण्टे की यंत्रणा भोगनी पड़ी थी। उन्हें इस क्रम में अपनी भाव-भंगिमाओं में बहुत हल्के परिवर्तन करने पड़े थे। काइनेटोस्कोप में गत्ते पर छपे चित्र एक एक कर दर्शक की नजरों से गुजरते जाते थे और इस तरह इनसे गति की निरन्तरता का कुछ प्रभाव उत्पन्न होता था। यह मशीन 1889 में तैयार हुई थी और इसे लगे हाथ सफलता प्राप्त हुई।

इसके बाद ही एडिसन ने ईस्टमैन और गुडविन की लिपटी हुई फिल्मों की नयी फोटो सामग्री पर भी आजमाइश करने की सोची। उसने एक 50 फुट की रील का आर्डर दिया और इसके अनुरूप ही एक कैमरा तैयार किया ताकि उसके

'काइनेटोस्कोप' में दृश्यावली को अविच्छिन्न रूप में लिया जा सके। एक दिन एक तमाशा दिखाने वाले ने जो पहले कुछ काइनेटोस्कोप खरीद चुका था एडिसन के एक सहायक से प्रश्न किया कि आविष्कारक कोई ऐसी मशीन क्यों नहीं बनाते जिससे एक समय में एक से अधिक आदमी उनके चलित चित्रों को देख सकें—और नहीं तो जादुई लालटेन जैसी ही कोई चीज सही? पर एडिसन को यह बात जंची नहीं।

इस बीच यूरोप में घटनाचक्र बहुत तेजी से चलता रहा। ब्रिस्टल के विलियम फ्रीज ग्रीन नामक एक अंग्रेज फोटोग्राफर ने 1880-90 के दशक के आरम्भ में ही चलित चित्रों पर प्रयोग किए थे। सबसे पहले उसने शीशे की प्लेटों का प्रयोग किया, फिर रेंडी के तेल में भीगे कागजों का प्रयोग किया। क्योंकि ये पारदर्शी होते हैं, और अन्ततः उसने ईस्टमैन के आविष्कार की चर्चा तक सुने बिना ही प्रकाशग्राही इमल्शन के लेप वाले सेलुलाइड का प्रयोग किया। फ्रीज ग्रीन की सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि वह अच्छा मिस्त्री नहीं था—उसे साज सामान तैयार करने वाली एक फर्म से अपना कैमरा और प्रोजेक्टर बनवाना पड़ा था। वह अच्छा व्यवसायी भी नहीं था। कोई आर्थिक मददगार न ढूंढ पाने के कारण उसे बार-बार कर्जे का शिकार होना पड़ा। किसी एक ही विचार को पकड़े रहने और उसे यथासम्भव उत्कृष्ट रूप देने के लिए अपेक्षित जीवट भी उसमें नहीं था।

खैर, उसने अपने आविष्कारक को 1889 में पेटेंट करा लिया और हाइड पार्क जाकर उसने कुछ फुट लम्बी एक फिल्म दागी। अपनी कर्मशाला में उस रात उसने उस फिल्म की धुलाई की और प्रिंट किया और उसे प्रोजेक्टर पर चढ़ा दिया। और अब तो कमाल ही हो गया वहां लोग और बच्चे और घोड़े लगभग उसी तरह घूमते-फिरते दिखाई दे रहे थे, जैसे वास्तविक जीवन में। फ्रीज ग्रीन इतना उत्तेजित हो उठा कि उसने अपना आनन्द किसी दूसरे मनुष्य के साथ बटाना चाहा। कहते हैं वह दौड़कर सड़क पर पहुंच गया। रात ढलने पर आ गयी थी, और उसने जैसे एक पुलिस के सिपाही को मनाया कि वह आकर इस नये अजूबे को देखे।

इस अभागे आविष्कारक के जीवन में यह परम सौभाग्य का क्षण था, पर जब उसे अपने आविष्कार का दोहन करने के लिए तत्काल धन नहीं मिल सका तो वह निराश हो गया और उसने अपना ध्यान किसी दूसरे विचार के पीछे लगा दिया। बकाया बिलों की ढेरी लगती जा रही थी और एक आध बार उसे जेल भी जाना पड़ा था। उसने अपने पेटेंट को बंधक रख दिया और उसका नवीकरण

कराने की उसे फिर कभी फ़िक्र न हुई। सन् 1921 में जब उसकी मौत हुई तब उसके पास एक दमड़ी भी नहीं थी।

एक दूसरे आविष्कारक की मृत्यु यदि अज्ञात में ही एक रहस्यमय दुर्घटना में नहीं हो गयी होती तो उसकी अवश्य बन आती होती। आगस्टिन ली प्रिंस एक फ्रांसीसी कलाकार था, जो लीड्स में बस गया था। वह एक बार जब न्यूयार्क की यात्रा पर गया था, उसी समय उसने म्युब्रिज की पुस्तक 'दि हार्स इन मोशन' देखी थी और चलते-फिरते पदार्थों का उसने ईस्टमैन फिल्म के साथ एक कैमरा अपने उपयोग के लिए तैयार किया था। 1888 में उसने पहली बार फ़िल्म दृश्य का चित्र उतारा था, वह था लीड्स के पुल पर आता-जाता ट्रैफ़िक। पर समाचित्र आदिम महानगरों को इसे दिखाने से पहले वह अपने भाई की राय जानना चाहता था जो दिजोन में रहता था। वह भाई से मिलने के बाद दिजोन से पेरिस की गाड़ी पर सितम्बर 1890 में वापसी यात्रा के लिए सवार हुआ। उस क्षण के बाद से न तो आगस्टिन ली प्रिंस का कोई पता चला और न उसके सामान का ही जिसमें उसके कैमरों और प्रोजेक्टर की ड्राइंग या नमूने अवश्य रहे होंगे।

इसके अतिरिक्त रावर्ट डब्ल्यू पाल नामक लन्दन का एक यंत्र-निर्माता था जिससे 1894 में दो यूनानी मिले; वह अपने साथ एक काइनेटोस्कोप तमाशा दिखाने वाले ले आए थे और उन्होंने उससे कहा कि यदि वह ऐसी ही मशीनें बनाए तो इससे उसे भारी आमदनी हो सकती है, पर पाल ने सोचा कि यदि फ़िल्म के इन छोटे-छोटे दृश्यों को इस तरह प्रोजेक्ट किया जाए कि इसे अधिक दर्शक देख सकें तो यह अधिक अच्छी बात हो। उसने एक प्रोजेक्टर और कैमरा डिज़ाइन किया। लन्दन के एक उपनगर में एक छोटा-सा स्टूडियो तैयार किया और अपनी फ़िल्में तैयार करनी शुरू कीं। 20 फरवरी, 1896 को—जैसाकि हम आगे चलकर देखेंगे यह तिथि बहुत महत्वपूर्ण है—उसने लन्दन में आमन्त्रित दर्शकों के सम्मुख इसका प्रदर्शन किया। पाल ने ब्रिटेन में सबसे पहली फीचर फिल्म बनाई और न्यूज रील के क्षेत्र में वह अग्रणी बना। इसमें आरम्भिक फिल्मों में से एक 1896 की डर्बी का था। इसकी बदौलत प्रिंस आफ वेल्स को इस दौड़ की अगली शाम को एक संगीत कक्ष के परदे पर अपने घोड़े को एक बार फिर विजयी होते देखने का अवसर मिला।

रावर्ट डब्ल्यू-पाल इंगलैंड का सर्वप्रथम फिल्म उद्योगपति बन गया। उसने अपनी फिल्मों से बहुत बड़ी सम्पत्ति अर्जित की, पर सन् 1910 में एक दिन उसने अपने सारे फिल्म स्टाक की ढेरी लगाई और उसमें आग लगा दी। वह आरंभिक फिल्मी दर्शकों की कुरुचि से खिन्न हो उठा था और इस नये माध्यम के विकास

मे जिसके भविष्य में उसे कोई आस्था नहीं थी, वह कोई भाग नहीं लेना चाहता था। उसकी समझ में यह अशिक्षित जनों के लिए एक सस्ते मनोरंजन से अधिक कुछ बन ही नहीं सकता था।

1890-1899 के दशक मे प्राचीन यूनाइटिड स्टेट्स ट्रेजरी के एक स्टेनो सी. फ्रांसिस जेनकिन्स तथा दो जर्मन आविष्कारकों, स्कलाडानोव्सकी बन्धुओं को कैमरे और प्रोजेक्टर तथा छोटी फिल्में बनाने में सफलता मिली। पर इतिहास मे लुई और आगस्त ल्युमिए नामक दो फ्रांसीसी बन्धुओं को उस आविष्कार को त्रुटिहीन बनाने का श्रेय दिया जाता है।

ल्युमिए की फोटोग्राफी के साज सामान को अपनी एक फैक्टरी ल्यों में थी। उसे एडिसन की काइनेटोस्कोप के बारे मे, बेशक पता था। एक रात लुई को नींद नही आ रही थी, उसने एक कैमरे और प्रोजेक्टर के तकनीकी ब्यौरे तैयार किए। इन बंधुओं ने इन्हे अपने मिस्त्री से तैयार करवाया और एक प्रयोगात्मक फिल्म तैयार की जो कुछ ही सेकण्डों की थी। यह ल्युमिए की फैक्टरी के कर्मचारियों के उपहार की छुट्टी में बाहर निकलने का दृश्य था।

22 मार्च, 1895 को उन्होंने अपनी पहली लघु फिल्म पेरिस के कुछ व्यापारियों के सम्मुख प्रदर्शित की, जो इससे बहुत प्रभावित हुए। अगले महीने उन्होंने बहुत-सी छोटी फिल्मों की शूटिंग अपने पहले कार्यक्रम के लिए की, और 28 दिसम्बर को उन्होंने एक शो का उद्घाटन किया जिसे उन्होंने बोलेवार दे कापूसिन पेरिस के ग्रांद काफे के निचले तल्ले मे 'सिनेमातोग्राफी ल्युमिए' नाम दिया था। इस कार्यक्रम मे जो कुल बीस मिनट तक चलता रहा, 'बच्चों का शाम आहार' 'लहरों के बीच एक नौका' 'एक दीवार का ध्वंस' और एक माली को पानी के हौज से तंग करते हुए एक लड़के का मजाकिया दृश्य था और था 'स्टेशन पर ट्रेन के आगमन' का दृश्य। तस्वीरें कांप रही थीं। प्रोजेक्टर से शोर हो रहा था, चमकाता हुआ पर्दा आंखों के लिए कष्टकर था—पर इस सर्वप्रथम सिनेमा के शो को सनसनीखेज सफलता मिली और इसके दरवाजे पर सुबह से लेकर शाम तक भीड़ लगी रहती थी।

इसके आठ सप्ताह बाद 20 फरवरी, 1896 को मनोरंजन के इस नये माध्यम का रसास्वादन करने का अवसर लंदन के निवासियों को मिला। यह उसी दिन की घटना है, जिस दिन राबर्ट डब्ल्यू पाल ने अपने प्रदर्शन किए। ल्युमिए का रीजेन्ट स्ट्रीट की पोलीटेकनिक ने अपने आमंत्रण पर, आमंत्रित दर्शकों के सम्मुख प्रदर्शन करने को बुलाया था। कार्यक्रम वही था जो पेरिस में दिखाया जा चुका था, और 'ट्रेन के आगमन' के दृश्य ने बहुत गहरा असर जमाया; जब भी दर्शक इस

को धीरे अपनी ओर आते हुए देखते थे, वे डरकर दरवाजे की ओर भागने लगते थे। महिलाएं मूर्च्छित हो जाती थीं और व्यवस्थापकों को इन दुर्घटनाओं के समय परिचर्या के लिए एक नर्स भी रखनी पड़ती थी।

ल्यूमिए कैमरा और प्रोजेक्टर का नियोजन और निर्माण बड़ी कुशलता से किया गया था अतः इसने अपनी अन्य प्रतिस्पर्धी मशीनों के मुकाबले में अपने पांव जमा लिए। परवर्ती काल में सिनेमा प्रणाली द्वारा की गयी अपार प्रगति के बावजूद, इन्हें आज भी आधुनिक उपस्करों का पूर्वरूप माना जा सकता है। ल्यूमिए ने ही फिल्म की चौड़ाई का मानक 35 मि० मी० रखा, फिल्म को कैमरा और प्रोजेक्टर में खिसकाने के लिए बने दांते के छेद सिवाय कुछ बड़े पर्दों या निम्न स्तर की प्रणालियों के, आज भी जैसे के तैसे हैं। पूरे मूक चित्र काल में शूटिंग की क्षिप्रता प्रति सेकण्ड 16 चौखटे ही बनी रही—ताकि इनमें से प्रत्येक को $\frac{1}{16}$ सेकण्ड तक उद्भासित रखा जा सके। इसमें पार्श्विक धुरियों पर एक पंजर लगा रहता था, जो चित्रों को प्रत्येक $\frac{1}{16}$ सेकण्ड के उद्भासन के बाद पीछे खिसका देता था और इस बीच चित्रद्वार के सम्मुख एक दूसरा चौखटा आ जाता था। प्रोजेक्टर में इस प्रक्रिया को कुछ हद तक उलट दिया जाता था। किसी प्रकाश स्रोत से आमतौर पर एक आर्क लैम्प से जिसे 'जादुई लालटेन' के भीतर स्थापित किया जाता था, आता हुआ प्रकाश पारदर्शी पॉजिटिव फिल्म में प्रवेश करता था, पर जिस समय फिल्म लैंस के पीछे चलती रहती थी, इसे घूमने वाले परदों से बंद किए जाते थे। ल्यूमिए ने अपनी फिल्मों को स्वयस रीति से अंतिम प्रक्रिया में डिवेलप और प्रिंट करने के लिए भी साज सामान तैयार किए।

आधुनिक युग में शायद ही किसी नये आविष्कार का उस तरह स्वागत हुआ हो जैसा चलचित्र का हुआ। मनोरंजन की एक सस्ती विधा होने के कारण इसने सर्वसाधारण की मनोविनोद और उत्तेजक कालयापन की बहुत बड़ी आवश्यकता की पूर्ति की जो थियेटरों या कांसर्ट हालों में जाने की हैसियत नहीं रखते थे। पूरे दिन के कामकाज की थकान के बाद इसने अल्पव्यय पर ही बाहर निकलने की घूमने-फिरने और देखने की तथा और परेशानियों से भरी वास्तविकता से हटकर एक सुनहरे स्वप्न लोक में पलायन करने की संभावना प्रदान की। यह स्वाभाविक ही था कि सर्वसाधारण के उपयोग के लिए—और हाथ ऐसे सर्वप्रिय [illegible] द्वारा जो इसके द्वारा आसानी से और जल्द से जल्द मालामाल हो जाने का मौका पा गए थे—इनकी फिल्मों का कलात्मक स्तर पहले बहुत घटिया होगा और इसके इसकी प्रतिष्ठा पर भी आंच आयी। आज देखने से कुछ संयोग [illegible], [illegible] [illegible] के साथ ही साथ लेखकों और अभिनेताओं को अपने विचारों को अभि-

यही कारण था कि लाउस्टे को जिसने कि अपने आविष्कार पर बहुत सारा धन फूंक दिया और अपना स्वास्थ्य चौपट कर बैठा था, इसे छोड़ना पड़ा और इसी कारण मूक चित्रपट को ध्वनि से युक्त करने के लिए अपेक्षाकृत अविकसित अन्य तरीकों को आजमाया गया। एडिसन अब तक अपने चित्रों को काइनेटोस्कोप से जोड़ चुका था, अतः सिनेमा के प्रोजेक्टर के साथ तवे से रेकार्डों को लगा देने का ध्यान बिलकुल स्वाभाविक था। ऐसा बार-बार किया गया पर इसे कभी बहुत अधिक सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। ध्वनि और चित्र का पूर्ण समकालन कर पाना और इसे मनचाहे समय तक चलाते रह पाना बहुत कठिन था। जब एक दूसरे से आगे बढ़ जाता था, जैसाकि प्रायः ही घटित होता था, तो इसके परिणामस्वरूप लोगों को अनायास हंसी आ जाती थी; और यदि फिल्म टूट गयी या कहीं खराब हो गयी और एक दो चौखटे काटकर अलग करने पड़ गए तब तो जो कि प्रोजेक्शन बूथों में कभी-कभार ही नहीं, बल्कि अक्सर होता रहता है, तब तो समकालन को बनाए रखना असंभव ही था। दूसरी ओर यदि उन बड़े रेकार्डों में से एक भी टूट गया (जो प्रदर्शन के समय प्रायः हुआ करता था) तब तो फिल्म को बिलकुल बंद ही कर देना होता था। संक्षेप में कहें तो तवे पर ध्वनि की प्रणाली, किसी काम की नहीं थी।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद तकनीकी विकास उस अवस्था तक पहुंच गया था जहां ध्वनि की फिल्म रिकार्डिंग और उससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह कि सिनेमा में उसका पुनः उत्पादन आविष्कारकों की पहुंच के भीतर प्रतीत हो रहा था। जर्मन में—एंजल, मसोले और वोग—तीन इंजीनियरों ने मिलकर तीन साल तक लगातार प्रयोग करने के बाद एक ऐसी प्रणाली का आविष्कार किया, जिसे उन्होंने 'ट्राएर्गेन' अर्थात् 'तीन जनों की कृति' का नाम दिया। जर्मनी की एक अग्रणी फिल्म कम्पनी यूफा ने हांस एंडर्सन की कहानी पर एक फीचर फिल्म तैयार की और इसका प्रदर्शन 1922 में किया। इसे दो दिन के लिए स्थगित करना पड़ा, क्योंकि ध्वनि बहुत अच्छी नहीं थी।

इसके एक साल बाद ली दि फारस्ट ने जो ध्वनि विस्तारक वाल्व का आविष्कारक था, अपनी फोनोफिल्म प्रणाली का प्रदर्शन न्यूयार्क में रिवोली थियेटर में किया। दर्शकों ने इसे बहुत पसन्द किया, पर अब हालीवुड के प्रोड्यूसर और सिनेमा के मालिक भयभीत हो गए। यदि लोगों ने आवाज के लिए हंगामा मचाना शुरू कर दिया तो स्टूडियो और थियेटर इस यंत्र को खरीदने को बाध्य होंगे जो अभी इतना महंगा था कि उसे खरीदने का किसी को साहस हो न हो सके। एक 'षड्यंत्रपूर्ण चुप्पी' ने ध्वनि के आगमन को कुछ वर्षों के लिए और

चित्र 89

स्थ ध्वनि-कैमरों से मुक्ति पाने और ध्वनि को टेप पर रेकार्ड करने की संभावना उत्पन्न हुई। इन चुम्बकीय रेकार्डिंगों को फिल्म पर सामान्य ध्वनि ट्रैकों में परिवर्तित किया जा सकता है। लेकिन फिल्म पर भी फेरस इमल्शन का एक लेप किया जा सकता है और ध्वनि को चुम्बकीय रीति से उस पर रेकार्ड किया जा सकता है और यह उस समय किया जाता है, जब सिनेमा में बिखरे हुए अनेक लाउडस्पीकरों के लिए अनेक पृथक् शाखाओं की अर्थात् 'त्रिविमितीय' ध्वनि की आवश्यकता होती है। चुम्बकीय ध्वनि का अवमानक (16 मि० मी०) फिल्म पर भी स्कूलों और लेक्चर हालों में प्रदर्शन के लिए प्रायः उपयोग किया जाता है।

छठे दशक के आरंभ में ही टेलीविज़न की बढ़ती हुई लोकप्रियता ने फिल्म निर्माताओं को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे अपने ग्राहक को किसी कदर सिनेमा में अनुरक्त रखने के लिए विशेष आकर्षणों की खोज करें। उन्होंने जनता को एक ऐसी चीज देने की कोशिश की जो कि वे अपने घर के छोटे-से परदे पर नहीं पा सकते—यह है स्क्रीन का बहुत अधिक विस्तार, त्रिविमितीय ध्वनि, और पर (इस अध्याय के पूर्वांश को देखें) 'चौड़े-परदे' की अनेक प्रणालियां कुछ थोड़े-से समय के लिए प्रकट हुईं—नाइजेल और रेमण्ड स्पाटिस वुड अंग्रेजी बन्धुओं की तीन आयामी प्रणाली इनमें से ही एक थी। यह ह्वीटस्टन के त्रिवि-मितदर्शी (स्टीरियोस्कोप)—पर आधारित थी और इसमें दो लेंस दो भिन्न स्थानों पर लगे हुए थे और इनसे बनने वाले बिम्बों को एक साथ एक ही पर्दे पर प्रक्षेपित किया जाता था। दर्शकों को भी भिन्न, ध्रुवीकृत लेंसों का प्रयोग करना

सूई कागज को विद्युत् विश्लेषण क्रिया से रंगीन बनाती रहती थी। पर
ाइन की रेखाओं पर आती थी, तो वहां रंग नहीं उभरता था, क्योंकि इन
ओं पर परिपथ बाधित हो जाता था। इस तरह चित्र एक रंगीन कागज
सेद रंग मे उभर आता था।

इसके आधी शताब्दी से कुछ अधिक ही बाद जर्मन भौतिकविद आर्थर कोर्न
हुए रसायन के स्थान पर प्रकाश विद्युत् क्रिया का प्रयोग करते हुए इस
ा का आधुनिकीकरण किया। इसमें प्रेषी सूई के स्थान पर प्रकाश-विद्युत्
लगा हुआ था। इस सेल मे जितना प्रकाश प्राप्त होता है, यह उसी के अनुरूप
पर प्रतिरोध से अपने भीतर से गुजरने वाली एक करेंट को अधिमिश्रित
ी है। प्रेष्य चित्र के एक-एक नुक्ते का सूक्ष्म अवलोकन एक तीखी प्रकाश
। द्वारा होने के साथ-साथ ही प्रकाश-विद्युत् सेल का प्रतिरोध घटता बढ़ता
ा है और इन अधिमिश्रणों को रिसीवर मे भेजा जाता है, जहा वे एक छोटी
ली के प्रकाश को अधिमिश्रित करते हैं। यह अधिमिश्रण घूमने वाले
डर पर एक फोटोग्राफिक कागज की शीट पर पड़ता है और यह ट्रांसमीटर
र चित्र की हल्की या गहरी छायाओं के अनुसार कम या अधिक उद्भासित
ा रहता है।

तार या बेतार से इस फोटो-तार प्रणाली का प्रयोग आज भी प्रेस, निजी
साय, पुलिस, निजी व कानूनी मामलो के लिए फोटो, प्रलेख आदि भेजने
लिए व्यापक पैमाने पर किया जाता है, और पूरे संसार में डाक और केबल
ानिया चित्रो के पारेषण की सुविधाएं प्रदान करती हैं। सन् 1950 से ही
ोपी रेडियो कम्पनियाँ प्रायोगिक तौर पर पूरे के पूरे समाचारपत्र क्षिप्र
ा वाली फोटो-तार प्रक्रिया से पारेषित करती रही हैं। इसमे समाचारपत्र
एक प्रति का सूक्ष्मावलोकन इलेक्ट्रॉनिकी के सहारे समाचारपत्र के कार्यालय
किया जाता है और इसके सवेगों को बहुत छोटी (अतिसूक्ष्म) तरगो से
भोक्ता को भेजा जाता है, जिसके घर मे एक ग्राही यन्त्र इसकी प्रति को पन्ना
पन्ना पुनः उत्पादित करता जाता है और इस तरह समाचारपत्र की प्रतियो
परिवहन और वितरण की आवश्यकता नहीं पड़ती। ब्रिटेन के इजीनियरों
। विश्वास है कि वे छपे हुए शब्दो को मात्र टेलीफोन के तार पर इसके सामान्य
योग को बाधा पहुचाए बिना ही प्रेषित कर सकते हैं, या समाचारपत्र की
तिकृति को टेलीविजन के खाली घण्टो मे उस समय पारेषित कर सकते है, जब
उपभोक्ता सोता ... चारपत्र को पाठकों के सामने लाने
... और यह समाचारपत्रों के परम्परागत

ब्राउन की नली उन्हें अपने उपयोग के लिए पहले से सुलभ थी। इस प्रकार इस समय किसी इलेक्ट्रॉनिक टेलीविजन प्रणाली के दो बुनियादी तत्वों का आविर्भाव हो चुका था।

सेंट पीटर्सबर्ग टेक्नोलॉजिकल इंस्टीट्यूट के बोरिस रोजिंग पहले ऐसे भौतिकविद मालूम होते हैं, जिन्होंने बिम्बों के ग्रहण के लिए ब्राउन की नली का प्रयोग करने की बात सोची। सन् 1907 में ही उन्होंने सुदूर विद्युत् दृष्टि की एक ऐसी प्रणाली का सुझाव रखा जिसमें निपकोव की डिस्क को प्रेषक दृश्य के सूक्ष्मावलोकन के लिए और एक ऋणाग्र-किरण नली को ग्राही के रूप में प्रयोग करना था। लगभग इसी समय ए० ए० कैम्पबेल-स्विंटन नामक एक अंग्रेज आविष्कारक ने भी इलेक्ट्रॉनिक टेलीविजन प्रणाली का प्रस्ताव रखा, पर इसमें प्रेषण और ग्रहण दोनों के लिए ऋणाग्र-किरण नलियों का प्रस्ताव रखा गया था। उसने अपने विचार 1908 में 'नेचर' नाम की वैज्ञानिक पत्रिका में प्रकाशित कराए और 1911 तथा 1920 में यह व्याख्या प्रस्तुत करते हुए, कि इस प्रकार पारेषित बिम्ब को विभिन्न प्रकाश मूल्यों के 40,000 बिन्दुओं में प्रति 1/25 सेकण्ड विघटित और पुनः सज्जित किया जा सकता है, इसका विस्तार किया। सन् 1909 में म्यूनिख के एक इंजीनियर मैक्स डाइकमान ने भी ऋणाग्र किरणों के माध्यम से दूरदर्शन की एक सिद्धान्ततः पुष्ट प्रणाली का प्रकाशन एक जर्मन वैज्ञानिक पत्रिका 'प्रामीथियस' में कराया। उसने एक छोटा-सा माडल भी तैयार किया जो छायाचित्रों का प्रेषण कर सकता था। डाइकमान ने लिखा था—"ऐसा प्रतीत होता है कि बिम्ब पारेषण की शेष समस्याओं का समाधान तार की बजाय बेतार प्रणाली से बहुत आसानी से किया जा सकता है।"

पर टेलीविजन की समस्या का सबसे पहला व्यावहारिक समाधान—यद्यपि जैसा कि आगे चलकर प्रमाणित हुआ, यह आदर्श नहीं था—एक सर्वथा अप्रत्याशित दिशा से आया। जॉन लोगी बेयर्ड एक स्काट पादरी का लड़का था और वह अपने इंजीनियरी वृत्ति को जिसे उसने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अपनाया था, स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण आगे जारी नहीं रख पाया। ट्रिनिडाड में मार्मलेड बनाने से लेकर लन्दन में फ्रेंच साबुन बनाने तक के के व्यवसाय पर अपना हाथ आजमाया। 1922 में वह हेस्टिंग्स में से मुक्त होकर स्वास्थ्य लाभ कर रहा था और इस उधेड़ बुन में पड़ा कि वह अब एक नये किस्म के रेजर ब्लेड की बिक्री बढ़ाने का काम में ले अथवा टेलीविजन का आविष्कार करने का प्रयत्न करे। उसने इनमें दूसरा विकल्प चुना।
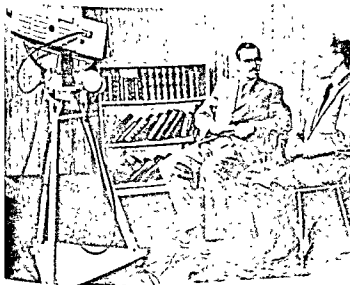
ऊपर : कैमरामैन रहित टेलीविजन कैमरा, जिसका प्रयोग बी० बी० सी० द्वारा साक्षात्कारो के लिए किया जाता है ताकि वातावरण मे आत्मीयता बनी रहे। साक्षात्कार करने वाले के हाथ मे 'शाट बाक्स' है, जिसके बटन दबा कर वह कैमरे के कोणो का चुनाव करता है। यह कैमरा स्वचल रीति से सीधे, तिरछे, और आगे-पीछे बढते हुए अपना फोकस निर्धारित करते हुए चलता है।

बाए . वाणिज्यिक आकड़े तैयार करने
कम्प्यूटर।
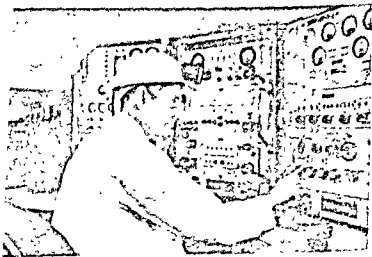
ऊपर · बीअर कोट्स कोयले की खान में स्वचालन।
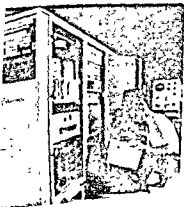
बाएं : वैज्ञानिक आकड़े तैयार करने के लिए कम्प्यूटर।
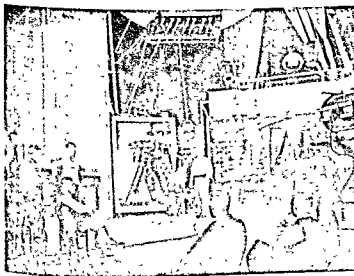
ऊपर. आरंभिक दिनों का एक अमरीकी ध्वनि फिल्म स्टूडियो। ध्वनिसह कैमरा बूथ और एक डोर में लटके हुए माइक की ओर विशेष ध्यान दें।
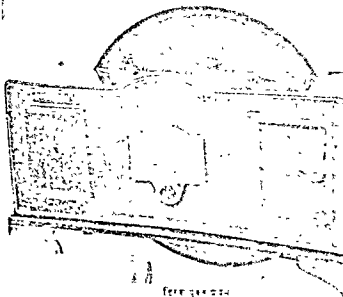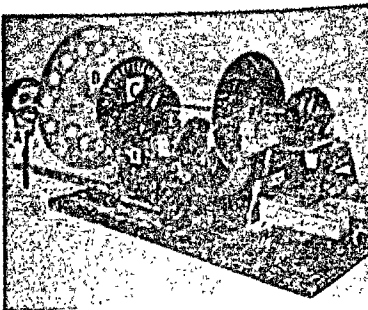
ऊपर : जॉन एल० बेयर्ड 1925 का मूल टेलीविजन ट्रांसमीटर।

नीचे : इवशेमीन्स न्यू कालेज में बी० बी० सी० का विदेशी प्रसारण एकक, बा...
अवस्था में।
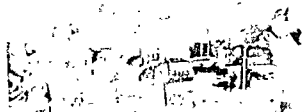
तकनीकी इतिहास में उस कठोर व्रत के बहुत कम उदाहरण प्राप्त होंगे जिनके साथ यह निर्भीक स्काट हमारी शताब्दी के एक अत्यन्त कठिन आविष्कार के पीछे पड़ा रहा। उसके पास कोई आर्थिक सहारा नहीं था, स्वास्थ्य गिरा हुआ था, और इस क्षेत्र में इससे पहले जो कुछ काम हो चुका था, उसकी उसे लगभग कोई जानकारी नहीं थी। उसने अपनी छोटी-सी अंधेरी कोठरी में ही प्रयोग आरंभ किए। उसने अपने वाशस्टैण्ड को ही अपने यंत्र का आधार बनाया; इसके अतिरिक्त जो पुर्जे इसमें लगाए गए थे, वे थे—एक पुरानी चाय की पेटी, बिजली के पुराने सामानों का व्यापार करने वाले एक व्यापारी से लिया हुआ एक बिजली का मोटर, गत्ते को काटकर बनाया हुआ निकोव डिस्क, एक साइकल की दुकान से 4 पेंस प्रति लेंस के हिसाब से खरीदे गए कुछ लेंस; एक बहुत पुराने ढंग का फेंका हुआ बेतार टेलीग्राफ जिसे सेना ने बेकार करार दे दिया था, टार्च की कुछ बैटरियां, कसीदे की सुइयां, चपड़ा और लकड़ी के टुकड़े। पूरी कोठरी में बिजली के तारों का एक गोरखधन्धा-सा बिछा हुआ था।

दो वर्ष के अनवरत कार्य के बाद बेयर्ड को कुछ धुंधली आकृतियां तार से तीन गज की दूरी तक प्रक्षेपित करने में सफलता मिली। वह वहां से सोहो स्थित 22 फ्रिथ स्ट्रीट को चला गया और यहां पर लन्दन के सबसे बड़े डिपार्टमेण्टल स्टोर के मालिक को उसने नयी दुनिया के इस अजूबे को दिखाया। उसने बेयर्ड को इस काम पर अपने बिजली विभाग में रख लिया कि वह दिन में तीन बार उसके ग्राहकों को इसका प्रदर्शन किया करे। बेयर्ड को पैसों से भारी तंगी थी इसलिए उसने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, पर बहुत जल्द ही उसे इस बात का एहसास हो गया कि अपने दोषपूर्ण आविष्कार को प्रदर्शित करने से उसे हानि हो सकती है और वह इसे विकसित तो नहीं ही कर पाएगा। अतः उसने इस्तीफा दिया और फ्रिथ स्ट्रीट को लौट आया।

यहीं पर 2 अक्तूबर 1925 को बेयर्ड को पहली बार एक मनुष्य की मुखाकृति को एक कमरे से दूसरे कमरे में पारेषित करने में सफलता प्राप्त हुई। बेयर्ड की प्रयोगशाला के नीचे की एक फर्म का लड़का दूरदर्शित होने वाला पहला व्यक्ति था। कुछ महीनों के बाद उसने अपनी प्रणाली का प्रदर्शन एक वैज्ञानिक सभा और पत्रकारों के सम्मुख किया। वे काफी प्रभावित हुए और बेयर्ड की प्रणाली का भरपूर उपयोग करने के लिए एक कम्पनी का गठन किया गया।

बिम्ब का सूक्ष्म-अवेक्षण और पुनः संश्लिष्ट करने की एक मशीनी पद्धति के रूप में यह काफी अविकसित और त्रुटिपूर्ण पद्धति थी। बेयर्ड ने ट्रांसमीटर में दृश्य के सूक्ष्मावलोकन के लिए निकोव डिस्क का प्रयोग किया था। तार द्वारा

और इसके कुछ वर्ष बाद बेतार द्वारा रिसीवर को प्रेषित करेंट को एक प्रकाश-विद्युत् सेल द्वारा अधिमिश्रित किया जाता था। रिसीवर में एक प्रकाश रश्मि, जो आवक संकेतों द्वारा तीक्ष्णता में अधिमिश्रित होकर एक अन्य निकोव डिस्क के द्वारा धरती पर पड़े शीशे के एक स्क्रीन पर से गुजरती थी, रिसीवर और ट्रांसमीटर दोनों के डिस्क समवर्ती रीति से घूमते रहते थे। एक विशेष समकालीन संकेत प्रति बार तीसवीं पंक्ति के शेष होने पर मिलता था, जिसके साथ पूरा चित्र पर्दे पर उतर आता था। बेयर्ड ने अपने चित्र को कुछ परिष्कृत करने का प्रयत्न किया, ताकि वह इससे अपेक्षाकृत अधिक ब्यौरे दिखा सके और साथ ही उसने बेतार द्वारा प्रेषण का परिसर भी बढ़ाने की चेष्टा की। उसे यह आशा थी कि बी०बी० सी० इस पर प्रयोग आरंभ करेगा। पर अनेक दूसरे प्रभावशाली मंडल थे जिन्हें न तो बेयर्ड की प्रणाली पसन्द थी न ही टेलीविजन का पूरा विचार ही और बी० बी० सी० को पार्लमेण्ट ने जब एक तरह से इसके लिए बाध्य किया तब जाकर ही उसने प्रायोगिक प्रेषण 1929 में आरंभ किए।

अभी यह सब चल ही रहा था कि अमरीकी प्रयोगशालाओं में टेलीविजन की इलेक्ट्रॉनिकी प्रणाली ने बहुत अधिक प्रगति कर ली, जहां कि फिलो टी० फार्न्सवर्थ और उनके प्रतियोगी डा० वी० के० ज्वोरिकिन ने असाधारण काम कर डाले। ब्लादिमिर ज्वोरिकिन अपने पितृ देश रूस में सेंट पीटर्सबर्ग में बोरिस रोज़िंग का छात्र रह चुका था और उनके साथ सन् 1910 में ऋणाग्र-किरण रिसीवर पर अनुसंधान कार्य कर चुका था, पर दो वर्ष बाद जब उन्हें अनुभव हुआ कि निकोव डिस्क के साथ मशीनी सूक्ष्म अवलोकन और ब्राउन नली द्वारा इलेक्ट्रॉनिक ग्राहकता को एक प्रणाली में संयोजित नहीं किया जा सकता और एक बिलकुल नयी इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली का नियोजन करना होगा—पर उस समय तक हुए सीमित विकास को देखते हुए यह कार्य अत्यन्त कठिन था—तो उन्होंने अपना अनुसंधान कार्य बन्द कर दिया। फिर जब ज्वोरिकिन सन् 1919 में अमरीका गया तब उसने इस समस्या को पुनः अपने हाथ में लिया और 1928 में उसने 'आइकोनोस्कोप' को पेटेंट कराने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया। टेलीविजन बिम्बों को जल्दी और निपुणता के साथ पारेषित करने का यह एक क्रान्तिकारी साधन था। उस समय से लेकर आज तक यह इलेक्ट्रॉनिक कैमरा का आधारभूत साधन बना हुआ है।

ज्वोरिकिन को आर० सी० ए० (रेडियो कार्पोरेशन आफ अमेरिका) के विपुल साधनों का लाभ प्राप्त था और उसके द्वारा विकसित कैमरा मनुष्य की आंख की इलेक्ट्रॉनिक प्रतिकृति बना है। जैसे जो कुछ देखता है, उसके बिम्ब को

एक निर्वात नली के भीतर रखी प्लेट पर उतार देता है। निर्वात नली नन्हे प्रकाश-संवेदी मिलवर दानों (नोड्यूलों) से अच्छादित होती है। दाने बहुत पास-पास होते हैं, पर इनमे से प्रत्येक अपने समीपस्थ दाने के अलग होता है। लेंस पर से बिम्ब इन दानों के मोजेक पर पड़कर विद्युत् आविष्ट हो जाता है। यह आवेश दानों पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा के अनुसार घटता बढता रहता है, इस तरह मोजेक उस बिम्ब के विद्युत् 'चित्र' को प्रस्तुत करता है, जिसे टेलीविजन से प्रेषित करना है। नली के ऋणाग्र से इलेक्ट्रॉनों की एक क्षीण रश्मि मोजेक पर पड़ती है, जो इसके एक-एक पक्ति के एक-एक दाने का दो दर्जन बार सूक्ष्म अवलोकन करती है। जब रश्मि प्रत्येक दाने के ऊपर से गुजरती है, यह उसके विद्युत् आवेश का अपनयन कर लेती है—इस क्रिया की तुलना भारहीन ब्रश की क्रिया से की जा सकती है। फिर इन दानों के आवेश का प्रयोग प्रेषी तरगों के अधिमिश्रण के लिए किया जा सकता है, जो बिम्ब को बेतार सवेगों के रूप मे वहन करती हैं।

जैसा कि हम जानते हैं, ग्राही सेट का हृदय एक लम्बी ऋणाग्री नली होती है जिसके चौड़े सिरे के भीतरी हिस्से मे प्रतिदीप्त जिंक सल्फाइड का लेप होता है। यही उसका पर्दा बन जाता है जिस पर चित्र उभरते हैं। आवक सवेग ऋणाग्र से आनेवाली एक इलेक्ट्रॉन रश्मि का चालन करती है, जो परदे के आर-पार उसी रफ्तार से चलती है, जिस रफ्तार से कैमरे मे। समकालन बेयर्ड प्रणाली की तरह ही प्रत्येक पक्ति के बाद एक विशेष सकेत प्रेषण द्वारा निष्पादित होता है। ब्रिटिश टेलीविजन 405-लाइन प्रणाली का प्रयोग करता है, पर अमरीका और यूरोपीय महाद्वीप की प्रणालियों में 805 पक्तियां तक होती हैं।

फिलो टी फार्न्सवर्थ एक स्वतत्र आविष्कारक के रूप मे अनुसधान करता रहा और उसने बिम्ब 'विच्छेदन' की एक किंचित भिन्न प्रणाली का विकास 1928 में किया। चौथे दशक मे रोज तथा इआम नामक दो अमरीकियों ने 'इमेज आर्थिकोन' का आविष्कार किया जिससे टेलीविजन कैमरा इतना सवेदन ग्राही हो जाता है कि यह मोमबत्ती के प्रकाश से भी काम कर सकता है। इसी बीच वीडिओ (चित्र) और ध्वनि सवेगों को और टेलीविजन के लिए ध्वनिसंकेतों को वहन करने के लिए बहुत उच्च आवृत्तियों के पारेषण विकसित किए गए हैं। और समाक्ष केबल इन्हें एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र तक वहन के लिए तो पहले से ही सुलभ थे जिनसे टेलीविजन की समस्त प्रशाखाओं तक इन्हें पहुंचाया जा सकता है। इस तरह इस सीमा के बावजूद कि प्रत्येक ट्रांसमीटर का परिसर केवल कुछ ही दर्जन मील था, पूरे राष्ट्रीय स्तर पर पारेषण सभव हो गया।

टेलीविजन के नियमित कार्यक्रम सर्वप्रथम लन्दन के अलेक्जेंडर पैलेस में 2 नवम्बर 1936 को प्रसारित होने आरम्भ हुए। निश्चय यह किया गया था कि बेयर्ड और मार्कोनी-ई एम आई की प्रणालियों से एक दिन के अन्तर से कार्यक्रम प्रसारित किए जाएंगे ताकि यह मालूम हो सके कि इन दोनों में से कौन-सी प्रणाली सर्वोत्तम सिद्ध होती है। पर बेयर्ड 240 पंक्तियों से ऊंचा विभेदन नहीं प्राप्त कर सका और कुछ ही सप्ताह बाद उसकी प्रणाली को त्यागकर इलेक्ट्रोनिक प्रणाली ही कायम रखी गयी। द्वितीय विश्वयुद्ध आरम्भ होने पर ब्रिटेन की टेलीविजन सेवा बन्द कर दी गयी। (भय यह था कि कहीं इसकी तरंगों से शत्रुओं के विमानों को लक्ष्य तक पहुंचने का निर्देशन प्राप्त हो जाए) और इसे पुनः 1946 में आरम्भ किया गया। इसके कुछ ही दिन बाद जान लोगी बेयर्ड 58 वर्ष की अवस्था में मर गया। इस बात से निराश होकर कि उसकी प्रणाली को त्याग दिया गया है, उसने रंगीन टेलीविजन पर काम आरम्भ किया था; क्योंकि उसने यह समझ लिया था कि कुछ ही समय बाद दर्शक इसकी मांग करेंगे।

अमरीका में टेलीविजन विश्वयुद्ध के दौरान काम चलाऊ ढंग से आरंभ किया गया, पर इसकी समाप्ति होने के बाद ही यह दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की तब करने लगा जब कि बिजली की बड़ी-बड़ी फर्में बड़े पैमाने पर रिसीवरों का उत्पादन करने लगीं। 1960 में यह हिसाब लगाया गया था कि क्षेत्रीय टेलीविजन केन्द्रों से संयोजित करके प्रसारित किया गया कोई प्रमुख कार्यक्रम पूरी आबादी के दो तिहाई लोगों द्वारा देखा जा सकता है। और चूंकि आंखें कान की अपेक्षा अधिक स्थायी प्रभाव ग्रहण करती हैं। अतः टेलीविजन की शक्ति ध्वनिमात्र अर्थात् रेडियो से कहीं बहुत अधिक है। पूरे राष्ट्र को किसी भी अच्छे या बुरे प्रभाव में डालने की दृष्टि से यह बड़ी शक्ति है और आधुनिक लोकतंत्र का सबसे उत्कृष्ट हथियार बनाने की शक्ति रखता है। यह किसी राष्ट्र के नर-नारियों को जो उस के भाग्य विधायक हैं, एक पारिवारिक कक्ष में पहुंचा देता है। यह चुनाव में बड़े राजनीतिज्ञों का निकट से दर्शन करा देता है और सत्यनिष्ठता की छाप-सी छोड़ने में यह एक विशेष दक्षता रखता है। यह हमें विश्व की घटनाओं में साझीदार बना सकता है और यंत्र तथा दृश्य कलाओं की उत्कृष्टतम रचनाओं को हमारे समक्ष प्रस्तुत कर सकता है, जिनमें इसका प्रतिद्वन्द्वी सिनेमा भी आता है। इसमें शक नहीं कि यह घटिया और बासी चुटकुलों के द्वारा हमारे समय की बर्बादी भी करा सकता है और अपने परदे पर विज्ञापित किसी ब्रांड के सामान को खरीदने के लिए भी दौड़ा सकता है। यह मानवता के लिए जादुई आइने के उस विलक्षण दृश्य की दूर की अनुगूंज है, जो तब तक ही जीवित रहा जब तक कि

टेलीविजन एक स्वप्न बना हुआ था। शायद ही किसी दूसरे आविष्कार ने हमारी उद्योग-विद्या की उपलब्धियों के समक्ष मानव आत्मा की अपर्याप्तता और पिछड़ेपन को इतने निर्मम रूप में प्रदर्शित किया हो, जितना इसने।

और ये उपलब्धियां इस क्षेत्र में तो इतनी तेजी से हुई हैं कि उन्हें सोचकर भी डर लगे। सन् 1952 में 'जेबी आकार' के पहले टेलीविजन उपस्कर एक छोटा-सा कैमरा जिसके साथ छोटे परिसर का ट्रांसमीटर आपरेटर की पीठ पर बंधा रहता था, का परीक्षण अमरीका और फ्रांस में हुआ था, उस समय से लेकर अब तक यह बहुत व्यापक स्तर पर नाना प्रकार के प्रयोगों में आने लगा है। यह संवाद प्रेषित करने का भी एक स्वतन्त्र यंत्र बन गया है जिसके माध्यम से कैमरामैन लगभग कहीं से भी पारेषण कर सकता है; सूक्ष्म-तरंग (सेंटीमीटर तरंग) मार्गणियां संकेतों को आंचलिक ट्रांसमीटर तक वहन करती है, जहां से उन्हें दर्शकों के लिए प्रसारित किया जाता है। जूम लैंस एक अत्यन्त चमत्कारिक दर्शन उपकरण है। यह जिस गणितीय हिसाब पर तैयार किया गया है, उसे निकालने में ढाई वर्ष लग गए थे। यह सेकण्ड मात्र में कैमरे के दृष्टि-क्षेत्र को विस्तृत या संकुचित कर सकता है। इससे दर्शक को ऐसा लगता है जैसे वह स्वयं पूरे दृश्य का अवलोकन करने के लिए कैमरे के साथ ही बड़ी तेजी से पीछे खिसक रहा हो या उनका निकट से दर्शन करने के लिए छलांग लगाकर आगे बढ़ गया हो। खेलों, हाट-बाजार के दृश्यों और इसी तरह की अन्य वास्तविकताओं को दूर प्रेषित करने की दृष्टि से यह बेहद प्रभावशाली है।

फिल्म पारेषण टेलीविजन का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। जीवन्त दृश्यों को प्रेषित करने के लिए विशेष प्रकार की ऋणाग्र-किरण नलिया और सूक्ष्म अवलोकी अपेक्षित होते हैं, जो उड़ने वाली छायाओं के द्वारा कार्य करते हैं, जो नली के परदे पर चलती-फिरती तस्वीरों की सृष्टि करते हैं।

रंगीन टेलीविजन की तकनीकी समस्याओं का समाधान बहुत पहले ही हो गया था। जर्मन भौतिकीविद ओट्टो फान ब्रांट ने रंगीन चित्रों के पारेषण का पेटेंट 1902 में ही प्राप्त कर लिया था। पर इसके साज-सामान और विशेषत: रिसीवरों के ऊंचे दाम के कारण इसके आम चलन में आने के रास्ते में बाधा बनी रही। अमरीका में रंगीन टेलीविजन कार्यक्रम इस शताब्दी के छठे दशक से ही पारेषित होते रहे हैं, और जापान में नियमित रंगीन कार्यक्रम 1960 में शुरू हुए; ब्रिटेन में ब्रि० ब्रा० कं० ने अपने दैनिक रंगीन कार्यक्रम 1967 में शुरू किए। सोवियत संघ, फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी, और कुछ छोटे यूरोपीय देशों ने भी टेलीविजन की रंगीन सेवा आरंभ कर दी है।

जॉन एल० बेयर्ड ने अपने 'टेलीक्रोम' प्रणाली का प्रदर्शन इस शत
चौथे दशक में ही कर दिया था, गो उन्होंने ऐसा एक प्रयोगशाला के बन्द
पर ही किया था। अमरीका की आर० सी० ए०, ब्रिटेन की पाइ तथा प्र
और जर्मन अनुसंधान प्रयोगशालाओं ने अपने प्रयत्न द्वितीय विश्व
समाप्ति के बाद तेज कर दिए और अन्ततः इनकी प्रधान प्रणालियों का
सामने आ गया। ये हैं संयुक्त राज्य की एन० टी० एस० सी०, फ्रांस की (
टेलीविजन सिस्टम्स कमेटी) एस० ई० सी० ए० एम० और जर्मन की पी
एल०। इन के आधारभूत सिद्धान्त कमोवेश वही के वही बने हुए हैं।
मे एक इलेक्ट्रॉनिक गत्ते की बजाय इसमें तीनों प्राथमिक रंगों—लाल
नीला के लिए तीन गन होते हैं। गनों की रश्मियां प्रेष्य दृश्य का उनके व
के अनुसार सूक्ष्मावलोकन करती हैं और सकेतों के ये तीनों कुलक रिसीव
पारेषित होते हैं। यहा पर तीनो रश्मियां इस नली के भीतर फलकर
अभिमृत (कन्वर्ज) होती हैं—जिसका बाहरी फलक ही वह परदा होता है
पर हम हजारों सूक्ष्म बिन्दुओं से बने हुए बिम्बों को देखते हैं।

इतना तो जाहिर ही है कि रंगीन टेलीविजन सादे चित्रों के प्रेषण और
की तुलना में बहुत अधिक व्ययसाध्य होता है। अतः रंगीन सेटों की व
अधिक होती है। कैमरों और प्रेषण यन्त्रों की तो बात ही अलग है। यह बा
तीनों प्रणालियों पर घटित होती है। अन्तर्राष्ट्रीय रंगीन कार्यक्रमों के वि
के लिए एक प्रणाली को दूसरी में बदलने की समस्या का समाधान प्रविधिज्ञ
भी करना पड़ा। ब्रिटेन ने अन्ततः जर्मन पी० ए० एल० प्रणाली का वरण
जो अमरीकी एन० टी० एस० सी० से किंचित् भिन्न है, फ्रांस और सोवियत
एस० ई० सी० ए० एम० का प्रयोग करते हैं। इन तीनों प्रणालियों में इस
की पूरी गारंटी है कि सादे टेलीविजन के दर्शक जो उस समय तक जब, तक
रिसीवर आज की अपेक्षा बहुत सस्ते नहीं हो जाते, बहुमत में रहेंगे—
दूसरे सेटों पर रंगीन कार्यक्रमों का भी आस्वादन कर सकते हैं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि रंगीन टेलीविजन सादे चित्रों को पूरी तरह
देगा। पर अभी अन्य क्रान्तिकारी विकास होने वाले हैं जैसे 'चपटे' परदे—
प्रचलित ऋणाग्र-किरण नली वाले रिसीवर बाक्स का स्थान ग्रहण कर लेंग
अमरीकी और ब्रिटिश इंजीनियर विशेषतः आर० सी० ए० प्रयोगशाला त
लन्दन का इम्पीरियल कालेज इस विषय पर द्वितीय विश्वयुद्ध के अन्त से
प्रयोगरत हैं। लन्दन के इम्पीरियल कालेज के डा० डी० गैबर ने 1958 में इस
एक प्रारंभिक रूप का प्रदर्शन किया था। चपटा परदा [illegible] र पर लम्बी

रह टागा जा सके, दो-तीन इंच से अधिक मोटा नहीं हो सकता। ऋणाग्र ट्रॉन परदे के पीछे लगे इलेक्ट्रॉनिक 'गन' से नीचे की ओर को छूटते हुए ग परदे के समानान्तर चलते हैं। पेंदे में वे एक 'प्रतिवर्ती लेंस' से र्तित होकर संवाहकों के एक ग्रिड (जाल) के माध्यम से परदे पर पहुंचते पे ग्रिड जो इलेक्ट्रॉन रश्मि से प्राप्त विद्युत् आवेशो का सचय करते हैं और परदे पर पहुंचाते हैं, चपटे परदे को रंगीन कार्यक्रमों के लिए विशेष रूप से युक्त माना जाता है।

टेलीविजन के क्षेत्र मे एक महत्त्वपूर्ण तकनीकी उपलब्धि (जिसका प्रयोग मा के लिए भी हो सकता है) की ओर आम दर्शकों की नजर ही नहीं गयी। है चुम्बकीय टेप पर टेलीविजन कार्यक्रमों की रेकार्डिंग। जब से ध्वनि को र्ड करने की टेप मशीन सामान्य प्रयोग मे आयी (देखें अध्याय 4) तभी से ेषज्ञ इस पर प्रयोग करते रहे और दिसम्बर 1953 मे आर० सी० ए० के संधान कर्ताओं को रंगीन तथा सादे टेलीविजन कार्यक्रमों को रेकार्ड करने एक प्रणाली का प्रदर्शन करने मे सफलता मिली।

पहले किसी 'सजीव' टेलीविजन कार्यक्रम को या ऐसे आयोजनो को जिन्हें र-बार दिखाया जाना है, या संग्रहालय के लिए तैयार करने के लिए सामान्य ता था 'टेली रेकार्डिंग' या 'काइनेस्कोप रेकार्डिंग'। इसमे टेलीविजन रिसीवर रों के सिरे पर कार्यक्रम के समय मे ही एक फिल्म लगा दी जाती थी। इसकी ता इतनी अच्छी हो ही नहीं सकती, जितनी कि मूल प्रेषण की। एक दूसरा रीका जो इससे भी पेचीदा और खर्चीला था, स्टूडियो मे कार्यक्रम के साथ-साथ उसकी फिल्म तैयार करते जाने का था। इतना तो स्पष्ट ही था कि बहुत रो पुष्ट विद्युत टेप पर टेली-रेकार्डिंग टेलीविजन कार्यक्रमों के परिरक्षण, नरावृत्ति, सपादन, संग्रह आदि की समस्याओं का समाधान कर देगा।

यों कि विद्युत् इंजीनियर के लिए ध्वनि और दृश्य संकेतों के बीच कोई मौलिक अन्तर नहीं है, पर दृश्य संकेतों को रेकार्ड करने की समस्या बहुत दुष्कर थी। टेप पर 16,000 साइकल प्रति सेकण्ड की दर से बहुत उत्तम किस्म की ध्वनि रेकार्ड की जा सकती है; पर उत्कृष्ट दृश्य रेकार्डिंग के लिए 50 लाख साइकल प्रति सेकण्ड की आवृत्ति अपेक्षित है—और रंगीन चित्रों को रेकार्ड करने के लिए इससे भी दुगने साइकल प्रति सेकण्ड की। इस प्रकार [illegible] का [illegible] एक विशेष चौड़ाई का [illegible] के टेप—[illegible] को [illegible] करने के लिए का प्रयोग करके, [illegible] की [illegible] बहुत [illegible]। [illegible] और [illegible] के [illegible] को [illegible] के

रूपान्तरित करना अपेक्षाकृत सरल प्रक्रिया है। इस प्रयोग के समय कैमरे के साथ ही एक अतिरिक्त मशीन लगातार उसी तरह सम्पन्न किया जाता है : जैसे केवल ध्वनि की रेकार्डिंग के दौरान होता है। वही मशीन बाद में पूर्ववर्ती रेकार्डिंग को दृश्य और ध्वनि में पुनः रूपान्तरित करने का भी काम कर सकती है।

वाइडियो टेप रेकार्डर की पहली बैटरी जिसे 'आरेक्स' प्रणाली कहा जाता है, अमरीकी टेलीविजन स्टूडियो में 1958 में लगाई गयी थी। आज अधिकांश कार्यक्रमों को प्रसारण से पूर्व वाइडियो टेप पर रेकार्ड कर लिया जाता है—जीवन्त कार्यक्रम, विशेषतः ऐसे मनोरंजन कार्यक्रम को तात्कालिक महत्त्व के नहीं होते—अपवाद हैं न कि सामान्य नियम। टेलीविजन के लिए शूट की गयी फिल्म-सामग्री बड़ी आसानी से वाइडियो टेप पर स्थानान्तरित की जा सकती है। चाहे जीवन्त फिल्म हो या वाइडियो हो, दोनों की उत्तमता समान स्तर की होती है और दर्शक इन दोनों के बीच फ़र्क़ नहीं कर सकता।

ग्रामोफोन रेकार्ड की ही पद्धति पर विकसित वाइडियो रेकार्डिंग की एक उपशाखा 'डिब्बाबन्द' टेलीविजन कार्यक्रम है : यह शू बाक्स के आकार की एक मशीन है जो घर या स्कूल के टेलीविजन से जुड़ी रहती है। इससे टेप रेका किए हुए बिम्ब पर्दे पर पुनः प्रकट हो सकते हैं।

वाइडियो रेकार्डिंग प्रणाली फिल्म उत्पादन में भी कुछ दृष्टियों से लाभक है, क्योंकि इसके टेप को धोने या प्रिंट करने की जहमत नहीं रहती और इसे पुन ज्यों का त्यों प्रदर्शित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए फिल्म डाइरेक्टर शूटिंग के तुरत या एक दिन बाद बिना किसी सम्पादन के ही फिल्म को प्रदर्शित करके यह जाच सकता है कि यह सन्तोषजनक है अथवा नहीं और आवश्यकता होने पर शूटिंग पुनः कर सकता है। यहां तक कि एक पूरी की पूरी फीचर फिल्म टेप पर शूट की जा सकती तथा सम्पादित हो सकती है और फिर सामान्य सेल्यूलाइड फिल्म में रूपान्तरित की जा सकती है। इससे उत्पादन का खर्च बहुत घट जाता है, क्योंकि किसी फीचर फिल्म में फिल्म पर ही सबसे अधिक रकम खर्च होती है। एक ही टेप को 'साफ' करके उसका कई बार प्रयोग किया जा सकता है। अन्ततः वाइडियो टेप को पुनः प्रदर्शित करने वाली मशीन सिनेमा में फिल्म प्रोजेक्टर का स्थान ले लेगा, और शौकिया सिनेमा बनाने वाले लोग भी अपने छुट्टी के दिनों के शॉट लेने के लिए वाइडियो टेप कैमरे रख सकेंगे।

हमारे युग में टेलीविजन मात्र एक सस्ता घरेलू मनोरंजन मात्र नहीं है। यह स्कूली बच्चों को शिक्षा देता है : इसका प्रयोग चिकित्सकों के प्रशिक्षण में

किया जाता है, जहां किसी आपरेशन का निकट से लिया हुआ रंगीन शॉट एक बन्द परिपथ पर प्रेषित किया जा सकता है जो चिकित्सा के छात्रों को आपरेशन थियेटर (शल्य चिकित्सा कक्ष) की तुलना में अधिक सुचारु रीति से शिक्षित करने में सहायक हो सकता है। फैक्टरियों और अनुसंधान केन्द्रों में बन्द परिपथ के टेलीविज़न आम तौर पर ऐसी प्रक्रियाओं का नियंत्रण करने के लिए उपयोग में लाए जाते हैं, जिनकी निगरानी सीधे नहीं की जा सकती; क्योंकि वे ऐसे स्थलों पर घटित होती हैं जहां पहुंचा नहीं जा सकता, या जहां यदि कोई मनुष्य अधिक निकट चला जाए तो उसके लिए खतरा उत्पन्न हो जाएगा—उदाहरण के लिए परमाणु विद्युत् केन्द्रों या अनुसंधान रिऐक्टरों में। तीन आयाम का औद्योगिक टेलीविजन आम तौर से दूरस्थ परिचालनाओं और रसायनिक प्रयोगों की निगरानी के लिए दिनोदिन अधिक आवश्यक होता जा रहा है। त्रिविमितीय प्रभाव तीन आयामी सिनेमा की ही भांति ध्रुवीकृत लैंसों को प्रयोग से उत्पन्न किया जाता है, पर होलोग्राफी इसका इससे भी अच्छा समाधान प्रस्तुत कर सकता है। स्टोरों पर बन्द परिपथ के टेलीविजन उठाईगीरों को पकड़ने के लिए लगे रहते हैं। सड़कों के परिवहन की निगरानी हेलीकोप्टरों पर लगे कैमरों द्वारा की जाती है। बैंक अपने प्रधान कार्यालयों में जमा लेखा पत्रों को अपनी शाखाओं में लगे ग्राही सेटों को पारेषित करते हैं। रेल कम्पनियों में अपनी साईडिंगों और मार्शलिंग यार्डों में हवाई अड्डों ने अपने नियंत्रण कक्षों में और पुलिस ने नगर के सकरे केन्द्रों में जहां दृष्टि का क्षेत्र बहुत सीमित होता है, बन्द परिपथ के टेलीविज़न लगा रखे हैं। भविष्य में प्रत्येक घर में टेलीविजन कैमरे का प्रसार हो सकता है: ऐसी स्थिति में गृहिणी अपने दरवाजे पर खड़े किसी आगन्तुक पर, झूले में पड़ी बच्ची पर और रसोई में बनते भोजन पर एक केन्द्रीय दृश्य पटल पर लगी इलैक्ट्रोनिक आंख के जरिये नजर रख सकेगी। सागर तलीय टेलीविजन कैमरों ने महासागरों के जीव-जन्तुओं तथा समुद्र के अन्तल में पड़े प्राचीन पोतों के भग्नावशेषों के चित्र पारेषित किए हैं, जहां तक कोई मनुष्य बिना किसी वायिस्का-फे (अगाध समुद्र तल में पहुंचने वाली पनडुब्बियां) में बैठे पहुंच ही नहीं सकता। अन्तरिक्ष यान अपने साथ टेलीविजन कैमरे ले जाते हैं, जिससे हम इनमें बैठे अन्तरिक्ष यात्रियों को देखते रह सकते हैं और ये हमें तारों और ग्रहों को उस रूप में प्रदर्शित करते हैं, जैसा वे धरती के वायुमण्डल के बाहर से दिखाई पड़ते हैं।

7
सामान्य इलेक्ट्रॉनिक

प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के थोड़े समय के भीतर ही एक स्काटलैण्ड वासी बढ़ई के लड़के, युवा मौसम विज्ञानी राबर्ट वाट्सन-वाट ने फार्नबरो स्थित रायल एयर फोर्स संस्थान में प्रवेश किया। इस समय उसके दिमाग में एक विशेष समस्या को लेकर उधेड़बुन चल रही थी। सिविल विमानन का तेजी से विकास हो रहा था, परन्तु अनेक दुर्घटनाएं घटती थीं, क्योंकि विमानचालक अक्सर तड़ित झंझाओं की लपेट में आ जाते थे। वाट्सन-वाट उन्हें चेतावनी देने के माध्यमों और तरकीबों के बारे में सोचने में लगा हुआ था। चूंकि तड़ित झंझाएं विद्युत्-प्रपंच हैं, अतएव उनके गर्जन की आवाज को बेतार संग्राही के आकर्णक में सुना जा सकता है, इस प्रकार इन ध्वनियों का पता लगाने का, जिन्हें उस समय तक बेतार संचार में महज़ एक कंटक माना जाता था, एक रास्ता साफ दीख पड़ रहा था।

युवा वैज्ञानिक के मन में अपनी खोज के लिए समूचे पश्चिमी गोलार्ध में रेडियो श्रोताओं की सहायता प्राप्त करने का विचार था। रेडियो प्रसारण का विकास अभी शुरू ही हुआ था, और उसने बी० बी० सी० से इस योजना में सहयोग करने का आग्रह किया। उन सभी श्रोताओं को जो सहायता करने के लिए तैयार थे, रेडियो वार्ताओं के मजमून पहले ही भेज दिए गए, और उनसे आलेख के सिर्फ उन्हीं शब्दों को चिह्नित करने के लिए कहा गया, जो उनके रिसीवरों में वायुमण्डलीय गर्जना के साथ सुनाई पड़ें।

कैरो से लेकर बर्जेन, मैडिरा से लेकर पोट्सडैम तक के चिह्नित आलेख वापस आए और वाट्सन-वाट उन पर काम करने में लग गया। उसने पाया कि तड़ित् झंझाओं की गतियों को 4500 मील दूर से ही निश्चित रूप से जाना जा सकता है। जब लन्दन के निकट स्लो स्थित रेडियो रिसर्च स्टेशन पर उसका तबादला हुआ, तब वह विश्व के अनेकानेक भागों की यात्रा करते हुए अपने शब्दों में 'दर्शक पंजिका पर तड़ित विक्षोभों से हस्ताक्षर' कराने का काम करता रहा।

इनकी चेतावनियों से हवाई-परिवहन के क्षेत्र में सुरक्षित उड़ान में बहुत बड़ा योगदान मिला।

1934 में एक दिन जबकि वह टेडिंग्टन स्थित नेशनल फिजिकल लेबोरेटरी में एक वरिष्ठ वैज्ञानिक की हैसियत से कार्य कर रहा था—उससे एक सरकारी विभाग ने गुप्त पूछताछ की, जिसमें तथाकथित 'मृत्युकिरणों' के सम्बन्ध में उसके विचार मांगे गए थे। खासतौर पर नाजी जर्मनी से प्राप्त सूचनाओं में इसकी चर्चा अक्सर समाचार पत्रों में होती रहती थी। क्या सचमुच किसी तरह की किरणों से दूर से ही लोगों को मारना और पंगु करना विस्फोटकों को उड़ाना, कारों, टैंकों और वायुयानों को रोकना सम्भव है ?

वाट्सन-वाट की रिपोर्ट के अनुसार ये कहानियां निरर्थक थीं (वास्तव में वे हिटलर की मात्र आतंक फैलाने वाली मनोवैज्ञानिक रण-नीतियों का अंग थीं)। बहरहाल विद्युत्-विक्षोभ पर काम करने के दौरान एक और ज्यादा व्यावहारिक विचार उसके दिमाग में आया था—यह एक ऐसी प्रणाली का विचार था जिससे वायुयानों और जल पोतों को बादल, धुन्ध और अन्धेरे में से ले जाया जा सकता था। वह इसे 'रेडियो-स्थिति-निर्धारण' कहता था। उसने जानना चाहा कि क्या सरकार किसी अनुसंधान कार्य की मदद के लिए तैयार होगी ?

उसे कुछ रकम देना मंजूर किया गया ताकि वह प्रयोगों को सफल रूप से सम्पादित करने की दिशा में वैज्ञानिकों का एक छोटा-सा दल तैयार करके आगे बढ़ सके। राडार—जिस नाम से हम इस पूरी प्रणाली को जानते हैं, 'रेडियो डिटेक्शन एण्ड रैन्जिंग' का संक्षिप्त रूप है। इसका पहली बार परीक्षण डिवेन्ट्री के शक्तिशाली लघु तरंग रेडियो प्रेषी से दस मील दूर एक मैदान में किया गया। वाट्सन-वाट ने 1935 में एक लारी में अपने उपकरणों को रखा था। उनका सिद्धान्त सत्य सिद्ध हुआ : उड़ते हुए वायुयान की एक बेतार 'प्रतिध्वनि' को जमीन पर से रेडियो रश्मि के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता था, और इसकी दूरी गति और दिशा को निश्चित किया जा सकता था। वाट्सन-वाट ने इसकी व्याख्या की कि "वायुयान के डैने वायुमंडल में एक तरह से क्षैतिज तार की तरह काम करते हैं। जब उन पर एक शक्तिशाली बेतार अणु प्रेषण किया जाता है तो वे 'गौण प्रेषी' में बदल जाते हैं और तरंगों को आपतन कोण पर उसी प्रकार वापस भेज देते हैं, जैसे एक दर्पण प्रकाश किरणों को परावर्तित कर देता है।"

निश्चय ही यह सिद्धान्त कोई नयी खोज नहीं था। बहुत पहले 1887 में हेन-

न्स हर्ट्स ने यह दिखा दिया था कि विद्युत् चुम्बकीय तरंगें प्रकाश किरणों की ही
ति परावर्तित हो जाती हैं और 1904 में एक जर्मन वासी इंजीनियर हुल्स-
यर ने रेडियो प्रतिध्वनि यंत्र का पेटेंट प्राप्त कर लिया था। 1922 में मार्कोनी
कहा कि मैंने बेतार टेलीग्राफी तरंगों का परावर्तन देखा है और उसने सुझाव
या कि जहाजों को धुन्ध में टकराने से बचाने के लिए कोई ऐसा ही उपाय काम
लाना चाहिए। इसके कुछ वर्षों बाद मार्कोनी रेडियो प्रविधिज्ञों ने अति लघु
डियो तरंगों के साथ प्रयोग किया। समुद्र में जोखम की रक्षा के लिए इन्हें स्पन्दों
लघु विस्फोटों के रूप में प्रेषित किया गया था। नारमेन्डी नामक जहाज एक
र ही 'अवरोध परिचायक' से सुसज्जित था। 1930 में दशक के आरम्भ में
पनी की टेलीफुंकन और सीमेन्स नामक फर्मों ने इसी तरह का काम आरंभ
या। परन्तु वैमानिक परिचालन की एक सम्यक् प्रणाली को विकसित करने
काम वाट्सन-वाट पर था।

काम को गुप्त रखने की समस्या तो थी ही समस्त 'प्रतिध्वनि' प्राप्त करने के
ए अत्यन्त लघु स्पन्दों (1 सेकण्ड का 10 लाखवां भाग) को उत्पन्न करने में
मर्थ एक उच्च शक्ति वाले यंत्रों की डिजाइन, और ऐसे रिसीवर विकसित
रने की भी प्रमुख कठिनाइयां थीं, जिन्हें अप्रशिक्षित कर्मी भी परिचालित
र सकें। वाट्सन-वाट् के दल के द्वारा सफोक तट के एक दूरवर्ती भाग
आरंभिक अनुसधान कार्य सम्पादित हुए। वहां के गाव वालों के कुतूहल की
ति के लिए यह बताया गया कि ये शहरी लोग तेल की खोज में लगे हुए हैं।
935 के अंत तक पहले से ही 5 राडार केन्द्र परीक्षण के तौर पर काम कर रहे
। 1936 के वसंत तक वायुयानों को 75 मील की दूरी पर से ही राडार के
रिए जाना जा सकता था और इसके तीन वर्ष बाद द्वितीय विश्वयुद्ध के आरम्भ
छः महीने पूर्व वाइट द्वीप से एबरडीन तक राडार केन्द्रों की एक शृंखला
यम हो गयी थी। शत्रु पक्ष के किसी भी विमान के लिए यह एक असंभव सी
त थी कि वह इस अदृश्य और अटूट दीवार को लाघ जाए और इससे बहुत
ले ही उसे तोड़ा न जा सके।

ब्रिटेन की लड़ाई में राडार एक निर्णायक महत्त्व की चीज था। जर्मन लुफ्त-
फे (जर्मन वायुसेना) द्वारा बड़े पैमाने पर किए जाने वाले आक्रमणों को
फल करने में ब्रितानी लड़ाकू विमान चालकों को इससे बहुत मदद मिली
र ब्लिट्ज (हवाई हमला) के दौरान रात में गोरिंग के बम वर्षकों के प्रहार
लन्दन को बचाने में यह बेहद उपयोगी सिद्ध हुआ। युद्ध का पासा जब मित्र
ष्ट्रों की ओर पलटा तो राडार अपने नवीनतम औजारों के साथ वायुयानों

और जलयानों के समस्त क्रिया कलापों में निर्देशन और सुरक्षा करने के लिए पहले से ही उपलब्ध था। गो वाट्सन वाट को 1942 में नाइट की उपाधि से विभूषित किया गया था, पर युद्ध की समाप्ति तक जनता इन आविष्कारों के बारे में कुछ नहीं जानती थी।

राडार और इससे सम्बन्धित विद्युत् निर्देशन और दूर नियन्त्रण के तकनीकी शांतिकाल में अनेक तरह से उपयोगी सिद्ध हुए। अधिकांश जहाजों और अनेक बंदरगाहों ने राडार को इसके मौलिक रूप में ही स्थापित किया है, क्योंकि हर तरह की रोशनी और मौसमी स्थितियों में देखने के लिए यह एक विश्वसनीय औज़ार है। केक की बीच में से कटी पर्त की भांति दिखाई पड़ने वाले राडार के घूमने वाले एरियल से हम सभी परिचित हैं। सामान्यतया (स्कैनर) दुतल्ला होता है। इसके ऊपरी भाग का प्रयोग प्रेषण के लिए होता है और निचला संकेतों को ग्रहण करने के काम आता है, अवलोकी प्रतिमिनट 10 से 25 चक्कर की रफ्तार से घूमता है। ट्रांसमीटर और रिसीवर दोनों इसके भीतर ही लगे रहते हैं और इसके साथ ही चक्कर लगाते रहते हैं।

प्रेषी लगभग प्रति सेकण्ड 1000 विस्फोटों की दर से अत्यंत लघु ऊर्जा-विस्फोटों को सेन्टीमीटर तरंग-बैंड में भेजते रहते हैं। वे एक संकरे-अणु में संघनित होते रहते हैं। प्रेषी में स्थित एक 'अधिमिश्रक' और मैग्नेट्रोन' उत्पन्न इन विस्फोटों पर नियन्त्रण करता रहता है। मैग्नेट्रोन एक छोटा वाल्व है, जो अत्यत लघु स्पन्दों को अविकल प्रेषित करने में सक्षम होता है। जैसे ही एक स्पन्द जाता है, सग्राही एरियल से सबंधित हो जाता है और 'प्रतिध्वनि' को सुनता है। तरंग के पथ में कोई भी अवरोध चाहे वह कोई अन्य चीज़ हो या पहाड़ या तटरेखा या फिर मछलियों का कोई झुण्ड, ऊर्जा स्पन्द को परावर्तित कर देता है फलतः इसका कुछ भाग 'प्रतिध्वनि' के रूप में लौटता है जिसे अवलोकी ग्रहण कर लेता है, फिर इसका विस्तार होता है और एक ऋणाग्र किरण नली में भर जाता है। इस नली का अंतिम चौड़ा भाग, जिसकी तुलना टेलीविजन सेट के पर्दे से की जा सकती है, प्रतिध्वनियों द्वारा जो कुछ भी लाया जाता है, उसे चित्र के रूप में पुनरुत्पादित कर देता है।

यह कार्य नली की संकरी गर्दन के गिर्द दो कुण्डलियों (तार की) को लपेट-कर किया जाता है, जो ऋणाग्र द्वारा विकीरित इलेक्ट्रॉनों की किरण को प्रभावित करता है। इसकी क्रिया बहुत कुछ वैसी ही होती है, जैसी शीशे के तल पर प्रकाश किरणों के पड़ने पर होती है। 'फोकस कुण्डली' द्वारा राडार के पर्दे पर चित्र की सुस्पष्टता निश्चित होती है, और 'विचलन कुण्डली' पर्दे पर चमकीले,

बन्दरगाह पर खड़े पोत पर राडार का संस्थापन;
यो० अ० नि० योजना अवस्थिति निदर्शक
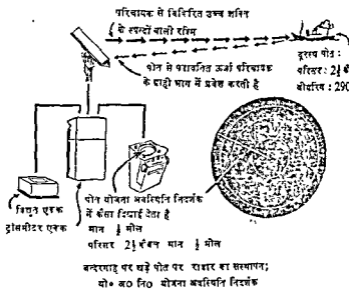
हुए खण्डों का नियंत्रण करती है। चूंकि यह कुण्डली अवलोकी के साथ चक्कर काटती रहती है, इसलिए ये खण्ड प्रति मिनट 10 से 25 बार पुनर्नवीकृत होते हैं और यदि उनमें किसी एक की या अन्य की अवस्थिति, उदाहरणार्थ, यह एक जहाज की सूचना दे रहा है—बदल रही है, तो इसका अर्थ यह है कि उस वस्तु की वास्तविक अवस्थिति अवलोकी के ही अनुरूप बदल भी रही है।

इलेक्ट्रॉनों द्वारा चित्र 'उतारने' की इस प्रक्रिया का अत्यंत विलक्षण हिस्सा किसी अवरोध की दूरी का स्वचालित मापन है। यह समय का निर्धारण करके किया जाता है, जो निश्चय ही राडार द्वारा निर्गत स्पन्द और प्रतिध्वनि के लौटने के बीच का एक सेकण्ड का एक अत्यंत छोटा भाग होता है। प्रतिध्वनि द्वारा निर्मित खण्ड केन्द्र से एक निश्चित दूरी पर उत्पन्न होता है, जो अवरोध की वास्तविक दूरी के अनुसार होता है। बहरहाल यदि 'वास्तविक गति' वाली राडार प्रणाली का प्रयोग किया जाता है, तो चालक का अपना जहाज भी पर्दे पर चलता हुआ दिखाई देता है। अन्य जहाज भी अपनी आपेक्षिक गतियों से चलने की बजाय अपने वास्तविक वेगों से चलते हुए दिखाई पड़ते हैं और सभी स्थिर वस्तुएं, जैसे तट रेखा आदि, अचल नजर आती हैं।

वायुयान में अवलोकी को आस-पास से भी लगाया जा सकता है (इस दशा

में प्रति सेकण्ड एक चक्कर की रफ्तार होती है। इस प्रकार परदा नीचे की जमीन को भी अंधेरे या बादलों को भेदकर पुनरुत्पादित करता है—उसपर स्थित नगर बंदर, नदियां, पहाड़, झीलें आदि भी दिखाई पड़ते हैं। इसके अलावा इसे जहाज के अग्र भाग में भी लगाया जा सकता है, ताकि यह हवा मे अवरोधों की सूचना देते हुए 'बादल और टकराहट की चेतावनी' प्रदान करता रहे। इसके अन्तर्गत ठोस वस्तुएं जैसे अन्य कोई वायुयान ही नहीं आते, बल्कि कपासी मेघ आदि बादल भी आते हैं, जो गंभीर उपद्रव उत्पन्न कर सकते हैं। और जिनसे विमान चालकों को बचना चाहिए, हवाई राडार ऐसे बादलों की प्रतिध्वनियों को 50 मील या उससे भी दूर से ही पकड़ सकता है और साथ ही वायुयान के लिए खतरनाक सिद्ध होने वाले पर्वतों की प्रतिध्वनि भी पकड़ सकता है। हवाई ट्रांसमीटर और रिसीवर एक घूर्णाक्ष स्थिरक से सयुक्त होते हैं, जो विमान की गति से निरपेक्ष—विमान चाहे ऊपर चढ़ रहा हो, उतर रहा हो, मुड़ रहा हो या वापसी उड़ान पर आ रहा हो, उपकरण को सही स्थिति मे बनाए रखता है।

विशाल बन्दरगाह और हवाई अड्डे यातायात नियन्त्रण और सुरक्षा के लिए बहुत हद तक राडार पर निर्भर करते हैं। नाविक इसका प्रयोग सघन कुहरे मे भी अपनी सेवा जारी रखने के लिए करते हैं, शिकारी जहाज राडार परावर्तक की सहायता से मारी गयी व्हेलों को लक्ष करते हैं, ताकि उन्हें बाद में निकाला जा सके। ध्रुव प्रदेश के अभियान पर जाने वाले जहाज और हिमभेदी जहाज प्रवाही हिमपुंजों हिमशिलाओं और हिमशैलों को अलग-अलग पहचान सकते हैं—यहा तक कि जहाजों द्वारा बर्फ काटकर बनाए गए रास्ते भी राडार पर्दे पर देखे जा सकते हैं। हवाई और जमीनी राडार नक्शे उतारने और सर्वेक्षण करने में अत्यंत सहायक हैं। मौसम विज्ञान मे एक राडार परावर्तक सहित उड़ने वाले 'रेडियो सोन्दे' गैस-गुब्बारे मौसम की स्थिति का पता लगाने का काम करते हैं और अमूमन रेडियो ट्रांसमीटर भी वायु-मंडल मे भेजे जाते हैं, जो धरती पर स्थिर केन्द्रों द्वारा आविष्कार के काम में आते हैं···राडार प्रतिध्वनि तकनीक के शान्तिकालीन उपयोगों में से ये कुछ हैं। पुलिस वाले इनकी मदद से तेजी से मोटर चलाने वालों को पकड़ सकते हैं। भूगर्भ वेत्ता खनिज भंडारों का पता लगा सकते हैं, मछुए अपने शिकार की टोह ले सकते हैं। किसी वायुयान की सुगठा की तुगतामापी के राडार के पटल पर देखा जा सकता है, और आजकल समुद्रतल की गहराई का पता भी प्रायः राडार तरंगों के जरिये समुद्री प्रतिध्वनि मापन से लगाया जाता है। पहले यह काम पराश्रव्य तरंगो से, अर्थात् अत्यधिक आवृत्ति वाली ध्वनि तरंगों से किया जाता था, जिन्हें मनुष्य सीधे अपने कान से नहीं सुन

सकता था (इन्हें कतिपय मणिभों जैसे क्वार्टज पर विद्युत् धारा को प्रवाहित करके उत्पन्न किया जा सकता है)। प्रकृति में लाखों वर्षों से पराश्रव्य 'राडार' का प्रयोग चमगादड़ों द्वारा किया जाता रहा है। रात्रि में उड़ते हुए वे लघु चीखें भरती रहती हैं, जिनकी आवृत्ति अत्यन्त ऊंची होती है (प्रति सेकण्ड 50,000 आवृत्ति के लगभग), और लौटती हुई प्रतिध्वनियां, जिन्हें वे ध्वनि की तरह सुन सकती हैं, उन्हें उनके उड़ान के पथ में मौजूद अवरोध और उनकी दूरी भी बता देती हैं। इस प्रकार हम आधुनिक समय में 'राडार-प्रणाली' का प्रयोग करते हुए चमगादड़ों के होश उड़ा सकते हैं।

राडार और रेडियो तकनीकों से यान संचालन के विविध प्रकार के विस्मयकारी सहायक उपकरण, खासकर वायु परिवहन के क्षेत्र में विकसित किए गए हैं। उनमें से ज्यादातर धरती पर स्थित केन्द्रों से रेडियो के प्रेषण से काम करते हैं, जिनसे यान चालक को अपने तात्कालिक स्थान और भावी यात्रा-पथ की सूचना मिलती है, उनमें एक 'प्रधान' और पथ के एक ओर या दोनों सिरों पर एक या दो 'अनुवर्ती' ट्रांसमीटरों का इस्तेमाल किया जाता है इस प्रकार एक अदृश्य त्रिकोण का ढांचा खड़ा हो जाता है, जिससे यान-चालक को अपनी अवस्थिति पर्दे पर या अन्य किसी चित्र उतारने वाले माध्यम पर ज्ञात हो जाती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटेन में विकसित की गयी डेक्का प्रणाली को देश-विदेश में सर्वत्र श्रेष्ठ माना जाता है। यह उड़ते हुए वायुयान की अवस्थिति को चार प्रेषियों की सहायता से, जो रेडियो रश्मियों के दो अति परवलय बनाते हैं, तीन आयामों अक्षांश, देशान्तर, और तुंगता—में दर्शाता है। इनके निष्कर्षों को काकपिट में डायलों पर एक नजर में देखा जा सकता है। इसमें अधिक से अधिक कुछ गजों का ही अन्तर आ सकता है अधिक का नहीं। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान लन्दन और हालीवुड में हार्वी श्वार्ज और विलियम ओ'ब्रियन नामक दो युवा वैज्ञानिकों ने इस प्रणाली का विकास किया। नारमैण्डी में सहबद्ध लड़ाई में उतरने के दौरान डी-दिवस के सांघातिक परीक्षण में इसने अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित की थी।

एक युद्धोत्तर प्रणाली जिसकी सर्जना मार्कोनी तथा आर० सी० ए० के इंजीनियरों ने की, डोप्लर सचालन यन्त्र है, जिसके लिए किसी स्थल केन्द्र की आवश्यकता नहीं होती। इसमें उन्नीसवीं शताब्दी में आस्ट्रिया के भौतिकविद क्रिश्चियन डोप्लर द्वारा आविष्कृत एक सुप्रसिद्ध सिद्धान्त का उपयोग किया गया है। जब कभी कोई रेल इंजन सीटी बजाता है या कोई मोटर चालक हार्न देता है, तो हम स्वयं भी इसे लक्ष्य कर सकते हैं कि जब तक ध्वनि हमारी ओर

आती होती है तब तक उसकी उच्चता उस समय की अपेक्षा अधिक प्रतीत होती है जब कि यह हमारे पास से आगे बढ़ने लगती है। ध्वनि तरंगों की ही भांति विद्युत्-चुम्बकीय तरंगें और प्रकाश तथा रेडियो की तरंगें भी इसी नियम का अनुवर्तन करती हैं। जब तक स्रोत दर्शक के पास पहुंचता होता है, तब तक इसकी आवृत्ति अधिक ऊंची प्रतीत होती है और जब उससे आगे बढ़ती है तब अपेक्षाकृत कम। विमान-संचालन की डोप्लर-प्रणाली में इस प्रभाव का भरपूर उपयोग किया गया है। रेडियो तरंगों की दो रश्मियां फ्यूजलेज के नीचे के ट्रांसमीटरों से धरती पर प्रक्षेपित की जाती हैं, अग्रिम रश्मि धरती पर विमान से कुछ आगे टकराती है और पिछली रश्मि कुछ पीछे। प्रति सेकण्ड ये दोनों हवाई अड्डे से स्टारबोर्ड तक आती जाती रहती हैं। अग्रिम रश्मि के संकेत जब विमान को परावर्तित होते हैं, तो इनकी आवृत्ति धरती पर इसकी गति के अनुपात में ही जाती है, और पिछली रश्मि के संकेत उतने ही घट जाते हैं। इन दोनों
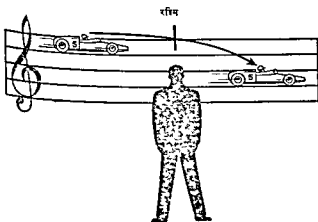
डोप्लर प्रभाव

के अन्तर की गणना स्वचल रीति से हो जाती है जिससे चालक को विमान की बिलकुल सही गति का और भटकाव के कोण का पता चल जाता है जिससे वह अपनी दिशा में तदनुरूप सुधार करता है।

वी॰ एल॰ एफ॰ अथवा अ॰ म॰ आ॰ (वेरी लो फ्रिक्वेंसी अथवा अति मन्द आवृत्ति) प्रणाली का विकास रायल एयरक्राफ्ट एस्टैब्लिशमेंट, फार्नबरो

ने किया, जो अतिशय दीर्घ रेडियो तरंगों के सहारे काम करती है जिनके तरंग-शिखर परस्पर दस मील अलग होते हैं। विमान में लगा एक यंत्र स्वचल रीति से प्रति सेकण्ड तरंगों की संख्या की गणना करता जाता है, और इससे चालक अपनी अवस्थिति का सही निश्चय कर सकता है। बी० एल० एफ० के छह केन्द्र दुनिया के चतुर्दिक इस तरह स्थित हैं, कि चालक किसी भी समय इनमें से तीन के संकेत पा सकता है और ये पूरे अन्तर्राष्ट्रीय जगत को घेरे हुए हैं।

उड्डयन और अवतरण के स्वचल साधन, जिनका लक्ष्य 'मानव त्रुटियों' का निराकरण है और जो कभी-कभी अच्छे से अच्छे विमान चालक को भी मात दे सकते हैं, आजमाये जा चुके हैं और युद्ध के अन्त से अब तक अनेक रूपों में उपयोग में लाए जा रहे हैं। पहले 'चालक-विहीन' विमान में चार इंजन लगे हुए थे और इसका नाम 'स्काई मास्टर' था। विमान ने अटलांटिक पर उड़ान भरी थी और इसकी 2400 मील की पूरी उड़ान में इसके कंट्रोल पर किसी आदमजाद का हाथ तक नहीं पड़ा। एक दाब बटन के दबाए जाने के साथ ही इसमें पहले से लगे एक स्वनियंत्रित 'मस्तिष्क' ने कार्यभार सम्भाल लिया। उसी ने विमान को उड़ाया, आरोहण कराया, सम पर स्थापित किया, नीचे की डुबकी लगाई और जमीन पर उतारा और धरती का स्पर्श होने पर ब्रेक लगाने तक का काम किया।

सैनिक और असैनिक विमानों में अब स्वचल चालक अपवाद नहीं रह गए हैं, बल्कि आम होते जा रहे हैं, पर 'अंधे' अवतरण की प्रणाली का आज भी झिझक के साथ ही प्रयोग किया जा रहा है। 1966 में एक ट्राइडेंट विमान ने लन्दन हवाई अड्डे पर कुहरे में प्रयोग के तौर पर छह बार अवतरण किए और इसके कुछ ही माह बाद न्यूयार्क के केनेडी हवाई अड्डे पर एक बोइंग 727 विमान घने कुहरे मे 98 यात्रियों के साथ चालक के हस्तक्षेप के बिना निर्देशित और नियंत्रित होकर उतरा। कुछ ही समय के बाद आज के हवाई अड्डों के कण्ट्रोल टावर (नियंत्रण बुर्जों) और विमान के काकपिट के बीच रेडियो वार्तालाप पर आधारित अवतरण प्रणाली का स्थान स्वचल अवतरण ले लेगा अभी अवतरण प्रणालियों मे सबसे निरापद रायल एयरक्राफ्ट एस्टैब्लिशमेंट, बेडफोर्ड द्वारा विकसित प्रणाली है, जिससे चालक के रंचमात्र हस्तक्षेप के बिना ही किसी यान को नीचे उतारा जा सकता है। इसमें धावन-पथ के दोनों ओर एक जोड़ा केबल बिछा दिए जाते हैं जिनमें बिजली संचारित रहती है जिसे विमान के ग्राही यंत्र (रिसीवर) पकड़ लेते हैं। इससे स्वचल नियंत्रण गीयर को धावन पथ के बीच में विमान को उतारने में सहायता मिलती है। एक रेडियो तुंगतामापी

(आल्टीमीटर) विमान के अवतरण को नियंत्रित करता है जिसकी माप में दो फुट से अधिक का हेर फेर नहीं हो सकता। किसी अच्छे से अच्छे विमान चालक से भी इतना हेर फेर होता ही है। अपनी उतार के अन्तिम 250 फुटों में विमान एक अत्यन्त जटिल सर्वो यंत्र-प्रणाली द्वारा लाया जाता है, जिसे ऊंचाई और धावनपथ की दूरी के सम्बन्ध में विमान में ही लगे यंत्रों से निरन्तर सूचना मिलती रहती है।

इन दोनों के बीच एक तीसरी प्रणाली आई० एल० एस०। इन्स्ट्रूमेंट लैंडिंग सिस्टम अर्थात् यान्त्रिक अवतरण प्रणाली है, जिसका आज सबसे व्यापक प्रयोग किया जाता है। इसमें धरती से रेडियो संकेत दिए जाते हैं जो काकपिट के सूइयों को चालित करता है, इनसे चालक को अपेक्षित सूचना मिलती रहती है और ये अवतरण में उस समय तक उसका मार्ग दर्शन करते हैं, जब तक वह निरापद भाव से धावन पथ को स्पर्श नहीं कर लेता। सूचना काकपिट में एक पारनिर्देशी (क्रास प्वाइंटर मीटर) में प्रदर्शित होती है। चालक को उस दशा में श्रव्य और दृश्य संकेत भी धावन पथ के स्पर्श बिन्दु से कुछ सुनिश्चित दूरियों पर मिलते हैं, जब विमान सही दिशा में होता है। जैसे ही उसकी दृष्टि धावन पथ पर पड़ती है—तथाकथित निर्णायक ऊंचाई 250 फुट से कम नहीं होती—वह यान्त्रिक अवतरण प्रणाली की परवाह नहीं करता। यदि वह धावन पथ को नहीं देख पाता तो या तो उसे दुबारा उतरने का प्रयत्न करना होता है अथवा किसी दूसरे हवाई-अड्डे की ओर चल देना होता है। जहां यान्त्रिक अवतरण सीधे स्वचल चालक पर प्रभाव डालती है, वहां चालक निर्णायक ऊंचाई के बाद नियन्त्रण अपने हाथ में ले लेता है।

अंध-अवतरण का प्रयोग आम हो जाने के बाद न केवल चालकों और निर्देशकों को विमान-चालन के सबसे कठिन कार्य से मुक्ति मिल जाएगी, अपितु इसने हवाई अड्डों के नियंत्रकों को भी बहुत बड़े दिमागी बोझ से छुटकारा मिल जाएगा। वे विमान के अवतरण का अनुवर्तन अपने विविध राडार पर्दों पर ही कर सकेंगे और इसके लिए उन्हें मौखिक निर्देशन का अतिरिक्त काम नहीं करना पड़ेगा। उस समय राडार परियात नियंत्रण में आज की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण काम करता होगा।

राडार यही काम स्थल पर सड़की परिवहन के नियंत्रण में भी करेगा। लन्दन परिवहन ने एक राडार अवलोकी का विकास किया है, जो बसों को उनके मार्ग पर अनेक स्थलों पर पहचान लेता है। इन गुजरती हुई बसों की बगल में उनके विशेष कूट अंकों की प्लेटें लगी रहती हैं जिन पर राडार की रश्मियां

प्रदर्शित होती है और फिर मुख्यालय में एक चीन्ह चार्ट पर उनकी संख्या और अवस्थिति रेकार्ड हो जाती है। इससे निरीक्षकों को फोन से इस बात की हिदायतें देना सम्भव होता है कि वे बस की रफ्तार बढ़ा या घटा दें अथवा समग्र परिवहन की स्थिति को ध्यान में रखते हुए उन्हें मोड़ दें।

समुद्र में चलने वाले जहाजों में 'स्वचल कर्णधार' किसी मनुष्य की तुलना में अधिक सुचारु रूप से उनको चला सकते हैं। यह एक आधुनिक जाइरो कम्पास से जुड़ा होता है, जो किसी मुनाही टाइप राइटर से बड़ा नहीं होता। इस पर जहाज के कम्पन या गति का कोई असर नहीं पड़ता और यह हर आकार के पोत के उपयुक्त होता है। तट पर लगे 'अनुवर्ती' राडार रिपीटर या पहले से निर्धारित हिदायतों का अनुवर्तन करते हुए स्वचल कर्णधार अपने मार्ग पर अविचल बढ़ता रहेगा, पर इसमें साथ ही समुद्र की अवस्था के लिए भी कुछ छूट होगी—वस्तुतः समुद्र जितना ही अधिक विक्षुब्ध होगा यह किसी मानव कर्णधार की तुलना में उतनी ही अच्छी तरह काम करेगा। इन सभी लक्षणों से युक्त पहला स्वचल पोत अमरीका का 12000 टन भार का मालवाही पोत मोर्माकार्गो था जिसने यूरोप की अपनी पहली यात्रा 1964 में सम्पन्न की थी। इसके दो साल बाद फ्रांस का 65000 टन भार का टैंकर एस० एस० दोलाबेला सेंत नात्सेयर से छूटा था। इसके विद्युत् संयंत्र पूरी तरह स्वचालित हैं जो सेतु (ब्रिज) के दाब बटन पैनल से नियंत्रित किए जाते हैं। अमरीकी पोत में एक व्यक्ति इंजिनकक्ष के डायलों पर नजर रखता है, पर फ्रांसीसी पोत में यह काम भी छह सचरणशील आंखों वाले एक टेलीविजन कैमरे द्वारा किया जाता है। तापमान, दबाव, द्रव-स्तर मोटर बन्द होना इन सबका अवलोकन और अंकन स्वचल रीति से किया जाता है और संकट की स्थिति में ज्योंही सेतु पर लगे कन्सोल में खतरे का स्रोत दृष्टिगोचर होता है, एक खतरे की घण्टी बज उठती है। इन पोतों के कम से कम आधे कर्मचारी स्वचालन के कारण बेकार बन गए हैं। और इस तरह हम उस जादुई शब्द पर पहुंच गए हैं जो इतनी सामाजिक बेचैनी और श्रमिकों के फसाद का कारण बना आखिर इस 'स्वचालन' शब्द का अर्थ क्या है?

जिस समय मनुष्य दुर्भाग्यवश ईडन के बाग को छोड़ने और अपनी जीवन रक्षा के लिए काम करने को बाध्य हुआ, उस समय से ही उसके मन में यह लालसा विद्यमान रही है कि उसके पास कोई ऐसा होता जो कष्टकर और आयासकर कामों को कर देता—कोई इंजन, कोई दुष्ट दानव, भूत, पिशाच। गुलाम की प्रथा ने कम से कम कुछ लोगों को यह अवसर प्रदान किया कि वे अपना

काम किसी दूसरे से करा सकें। इस दिशा में धन के संग्रह ने भी बहुत अधिक सहायता की—पर किसी भी समाज में बहुत थोड़े ही ऐसे आदमी मिल सकते थे, जो धनी थे और इसलिए चैन की सांस ले सकते थे। अधिकांश लोग सदा से गरीब रहे हैं जिन्हें कठिन श्रम करना पड़ता है। हम यह देख चुके हैं कि कैसे सभ्यता के उषाकाल से ही कमर तोड़ काम करने के प्रति मनुष्य की अनिच्छा ही उसकी आविष्कार-बुद्धि की जननी रही है। गो प्राचीन काल में प्रगति बहुत मन्द रही और अठारहवीं शताब्दी में आकर ही मशीनीकरण का युग आरम्भ हुआ।

अभी कुछ दशक पहले तक उद्योगविद्या के विशेषज्ञों का यह विश्वास था कि मशीनीकरण उस समय पूरा हो जाएगा जब यथासम्भव उन सभी कामों को जिन्हें आज मनुष्य करता है, मनुष्य द्वारा चालित मशीनें करने लगेंगी। पर आज हम अनुभव करते हैं कि किसी मशीन को चलाने के मनहूस काम में लगा हुआ कोई मानव कर्मचारी उससे कम गुलाम नहीं है जितना जहाजों पर पुराने जमाने में काम करता हुआ कोई गुलाम था, गो यह जरूरी नहीं कि उसका श्रम केवल शारीरिक ही हो। अतः हमारे युग की प्रवृत्ति मशीन चालक को एक यन्त्रविद में, एक प्रविधिज्ञ में बदलने की ओर है, और है मशीन को अपना काम यथासम्भव स्वयं करने को छोड़ देने की ओर।

केवल स्वचालन के विकास से ही इस दूसरी औद्योगिक क्रांति को सम्भाव्य बनाया जा सकता है। जिस तरह रेलवे के आगमन ने तांगे और घोड़ा गाड़ियों के चालकों और घोड़े का व्यापार करने वालों के लिए कुछ मुश्किलें खड़ी की थीं और अशांति उत्पन्न की थी, उसी तरह यह भी आज कुछ कठिनाइयां और सामाजिक अशांति पैदा कर सकता है। पर इस प्रकार की प्रत्येक क्रांति से नये और अपेक्षाकृत आसान काम पैदा होते हैं, काम के घण्टे कम होते हैं, जीवन स्तर ऊपर उठता है और वर्तमान क्रांति ने ऐसा करना आरम्भ कर दिया है।

स्वचालन कोई रहस्यमय अद्भुत की वस्तु नहीं है, यह एक मशीनी साधन के अपने ही द्वारा नियन्त्रित होने से रत्तीभर भी अधिक या कम नहीं है। जब डेनिस पापा ने अपना 'बोन डाइजेस्टर' तैयार किया था, तो उसने इस आरम्भिक कुकर में मात्र एक सुरक्षा वाल्व लगा दिया था कि यह फटने और उफन न जाए और उसने छोटा-सा वजनी स्टापर (ढक्कन) लगा दिया था जिसका काम यह था कि जब दबाव बहुत अधिक बढ़ जाए, उस समय इससे एक छोटा छेद खुल जाए ताकि कुछ भाप उसमें निकल जाए और दबाव कम हो जाने के बाद यह फिर स्वयं बन्द हो जाए। जेम्स वाट ने एक ऐसी युक्ति निकाली थी कि

उसका भार इंजन बहुत तेज न चलने पाए—इसको उसने 'गवर्नर' की संज्ञा दी थी और यह स्वचालन का ही एक अन्य हथकण्डा था। इसमें इंजन के तंत्र के साथ घूमने वाले लीवरों पर दो उड़न छर्रे लगा दिए गए थे। जब चाल तेज हो जाती थी, तब ये छर्रे अपकेन्द्री बल से बाहर और ऊपर की ओर सरक जाते हैं और इस तरह स्टीमवाल्व से जुड़े हुए लीवर को खींच देते हैं। इस तरह वाल्व धीरे-धीरे बन्द हो जाता है, इंजन की रफ्तार घट जाती है, उड़न छर्रे फिर नीचे सरक आते हैं और फिर स्टीमवाल्व खुल जाता है।

स्वचल नियंत्रण के इन आरम्भिक नमूनों में भी हम स्वचालन के सिद्धान्त मापन, नियंत्रण, भूल सुधार—को देख सकते हैं। मापन के साधन मानवीय ज्ञानेन्द्रियों में से किसी न किसी का स्थान ले लेते हैं। ये हैं चौकसी रखने वाली आंख, सुनने वाले कान, संदिग्ध गंध का पता लगाने वाली नाक, किसी वस्तु के अधिक गर्म या ठण्डा हो जाने पर उसका अनुभव करने वाली त्वचा, किसी चीज की मोटाई, चिकनापन या खुरदरापन भांपने वाली उंगलियां। इन संवेदनाओं को मापने के साधनों—जैसे मापने के दण्ड, गज, तापमापी, वर्णमापी आदि का विकास शताब्दियों के दौरान हुआ है, पर ये जिन वस्तुओं को मापते हैं उनको देखते रहने के लिए मानव मस्तिष्क की और उस निर्णय के अनुरूप काम करने के लिए हाथों की आवश्यकता बनी रहती है।

अतः स्वचालन का लक्ष्य है इन युक्तियों को स्वतः ही चलाना। उदाहरण के लिए एक तापस्थापी रेफ्रीजिरेटर में या गर्म पानी की टंकी में ताप का निर्धारण करता है, और जब तापमान एक पूर्व निर्धारित ऊपरी या निचली सीमा पर पहुंच जाता है, तब ठण्डा या गर्म करने वाला यंत्र चालू या बंद हो जाता है। इससे तापमान कुछ कमोबेश स्थिर बना रहता है। स्वचालन का एक दूसरा साधन है, प्रकाश-विद्युत् सेल जो अपने ऊपर पड़ती हुई प्रकाश की मात्रा के अनुसार बिजली की एक करेंट में कम या अधिक प्रतिरोध उत्पन्न करती है और जिसका प्रयोग किसी व्यक्ति के दरवाजे पर पहुंचते ही प्रकाश रश्मि में बाधा उत्पन्न होने के कारण दरवाजा खोलने के लिए या किसी कौंधती हुई भट्ठी को देखते रहने और जब कौंध बहुत अधिक बढ़ जाए तब, विद्युत् हीटर की करेंट को बन्द करने के लिए किया जा सकता है।

रेडियो सक्रिय आइसोटोपों के मापक यंत्र के रूप में प्रयोग का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। केवल संयुक्त राज्य तेल उद्योग में ही उसके अनुमान के प्रतिवर्ष तेल कूपों के उद्दीपन और लागिंग में, शोधन और पाइप लाइनों के प्रवाहण में प्रति वर्ष 20 करोड़ डालर की बचत हुई है। इनमें ट्रेसर तकनीक बहुत व्यापक रूप

से प्रयोग होता है। इस तकनीक में बहुत थोड़ी मात्रा में आइसोटोप तेल या रासायनिक द्रव में मिला दिया जाता है कि उनके अवशोषण की दर को मापा जा सके या यदि द्रव कहीं से रिस रहा हो तो उसका पता लगाया जा सके। आइसोटोप सिगरेट या साबुन आदि की बन्द डिब्बियों मे झाक सकता है और यह जाच कर सकता है कि वे अच्छी तरह भरे गए हैं या नही। इसके निमित्त, बीटा कण सबसे उपयुक्त विकिरण है। बीटा कण तेज गतिवाले इलेक्ट्रॉन है जो गत्ते या धातु की पतली पत्तियो को पार कर जाते हैं। किसी वस्तु की मोटाई को पार करते समय किसी किरण मे बीटा कणों की संख्या निरन्तर कम होती जाती है, क्योंकि इनमे से कुछ अवशोषित हो जाते हैं और इनके पार जितना विकिरण पहुंच पाता है, उससे मोटाई का पता चल जाता है। एक सरकती हुई पट्टी के एक ओर विकिरण स्रोत की बहुत मामूली-सी व्यवस्था रहती है। पट्टी पर पैकेट रखे होते हैं। एक परिचायक (डिटेक्टर) जो गाइगर गणक की अनुकृति पर बना होता है, दूसरी ओर इन पैकेटों मे रखे सामानो का अनवरत नियत्रण स्वचल रीति से करता जाता है। जो पैकेट समुचित भरे नही होते हैं उन्हे एक यंत्र अलग फेंक देता है। टिनों या बोतलो मे रखे द्रवों का नियत्रण भी इसी सिद्धात पर होता है। सरकती हुई धातु की तावे, कागज, प्लास्टिक, रबर आदि की मोटाई का भी अनवरत माप करते रहने के लिए भी आइसोटोपो का प्रयोग होना है। जिसमे वस्तु के साथ किसी प्रकार का शारीरिक स्पर्श नहीं होता। यहां भी सरकती हुई सामग्री के एक बाजू पर विकिरण का स्रोत लगाया जाता है। यह प्राय: एक कांच की नली जैसी शक्ल का होता है जो पूरी मशीन की चौड़ाई मे फैला रहता है और दूसरी ओर परिचायक यत्र लगा होता है। परिचायक एक प्रतिसभरण (फीडबैक) पुर्जे से जुड़ा रहता है, ताकि उत्पादित सामग्री मोटाई का निरतर समायोजन होता रह सके।

मोटाई मापने का एक अन्य यत्र परावर्तन अथवा बीटा कणो को परावर्तित करने की रीति पर निर्भर करता है। परावर्तन की दर भी इसकी मोटाई पर निर्भर करती है। यह पद्धति विशेष रूप मे वहां उपयोगी होती है, जहां इस्पात या प्लास्टिक के ऊपर रोगन, जस्ता, टिन या किसी अन्य पदार्थ के लेप की मोटाई मापनी हो। गामा किरणें, जो कि एक्स किरणो के ही समान होती है, उस पदार्थ द्वारा परावर्तित होती है। इनका प्रयोग गर्म वेल्लित इस्पात की चादर और बन्द नली और टकी की दीवारो की मोटाई मापने के लिए होता है।

ये उपकरण अपेक्षाकृत सादे होते है, पर अनेक ऐसे है जो मापने, निदेशित करने और किसी प्रक्रिया के दोषो को दूर करने वाले यत्रों के जटिल उदाहरणों

गे बने होते हैं। पर यदि इनमें से कोई यंत्र बिगड़ जाए तो इसकी चेतावनी की सीटी बजाने के लिए कोई स्वचल प्रहरी भी अवश्य होना चाहिए। ऐसी अवस्था में मानव मस्तिष्क या हाथों को इस काम को अपने जिम्मे लेना होगा। वस्तुतः अधिकांश स्वचल प्रणालियों में ऐसी आपातकालीन युक्तियां लगी रहती हैं जो अपने मानव प्रभु को सहायता के लिए बुला सकें, क्योंकि कुछ स्थितियां ऐसी हो ही सकती हैं, जिनका दक्ष से दक्ष मशीन भी सामना न कर सके। आखिर इन सभी को सोचा गया तो मनुष्य के ही दिमाग ने है।

फिर भी इलेक्ट्रॉनिकी के सहारे हमारे मस्तिष्क को भी अधिक ज्ञान मंडित किया जा सकता है। भाषा प्रयोगशाला, तथा इलेक्ट्रॉनिक पद्धति से शिक्षण के साधनों के अन्य रूप अब विश्व के अनेक स्कूलों, विश्वविद्यालयों और प्रशिक्षण केन्द्रों में अपना स्थान बना चुके हैं। इलेक्ट्रॉनिक शिक्षण मशीनों से 'पुरोग अधिगम' में प्रत्येक छात्र अपनी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ सकता है। लक्ष्य को प्राप्त करने के अनेक तरीके हैं, पर उसका सिद्धान्त यह है कि प्र: छात्र या छात्रा का अपना निजी शिक्षण सूचना का स्रोत होता है जैसे टेप या टेलीविजन का पर्दा, जिस पर पाठ पहले से अभिलिखित होता है, खिंच हुए पेनल होते हैं जिन पर उत्तर किसी बटन को दबाकर दिया जाता है अध्यापक के शब्दों को दुहराते हुए अपनी ही आवाज को सुनने के लिए रेकार्डर होते हैं, जो उसकी समस्याओं के समाधान प्रस्तुत करते हैं।

आप अपने घर में कोई नयी स्वचल युक्ति लगा सकते हैं, या किसी स्वचालक से किसी विमान का नियंत्रण एक क्षण की सूचना पर ही करा सकते हैं पर किसी पूरी फैक्टरी को बात की बात में स्वचल नहीं बनाया जा सकता यह क्रांति वस्तुतः हमारी शताब्दी के आरंभ से चल रही है। स्वचल मशीनें और प्रणालियां धीरे-धीरे एक उद्योग से दूसरे उद्योग, एक उत्पादन प्रक्रिया से दूसरी उत्पादन प्रकिया की ओर बढ़ती चली जा रही हैं। अब मशीनों के पुर्जों से नाना प्रकार के प्रचालनों को म्यूजिक बाक्स (संगीत बाक्स) के सिद्धांत पर कराया जा सकता है, जिनमें एक घूमते हुए सिलिंडर पर लगा कांटा टोन उत्पन्न करने वाले पत्तों से एक निश्चित क्रम में जा लगते हैं जिससे हम उस विशेष संगीत को सुनते हैं। उदाहरण के लिए विद्युत शक्ति से युक्त एक खराद इस संगीत-बाक्स की युक्ति से ही अर्ध-स्वचालित बनाया जा सकता है, जिसमें कैम या चक्र तवे क्रमशः एक-एक यंत्र को चालित कर देंगे। पर इन सामानों को रखने, इसे बांधने और प्रचालन के बाद इसे दूसरी मशीन पर स्थानान्तरित करने के लिए मानव कर्मचारी की आवश्यकता तो फिर भी रहेगी। विविध उत्पादनों को एक प्रक्रिया

से दूसरी तक पहुंचाने का झमेला इंजीनियरों को विशेष रूप से समय का अपव्यय प्रतीत होता है। इस समस्या का एक समाधान है वाहक-पट्टा-प्रणाली, जो उत्पादन को स्वयं कर्मी के पास पहुंचा देता है, न कि उसे स्वयं जाकर इसे लाना पड़ता है। पर जहां भारी-भरकम सामानों को स्थानान्तरित करना हो और बहुत लम्बे प्रचलन करने हों, वहां यह प्रायः अनुपयुक्त सिद्ध होता है।

इस तरह एक कमोवेश स्वचालित कामों की शृंखला में एक कड़ी जो गायब है, वह है सामानों को लाना हटाना। आदमी के हाथों और आंखों का स्थान लेने वाले अनेक साधनों का नियोजन किया गया है, जैसे सचल पट्टे, नालियां, ट्रालिया, क्रेन, मशीनी हाथ आदि, जो सभी स्वचल रीति से काम करते हैं। अब मशीनों को ऐसे उत्पादन मिलने लगे, जिन्हें मशीनी हाथों और उंगलियों ने जोड़ा है, ये ही उनको चला और छोड़ रही हैं तथा अगली अवस्था के लिए आगे बढ़ा रही हैं। फिर भी मशीनें पूरी तरह स्वतः सापेक्ष नहीं हो पाईं, इस पूर्णता को 'प्रतिभरण' तथा 'सर्व-तंत्र' द्वारा प्राप्त किया गया है। स्वचालन के विशेषज्ञों का कहना तो यहां तक है कि ये ही इसकी जान हैं, स्वचल उत्पादन के निर्णायक तत्त्व हैं।

इनको सहजता से समझने के लिए आइए, हम सबसे पुराने स्वचालित संयत्र, एक आधुनिक तेल-शोधक कारखाने पर दृष्टिपात करें। इसके एक सिरे पर कच्चे तेल के आसवनीय तत्त्व जाते हैं, एक उत्प्रेरक 'विस्फोटक' से इस पर उच्च ताप और दबाव पड़ता है और रासायनिक प्रक्रियाओं की एक शृंखला के बाद उत्पाद पेट्रोल के रूप में तैयार हो जाता है। किसी तेल-शोधक कारखाने की देख-रेख करने के लिए आधे दर्जन व्यक्ति पर्याप्त हैं, कारण, इसके भीतर अलग-अलग कार्य-व्यापार भीतरी यंत्रों द्वारा ही नियंत्रित होते हैं। उदाहरण के लिए यदि किसी एकक में द्रवों और गैसों का तापमान सामान्य से ऊपर चला जाता है तो वह एक तापस्थायी 'स्वचालित केन्द्र' को इसकी सूचना पहुंचा देगा, जहां से तापन यंत्र को इस बात के विद्युत आदेश पहुंच जाएंगे कि वे अपने उत्पादन का ताप घटा दें। इसी तरीके से दबाव, मात्रा, प्रवाह की दर का भी नियंत्रण होता है। जहां मात्र एक विद्युत परिपथ को खोलने या बंद करने के द्वारा सुधार नहीं किया जा सकता, वहां 'सर्वो तंत्र' अपना काम करती है। नियंत्रण केन्द्र के आदेशों पर काम करते हुए ये गैस या, द्रव चालित अथवा 'यांत्रिक साधन' प्रायः बिजली के सर्वो मोटरों द्वारा चालित हो कर वाल्वों के छिद्रों को घटा या बढ़ा देते हैं, ... को तेज या मंद कर देते हैं, इस या उस काम को चालू या बंद

किसी इस्पात के बेलन मिल में भट्ठी से निकलने वाले लाल-लाल बड़े ईंटाकार बेलनों की पकड़ में आ जाते हैं, जो इन्हें कुछ एक बार आगे-पीछे सरकाते हुए कुछ कम मोटी एक लंबी पट्टी में बदल देते हैं। यह पट्टी सरककर आगे की मशीनों में चली जाती है जो इसे काट छाँटकर ठीक कर देती है और इस बीच भट्ठी से दूसरा बन्ना निकल आता है। विद्युत-चालित मोटर बेलनों को चलाते हुए हजारों अश्वशक्ति उत्पन्न कर लेते हैं, पर वे एक सेकण्ड के भीतर ही पट्टी को एकदम स्थिर कर देते हैं। सर्वोयंत्र प्रणाली के साथ प्रतिसंभरण प्रणाली चालों का नियंत्रण करती है। एक टैकोमीटर (गतिमापी) बेलन की गति की निगरानी करता है जिसे इंजीनियर पहले से ही उसमें लगाए रहते हैं। पट्टी की अपेक्षित मोटाई और लंबाई को भी मापक यंत्र ही मापते हैं। स्थिर मानक से तनिक भी विचलन होने पर इसकी सूचना नियंत्रण केन्द्र को विद्युत संकेत के रूप में मिल जाती है और इस बात के भी आदेश वहाँ से तुरन्त विद्युत संकेतों से ही जारी हो जाते हैं कि बेलनों की चाल, पट्टी पर दबाव, या कटाई के विरामों का समायोजन कर लिया जाए। सर्वोयंत्र से यह काम उससे कहीं अधिक तेजी से किया जाता है जितनी तेजी से वह मनुष्य के हाथों हो पाता।

ये अपेक्षाकृत सादे किस्म के उदाहरण है, पर ये उस सिद्धान्त की झलक दे सकते हैं जिसपर स्वचल उत्पादन आधारित है। कार उत्पादन में विविध परिचालनों को स्वचालन की एक पूरी शृंखला द्वारा जोड़ने वाला फैक्टरी एकक फोर्ड कम्पनी ने क्लीवलैंड, ओहायो में 1952 में तैयार कराया था। यहां मनुष्य के हाथों के स्पर्श के बिना ही प्राथमिक ढलाई से छ इंजन वाले सिलेन्डर-ब्लाक बनाए और सवारे जाते थे तथा साथ ही इनकी जाच भी हो जाती थी। इसमें बयालीस स्वचालित मशीनें 500 प्रकार के विभिन्न काम करती थीं, जिसमें जोड़ाई और ब्लाकों की अन्तिम आजमाइश भी शामिल है। परीक्षण करने वाले यंत्र हाथ और आंखें यदि किसी भी पुर्जे को दोषपूर्ण पाएं तो उसे सर्वो-तंत्र से एक द्रवचालित भुजा उठाकर जोड़ाई की पंक्ति से बाहर फेंक देते। इस प्रकार जो सिलेंडर ब्लाक पहले नौ घन्टों में तैयार हो पाता था, वह सिर्फ 15 मिनट में पूरा होने लगा।

अर्ध स्वचालित औजारों का जिक्र हम पहले कर चुके हैं। इतना तो निश्चित ही है कि कोई पूर्णतः स्वचालित मशीन म्यूजिक-बॉक्स की प्रणाली पर काम नहीं कर सकता। उसके लिए एक नियत्रण तंत्र की आवश्यकता होगी, जिसे अपने आदेश छिद्रित फोर्डों, छिद्रित या चुम्बकीय टेपों से प्राप्त हों। यह सिद्धान्त जितना नया प्रतीत होता है वस्तुतः उतना नया

स्वचालित री । रे न ंत्रित रन्दा मारने और चूड़ी काटने की मशीन
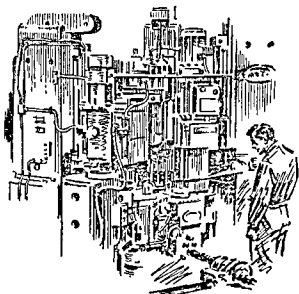
म में जोसेफ मेरी जैकुआ ने बड़े पैमाने पर रेशमी वस्त्रों के उत्पादन के लिए यांत्रिक करघा तैयार किया था, जो हाथ से नियंत्रित न होकर छिद्रित कार्डों नियंत्रित होता था। हमें यह भी मालूम है कि सर चार्ल्स ह्वीटस्टन ने तार रेषण की रफ्तार बढ़ाने के लिए 1867 में ही छिद्रित टेपों का प्रयोग किया (देखें अध्याय 2) केवल चुम्बकीय टेप से नियंत्रण करना अभी हाल में हुआ है। इस प्रकार के नियंत्रण वाले औजारों का प्रदर्शन सर्व प्रथम इस ब्दी के छठे दशाब्द के आरंभ में किया गया।

छिद्रित कार्ड, छिद्रित टेप या चुम्बकीय टेप द्वारा स्वचालित नियंत्रण में के रूप में आदेश दिए जाते हैं। संवेग-संख्याओं को रूपान्तरित करके सूचना माध्यम तैयार किया जाता है जिससे पत्र के छिद्रों अथवा विद्युत् चुम्बकीय तों से किसी कार्यांश के अन्तिम रूप का निर्धारण होता है। चालक के मात्र ा टेप को मशीन में घुमाकर चालन बटन को दबा देना भर होता है। बाद यांत्रिक नियंत्रण के अनुरूप मशीन स्वतः करती जाती है।

मशीन औजारों का इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण

ड्राइंग
आयोजना नोट
छिद्रित टेप
कम्प्यूटर
छिद्रित टेप
कम्प्यूटर-चुम्बकीय टेप
ड्राफ्ट्समैन
आयोजना इंजीनियर
सर्वो प्रवर्धक
सर्वो मोटर
औजारों में से एक की गति नियंत्रित है
नियंत्रक
त्रुटि संशोधित कर वापस पहुंचाना
गति नियंत्रण
मापन-एकक
= मनुष्य
नियंत्रण सूचना
मशीनी औजार
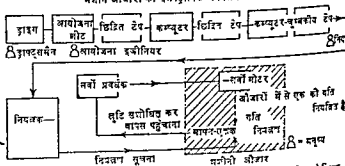
किसी मशीन को जिसको कर चालन के लिए डिजाइन (अभिकल्पित) किया गया या आंकिक नियंत्रण के लिए पुन.निर्मित करना अधिक व्ययसाध्य है। इसे आरंभ से ही निर्मित करना होता है और इसमें डिजाइन बनाने वाले को कर चालित नियंत्रणों का समावेश करने की इन्हें झंझट नहीं रहती। अंक-प्रणाली द्वारा नियंत्रित कल-पुर्जों की एक अनिवार्य विशेषता यह है कि उनमें प्रति सभा-रण के साधन अवश्य लगे होने चाहिए ताकि वे नियंत्रण खंड को जो कुछ काम हो चुका है, उसकी सूचना देते रहे। इसके बाद यह पूर्वनिर्धारित मानकों के अनु-सार स्वतः प्ररिचालित हो जाते हैं, और यदि कहीं कोई विचलन हुआ तो उसको स्वचल रीति से ही ठीक कर लिया जाता है टेप द्वारा कच्चे माल और नियामक तत्वों का स्थानान्तरण भी नियंत्रित हो सकता है। एक अत्यन्त उन्नत ग्राहक प्रणाली का विकास ब्रिटेन में हुआ जो एक सप्ताह आगे तक के कार्यभागों के संचयन, अधिग्रहण, संग्रह, परिवहन और प्रस्तुतीकरण का स्वचालित रीति से नियंत्रण कर सकती है।

कल-पुर्जों की एक पूरी शृंखला का नियंत्रण स्वचालन की इन एक या अधिक युक्तियों से हो सकता है। एक कार्य-भाग एक मशीन से दूसरे को जैसे ही स्थानान्तरित किया जाता है, नियंत्रण यंत्र भी तत्काल अपने पत्र या चुम्बकीय टेप के आदेश अगली मशीन को भेजने लगता है। दो मशीनों को एक ही काम पर एक साथ लगा देने से संभव होता है, यहां तक कि स्वचालित नियंत्रण प्रणाली को प्रत्येक मशीनी काम के लिए कल पुर्जों का चुनाव करने और यदि कोई कल बेकार हो जाए तो उसके बदले दूसरे को काम पर लगाने के लिए भी नियोजित करना संभव है।

यह प्रणाली, जिसे अनेक देशों और अनेक कारखानों में लागू किया जा चुका

है और जो अनेक प्रकार के उत्पादनों के लिए अनुकूल पडती है, परिचालना की देख-भाल के लिए किसी निर्देशक मस्तिष्क के बिना नही चल सकती। यह मस्तिष्क है 'इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर'।

हिसाब लगाने के लिए मशीनी साधन हजारो वर्षों से प्रयोग मे आते रहे हैं, जिसकी शुरुआत गिनतारे से होती है। गिनतारे से लेकर आज तक हजारों वर्षों से 'गणना' के लिए यंत्रों की सहायता ली जाती रही है, पर फिर भी गणना करने वाली पहली मशीन का आविष्कार ब्लेज पास्कल नामक एक फ्रांसीसी गणितज्ञ ने सत्रहवीं शताब्दी मे किया था। इसमे 0 से 9 तक के अंकों वाले पहिए लगे थे जिनकी सहायता से यह गुणा और भाग कर सकती थी। जर्मन दार्शनिक गॉटफ्रीद विलेम फान लीबनिटस ने एक मशीन तैयार की थी जो गुणा कर सकती थी। ये मामूली किस्म के यंत्र ही उस संगणक यंत्र के जनक थे जिसका विकास औद्योगिक और दफ्तरी काम-काज के लिए हमारी शताब्दी के पूर्वार्ध मे किया गया था और जिसकी आज भी बहुत अधिक माग बनी हुई है। इनमे से अनेक का चालन बिजली से होता है। पर ये इलेक्ट्रॉनिक संगणकों का मुकाबला नहीं कर सकते जिनका चालन इलेक्ट्रॉनिक वाल्व या ट्रांजिस्टर पर निर्भर करता है और जो एक नितांत भिन्न गणितीय सिद्धान्त पर काम करता है।

यह एक ऐसी मशीन है जो गणना की समस्याओं को बहुत तेजी से हल कर सकती है और जिसे एक ही क्रम मे अनेक लंबे कामों को करने के लिए 'पुरोमित' और 'समायोजित' किया जा सकता है। इसकी व्यवस्था ऐसी भी की जा सकती है कि कतिपय विशेष परिस्थितियो मे यह अपने कार्यक्रम को बदल सके। यह निर्णय तो ले सकती है पर 'सोच' नहीं सकती। इस दृष्टि से आमतौर पर प्रचलित 'इलेक्ट्रॉनिक मस्तिष्क' शब्द बहुत भ्रामक है। पर यह तथ्यों और हिदायतों को एक इलेक्ट्रॉनिक स्मृति मे रख सकता है और आवश्यकता पड़ने पर इस सूचना का उपयोग भी कर सकता है।

कम्प्यूटर बहुत तेजी से काम करता है। जोड़ने या घटाने का काम तो यह एक सेकंड के दस लाखवें अंश मात्र में कर लेता है और गुणा तथा भाग का काम सेकण्ड के कुछ हजारवें अंशों में। पर व्यवहार में इसे जो काम करने पड़ते हैं उनका यह मात्र एक अंश है। यहां इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर की प्रमुख विशेषता है: पूर्व निश्चित आदेशों में से विविध प्रकार की सूचनाओं का विश्लेषण, संयोजन, अभिलेखन और संयूचन। इसे आंकड़ों की तैयारी कहते हैं, जो अंकीय कम्प्यूटर का विशेष क्षेत्र है। इसके सिद्धांतों की व्याख्या एक शताब्दी पहले चार्ल्स बैबेज नामक एक अंग्रेज दार्शनिक के प्रोफेसर ने कर दी थी, पर इस तरह की इसके

पहली मशीन होवर्ड आइकेन नामक एक अमरीकी ने 1937 में बनाई। इसके सात साल बाद हारवर्ड ने 'मार्क I' अंकीय कम्प्यूटर निकाला जो हजारों की संख्या में पूरे संसार मे फैले हुए और अनगिनत प्रकार के काम करने वाले आधुनिक कम्प्यूटरों का दादा था। साइबरनेटिक्स का सिद्धांत अर्थात् इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण का विज्ञान जिसपर ये कम्प्यूटर आधारित हैं, मैसाच्यूसेट्स इंस्टीट्यूट के नोबर्ट वाइनर की देन है।

कम्प्यूटर में असंख्य वाल्व, ट्रांजिस्टर और दूसरे इलेक्ट्रॉनिक पुर्जे लगे होते हैं, जिन्हें एककों में गुंफित किया होता है। कम्प्यूटर की भाषा सूत्रवत होती है, इसे केवल दो शब्द मालूम हैं 'हां' और 'नहीं' अर्थात् 'धन' और 'ऋण' या आम आदमी की शब्दावली में 'करेंट' और 'करेंट का अभाव'। अतः कम्प्यूटर की गणित को सामान्य दशमलव प्रणाली के दस अंकों के स्थान पर केवल दो अंकों में संचार प्रणाली मे बदलना होता है। यह द्वैत अंकन प्रणाली, जिसे द्वयंगी तंत्र कहा जाता है, एक आधुनिक विकास है। इसके दो अंक हैं, 1 और 0 जिनका अर्थ है 'धन' और 'धन नहीं'। इसमें दशमलव अंक चिन्ह 0 तो शून्य ही बना रहता है और 1 भी 1 ही रहता है, पर 2 हो जाता है 10, 3=11, 4=100, 5=101, 6=110, 7=111, 8=1000 और 10=1010। द्वयंगी तंत्र है तो सीधा पर दैनिक प्रयोग के लिए बहुत टेढ़ा पड़ेगा, उदाहरण के लिए 99 को 1100011 अर्थात् सात अंकों में लिखना होगा न कि दो अंकों में। पर इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर मे स्पंदों का एक सिलसिला ही जुड़ा होता है अतः यह प्रणाली उसके लिए आदर्श है।

कम्प्यूटर में इन अंकों को किस तरह प्रस्तुत किया जाता है? हम यह तो जानते ही हैं कि यह वाल्वों और ट्रांजिस्टर एककों का एक गुंफन है जो रिले की तरह काम करते हैं। अतः इस तरह के दो एकक किसी स्विच के साथ परिपथ के खुलने या बंद होने के साथ साझे मे काम करते हैं। यदि परिपथ 'बन्द' है तो स्पन्द के आने पर यह 'चालू' हो जाएगा। यदि यह चालू स्थिति में है तो अगले स्पन्द के साथ ही बन्द हो जाएगा। अंक 0 को स्वद आफ (बंद) करने के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है और 1 को 'आन' (चालू) करने के द्वारा। अतः इस तरह के हजारों परिपथों की एक प्रणाली से इस बात की अपेक्षा की जाती है कि वे लगभग कितनी भी बड़ी संख्या को संभाल सकते हैं। किसी चालू कम्प्यूटर के भीतर से स्पन्दों की एक अविरल धारा प्रवाहित होती रहती है जो कि करोड़ों साइकल प्रति सेकण्ड की आवृत्ति से कंपित होने वाले विद्युत् उत्तेजित मणिभों से जनित होते हैं। कम्प्यूटर अपनी गणना बहुत तेज गति से निरंतर घूमते और

स्त होते रहने वाले परिपथों के द्वारा करता है।

अत: किसी कम्प्यूटर को जो कुछ भी करने को कहा जाता है, वह एक गणि-तीय हिसाब की शक्ल ले लेता है। अत: ये मशीनें जहां भी काम कर रही हैं, वहां कम्प्यूटरों को 'आयोजित करने वाले विशेषज्ञ' अर्थात् ऐसे लोग जो इनके काम को इस प्रणाली की गणितीय भाषा में परिवर्तित कर सकें अपरिहार्य हैं। सबसे पहली चीज जिसे तय कर लेना होता है, वह है एक 'आदेश कूट' अथवा 'हिदायतों की प्रारंभिक तालिका। इस कूट में उन नियमों का निर्धारण करना होता है जिनके अनुसार कम्प्यूटर अपने कार्य पर आ जुटता है। यह लगभग उसी तरह से होता है जैसे हम जब भी कोई नंबर घुमाते हैं तो टेलीफोन केन्द्र इनको मिलने के लिए पहले से ही समायोजित रहता है।

मशीन को जिस 'कार्यक्रम' का पालन करना होता है वह वस्तुतः आधार-भूत हिदायतों के रूप में इसकी स्मृति में उतार दिया जाता है। स्मृति की अनेका-नेक प्रणालियां हैं। इनमें एक को शक्ल धातु के ड्रम जैसी होती है जिसके खंडों को 0 और 1 को प्रस्तुत करने के लिए चुम्बकित कर दिया जाता है। एक दूसरी प्रणाली चुम्बकित टेप के सहारे काम करती है। यह टेप वैसा ही होता है जैसा टेप रेकार्डर का। एक तीसरी प्रणाली ऋणाग्र किरण नली के द्वारा काम करती है। इस नली के भीतर चौड़े वाले सिरे के आर-पार रश्मियां उसी तरह दौड़ती रहती हैं, जैसे टेलीविजन के रिसीवर में, पर इन असंख्य नन्हे बिन्दुओं से सज्जित होने वाले चित्र 0 और 1 के ही बने होते हैं।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मशीन को जो काम करने को कहा जाता है वे आमतौर पर इस तक पंच कार्डों या पंच टेपों के माध्यम से पहुंचाए जाते हैं जिनके छिद्र 0 और 1 को प्रस्तुत करते हैं या पहुंचाए जाते हैं, चुम्बकित टेप से जिसमें संख्या कूट अभिलिखित संवेगों के रूप में होते हैं। जैसे-जैसे टेप अपने विदेश कोन्सोल खोलता जाता है, वैसे-वैसे कम्प्यूटर अपने चालन के समय अपनी स्मृति में उतारे गए पुरोगम निर्देश लेता हुआ टेप की हिदायतों पर काम करता जाता है।

प्रतिफलों को अनेक रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है। कुछ कम्प्यूटर इन्हें बिजली के टाइपराइटरों पर टाइप कर सकते हैं, इन्हें चुम्बकित फिल्म पर संकेतों के रूप में संगृहीत कर सकते हैं, अथवा कागज के टेप या कार्ड पर इन्हें छिद्रित कर सकते हैं। दूसरे कुछ, उदाहरण के लिए ऐसे कम्प्यूटर जो स्वचल उत्पादन की प्रक्रियाओं का [illegible] कर रहे हैं, मशीन के औजारों को विद्युत संकेतों के रूप में अपनी हिदाय

कुछ कम्प्यूटरों को पहले कहीं अधिक तेजी से सवाल मिलाया गया है जिस गति से हल करते हैं। इलेक्ट्रॉनिक ढंग से चलने वाले अक्षरांकी (स्कैनर) की गति का एक इलेक्ट्रॉनिक अक्षरांकी अक्षरों, शब्दों और चिह्नों को पहचान लेता है और उन्हें एक प्रकार के संकेतों में रूपान्तरित कर देता है। दूसरे कुछ यन्त्र व्यक्तियों के अनुसार किया करते हैं। वे डिक्टेशन ले सकते हैं और जो कुछ कुछ

60-01361: 43468071

[illegible] जिन्हें कम्प्यूटर पढ़ सकता है

कहते हैं, उसे टाइपराइटर पर लिख सकते हैं, पर निश्चय ही यह लेखन शाब्-दिक वर्तनी में ही होगा, क्योंकि किसी युग में भी किसी कम्प्यूटर से इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि वह अंग्रेजी की वर्तनी प्रणाली पर अधिकार प्राप्त कर सके। अनुवाद की मशीनें तो बहुत ही उम्दा बनाई जा चुकी हैं। यद्यपि वे रूसी कविता का अनुवाद शेक्सपियर की जबान में नहीं कर सकतीं, पर तथ्यपरक पाठों को वे सही-सही अनूदित कर सकती हैं। अमरीका में एक कम्प्यूटर 1960
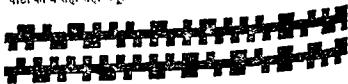
अनुवाद मशीन की शब्दावली का एक अंश (300 गुना आवर्धित) : उपर्युक्त संकेत चिन्ह रूसी शब्दों को दर्शाते हैं।

से ही प्रावदा से अधिक महत्त्वपूर्ण लेखों को बचकानी पर बोधगम्य अंग्रेजी में प्रति सेकण्ड कई शब्दों की दर से और दसियों हजार के शब्द भंडार के साथ करता आ रहा है। अनुवाद करने वाले कम्प्यूटरों को किसी दूसरी मशीन से छिद्रित अथवा चुम्बकीय टेप पर संभरित किया जाना होता है, जिस पर बैठा एक आदमी उन शब्दों को टाइप करता जाता है, पर ऐसे कम्प्यूटरों के प्रायोगिक रूप अब काम में आने लगे हैं जो छपी हुई सामग्री को प्रति सेकण्ड सैकड़ों अक्षरों की गति से पढ़ते जाते हैं और पूरा हो चुके अनुवाद को टाइप भी करते जाते हैं।

यहाँ प्रमुख कठिनाई यह है कि प्रत्येक भाषाओं में अनेक शब्द ऐसे होते हैं जिनके एक से अधिक अर्थ होते हैं जो सन्दर्भ और विषय के अनुरूप बदलते रहते हैं। मशीन की स्मृति में एक ही शब्द के विविध अर्थ भरे रहते हैं और कम्प्यूटर

की विविध सभावनाओं में से किसी एक का चुनाव करने के लिए अपनी मनः
शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। यह पाठ के दूसरे ऐसे शब्दों की तुलना करता
है जिनका एक ही अर्थ है और पुनः उनका हवाला लेते हुए और उनकी आवृत्ति
की गणना करते हुए वह संदर्भ का निर्धारण करता है कि इसका विषय राजनीति
है या चिकित्सा कृषि है या परमाणु ऊर्जा। इस तरह उन गलतियों से बच पाना
संभव होता है जिन्हें अनुवाद के एक आरम्भिक कम्प्यूटर ने किया था जिसने
'हाइड्रालिक रैम' (द्रवचालित टक्कर) का अनुवाद 'पानी का भेड़ा' कर दिया था।
'स्मृति' की सहायता से सन्दर्भ का निर्धारण सेकण्ड के अंशमात्र में हो जाता है।

सही निर्णय पर पहुंचने की मनःशक्ति लगभग मनुष्य जैसी प्रतीत होती है,
पर हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि कम्प्यूटर केवल उतनी ही बातें सोच
सकता है जितनी बातें उसके सर्जक मनुष्य ने उससे सोचने को सुझा रखा है और
यह कि उनके विचार उनके विस्तृत, पर कठिन ब्योरों में आयोजित किए गए हैं।
अपनी पिछली सफलताओं और विफलताओं से शिक्षा ग्रहण करने की शक्ति
उनमें नहीं है और वे अप्रत्याशित कठिनाइयों का सामना नहीं कर सकते। हां वे
ऐसी स्थिति में किसी फ्यूज को उड़ाकर या आवाज देकर अपने मानव परिचालक
को सहायता के लिए अवश्य बुला सकते हैं। जिन समस्याओं का समाधान करने
की कोई पद्धति वे गणितज्ञ नहीं निकाल सके हैं, जो उन्हें 'पुरोगमति' करते या
'अनुदेशित' करते हैं। कहा गया है कि बौद्धिक दृष्टि से वे पूरे जड़भरत हैं और
इस दृष्टि से एक केंचुआ तक उनसे बहुत अधिक चालाक साबित होगा। किसी
भी दृष्टि से सोचें तो उनका जन्म अभी बस ही तो हुआ है।

पर औद्योगिक स्वचालन में कम्प्यूटरों को जो महत्त्व प्राप्त है, वह निर्णय
कर सकने की उनकी सामर्थ्य के कारण है। इस अर्थ में वे तकनीकी विशेषज्ञों
और फोरमैन को, चालक और निरीक्षक को मात दे सकते हैं। निम्नतम स्तर
पर वे व्यक्तिगत परिचालनाओं का नियंत्रण और देखभाल कर सकते हैं। किसी
डिब्बाबन्दी के कारखाने में एक इलेक्ट्रानिक आंख करोड़ों मटर के दानों को
प्रतिदिन उनके रंग के आधार पर छांटती जाती है और पीले रंग के दानों को
एक किनारे छांटती हुई वह केवल पूरे पके दानों को ही तैयारी के लिए आगे
जाने देती है। इस निर्णय का काम बहुत कठिन नहीं है और इसे पूरा करने के
लिए आपको एक पूरा कम्प्यूटर जरूरी नहीं पड़ता। पर यदि एक स्वचालित
कांच भरारी की कटाई पर नजर रखनी है तो यह काम ज्यादा पेचीदा पड़
जाएगा। यद्यपि मशीनों को कुछ कठोरी शाब्दों से ही इस प्रकार अनुकूलित
... विशिष्ट इकाई तक जैसे कि मोटर के पिस्टन में

ठीक अवस्था, पर इस काम को पूरी तरह उन्हीं के सुपुर्द नहीं किया जा सकता। यदि चूड़ी का कोई हिस्सा बिगड़ गया, यदि पिस्टन दरक गया, या यदि सुराख अधिक चौड़ा हो गया या उथला रह गया तब क्या होगा? उस समय एक इलेक्ट्रॉनिक रोबोट, जो निर्णय करने की शक्ति रखता है, काम संभाल लेगा। वह उस वस्तु को परख करके यह निश्चय कर सकता है कि वह अच्छी हालत में है या नहीं। वह या तो मशीन में ही कोई उपयुक्त हिकमत लगाकर टूटे हुए अंश को पुनः नया कर सकता है या ऐसा करने के लिए किसी इंजीनियर को बुला सकता है। यदि बहुत से पिस्टन दोषपूर्ण पाए गए तो रोबोट मशीन को ही बन्द कर दे सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक रोबोट इससे भी अधिक कुछ कर सकता है। वह चूड़ी काटने-वाली मशीन को दूसरे कामों पर लगा सकता है। वह किसी मनुष्य की भाँति एक सामान्य मानचित्र को नहीं पढ़ सकता पर यदि मानचित्र की हिदायतें विद्युत-चुम्बकीय संवेगों की भाषा में, जिसे वह समझता है, अनूदित की जा चुकी हैं तो वह उनका पालन अवश्य कर सकता है। कोई मानव चालक अपनी बात कम्प्यूटर को कैसे समझाता है? मान लीजिए वह चाबी पटल पर एक संदेश टाइप करता है 'आन कुलअन स्पन गो राइट टूल लफ्ट सर / सुट्र+2+3 रेड+5' यह संदेश जो टेप के छिद्रों या चुम्बकीय संवेगों के रूप में कम्प्यूटर तक पहुँचता है, वह उसमें संभरित प्राथमिक हिदायतों के अनुसार कम्प्यूटर द्वारा निम्न रूप में समझा जाएगा, 'टर्न आन कूलैंट, टर्न आन स्पिंडल, गो राइट विद टूल आन लेफ्ट साइड एलांग ए सर्कल विद सेंटर ऐट $x=+2$, $y=3$ ऐंड ए रेडियस आफ+5।' ये हिदायतें एक दूसरे इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर से आ सकती हैं। यह वही कम्प्यूटर है जो किसी कारखाने के एक पूरे खण्ड की निगरानी करता है जिसमें बहुत से औजार लगे हुए हैं। इस प्रकार के किसी नियंत्रक से न केवल एक ही प्रकार की मशीनों को आदेश दिलवाए जा सकते हैं और उनकी देखभाल कराई जा सकती है, अपितु तरह-तरह की मशीनों को, जैसे उत्पादन मशीन, स्थानान्तरण मशीन, जोड़ाई मशीन, निरीक्षण मशीन, और पैकिंग मशीन आदि को आदेश दिलवाए जा सकते हैं और उनकी देखभाल कराई जा सकती है। ये मशीनें निरंतर नियंत्रक मशीन को यह खबर देती रहती हैं कि वे क्या कर रही हैं। यदि कोई गड़बड़ी हो जाती है, तो नियंत्रक को मालूम है कि इसे दुरुस्त करने के लिए क्या करना होगा। और यदि कुछ करना संभव नहीं तो वह मानव सहायक को बुला लेगा।

एक पूर्णतः स्वचालित कारखाने में एक 'मास्टर ि...

की देखरेख करने के लिए एक कम्प्यूटर होगा। दूसरे कम्प्यूटर इसकी तंत्रिकाओं की भांति होंगे। विविध खंडों का समायोजन करते हुए उदाहरण के लिए यह सुनिश्चित करना कि जिस रफ्तार से एक खण्ड काम कर रहा है, वह दूसरे से अधिक तेज तो नहीं है, जिससे उसके पास सामग्री की कमी पड़ सकती है या घपला सा पैदा हो सकता है। यह केवल पूरी उत्पादन प्रक्रिया पर ही नजर नहीं रखेगा। यह पूरी फैक्टरी के लिए उत्कृष्ट कार्य विधि का भी निर्धारण कर सकता है और आवश्यकता पड़ने पर उत्पादन को भी बदल सकता है। हम जानते हैं कि कम्प्यूटर दो विकल्पों में से एक का ही चुनाव कर सकता है (ये हैं 0 और 1), पर यह इनकी पूरी श्रृंखला में से अपना रास्ता निकाल लेता है और एक निर्णय से दूसरे पर पहुंचता रहता है। (इस कार्य पद्धति के बल पर ही शतरंज खेलने वाले कम्प्यूटर भी बनाए जा सके हैं।)

उद्योगों में अनेक कम्प्यूटर 'आंकड़े तैयार करने' का काम करते हैं। 'पवन विश्लेषण' के आधार पर संभरित तथ्यों के आधार पर वे यह निर्णय करते हैं कि कौन-सा उत्पादन अधिक लाभकर रहेगा। वे वायुगतिकी में हिसाब लगाकर विमान के पंखों, इंजनों, राडारों, फ्यूजलेजों आदि की बनावट और कार्य निष्पादन का निर्धारण करते हैं। वे यह निर्धारित करते हैं कि कोई विशेष पदार्थ या पुर्जा कितना दबाव बिना टूटे हुए झेल सकता है। और इसी तरह के दूसरे हजारों काम वे कर सकते हैं। छोटे कम्प्यूटर विविध प्रकार के दफ्तरी काम कर रहे हैं। वे हजारों कर्मचारियों की तलब का हिसाब करते हैं। वे बिक्री के आंकड़े पढ़ते जोड़ते और उनका विश्लेषण करते हैं। बैंकों में वे चालू खातों (करेंट एकाउंट) की महाजनी करते हैं; वे सामान्य भाषा को ब्रेल लिपि में अनूदित करते हैं कि अंधे इन्हें पढ़ सकें; वे मौसम दफ्तर से मौसम की भविष्यवाणियां करते हैं; जनगणना की वर्गीकृत तालिकाएं तैयार करते हैं और सरकारी लाटरियों में ये यदृच्छया से विजेता संख्या का चयन करते हैं। गैस, बिजली और टेलीफोन के बिल कम्प्यूटरों द्वारा तैयार किए जाते हैं। ये लंदन के स्कॉटलैंड यार्ड की यातायात के अभाव को कम करने में सहायता करते हैं और लिफाफों पर टाइप किए (अथवा हाथ से लिखे तक) डाक कूटों के क्रम में चिट्ठियों की छंटाई करते हैं। पर यह भी सच है कि कम्प्यूटर भी गलतियां कर सकते हैं और करते भी हैं और यह भी संभव है कि कुछ दिन बाद जब ये बच्चा नहीं रह जाएंगे तो पता चलेगा कि कुछ [illegible]

[illegible] हैं।

में 400 गुना उत्पादन करता है, तो इलेक्ट्रॉनिक रोबोट की दखलन्दाजी से यदि बहुत से फैक्टरी मजदूरों और सफेदपोश बाबुओं को यह खतरा मालूम हो कि कहीं उनकी रोजी ही न चली जाए तो यह आश्चर्य की बात नहीं। ये आशंकाएं उचित ही हैं पर उचित इस अर्थ में ही हैं कि नयी मशीनें पूरी सामाजिक प्रणाली को ही उलट देने का संकट उत्पन्न कर रही हैं। अकुशल या अर्धकुशल कर्मचारियों के काम की संभावनाएं निरन्तर घटती चली जाएंगी प्रशिक्षित लोगों की मांग निरंतर बढ़ती चली जाएगी और इसलिए शिक्षा प्रणाली में भी इनको स्थान देना होगा। पिछले कुछ समय से शारीरिक श्रम से रहित कामों की संभावनाएं, जिनके लिए एक निश्चित स्तर की शिक्षा जरूरी है, प्रतिवर्ष सामान्य औद्योगिक कर्मचारियों की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ती गयी है। अधिक उम्र के लोगों के लिए इन नयी प्रविधियों के साथ ताल-मेल बैठा पाना कठिन होगा और किशोर जो ऐसा कर सकते हैं यदि पढ़ने, लिखने और छोटे-मोटे हिसाब करने से अधिक कुछ नहीं जानते तो वे आगे चलकर पाएंगे कि उनकी वृत्ति के अवसर तेजी से घटते जा रहे हैं। एक स्वचालित कारखाने में पुराने किस्म के संयत्रों पर काम करने वाले कर्मचारियों के ढंग के पांच या छह में केवल एक कर्मचारी चाहिए, पर इसे ऐसे गणितज्ञों की आवश्यकता है जो कम्प्यूटर की भाषा बोल सकें। कुछ देश इन आवश्यकताओं की ओर ध्यान दे रहे हैं। उदाहरण के लिए अकेले मास्को विश्वविद्यालय में ही प्रतिवर्ष सौ कम्प्यूटर गणितज्ञ प्रशिक्षित किए जा रहे हैं।

अन्य क्षेत्रों की ही भांति स्वचालन के क्षेत्र में भी कुछ देश इस अन्दाज में एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी हैं "कि तुम जो भी काम करो मैं तुमसे अच्छी तरह कर सकता हूं।" जब अमरीकी यह घोषणा करते हैं कि उनके यहां लास एंजेल्स में एक ऐसा स्वचालित कारखाना बन गया है, जो कम्प्यूटर के लघुरूप परिपथों से परिचालित है और यह मानव चालकों की तुलना में 20 गुनी तेजी से काम करता है, तो रूसी इसका जवाब इस दावे के साथ देते हैं कि नोवोसिबिर्स्क में उनके विशाल जल-विद्युत केन्द्र में 1970 तक 290 स्थायी प्रविधिज्ञों की आवश्यकता पड़ती थी। पर अब इसमें स्वचालन की कृपा से प्रति पारी केवल छह व्यक्तियों की जरूरत पड़ती है।

अब हम अपने कम्प्यूटरों की ओर पुनः लौटें। उनका कैसा विकास आगे होते जाना है और हमारे समाज पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? यह प्रश्न का उत्तर आसानी से दिया जा सकता है। वर्तमान प्रवृत्ति उन्हें यथा-सम्भव अधिक से अधिक स्वतः पर्याप्त बनाने की ओर है। 'आदर्श' कम्प्यूटर अर्थात् इलेक्ट्रॉनिक और जो स्वतन्त्र ढंग का अवलोकन कर सकती है, उनका करते बुद्धिहीन बना भी जाएगी।

वृत्ति जिस दिशा में बढ़ सकती है, उसकी झलक 'दृश्य रेकार्ड कम्प्यूटर' में ती है जिसे छिद्रित या चुम्बकीय टेपों की आवश्यकता ही नहीं पड़ती, अपितु चुम्बकीय स्याही में लिखे अक्षरों के साथ काम करता है जिसे कम्प्यूटर और चालक दोनों ही पढ़ सकते हैं, दूसरा विकास निश्चय ही अतिसूक्ष्मीकरण का जिसमें टिकट के आकार के परिपथों का प्रयोग और विनियम संभव है। (देखें 57)

स्थान का अपना बहुत बड़ा मूल्य है अत: कम्प्यूटर छोटे होते जाएंगे। इसकी पद्धति 'निम्नतापोत्पादी' है जिसमें इनके परिपथ पतली फिल्म या सीसे या के बनाये जाते हैं और इन्हें ऋण 269° सें० पर द्रव हीलियम में डुबाकर रखना । इस तापमान पर धातु 'अति-संवाही' बन जाता है, अर्थात् इनका सारा [illegible] प्रतिरोध समाप्त हो जाता है और यदि इनमें कोई करेंट पहुँचाई जाए तो अनन्त काल तक परिक्रमा करती रह जाती है। इन परिपथों को 'क्रायोट्रॉन' [illegible] दिया गया है। एक घन इंच जगह में 2,000 'क्रायोट्रॉन' समाहित किए जा [illegible] है। दूसरे सूक्ष्म परिपथ शीशे की छोटी पट्टियों पर छपे होते हैं। इनका एक [illegible] अनुसंधान राकेटों और अंतरिक्ष उपग्रहों में लगे कम्प्यूटरों में देखा जा [illegible] है, जिनका आकार एक सिगरेट से बड़ा नहीं होता। उद्योग के लिए सर्वोत्तम [illegible] छोटा और हल्का होता जा रहा है। उदाहरण के लिए कुछ [illegible] ऐसे हैं जिनका वजन 5-6 पौण्ड मात्र है, जो किसी विमान को या 1,500 [illegible] से उतारकर जैब के बटुओं को [illegible] है।

अभी मशीनी शिल्प पर एक बिलकुल नया विकास दृष्टिगोचर हो रहा है [illegible]

लिए जब आग बुझाने वाले होज से कोई सशक्त प्रधार दूसरी ओर से आती हुई किसी कम सशक्त प्रधार से टकराती है, तो यह दूसरी ओर को विचलित हो जाती है—मन्द प्रधार सशक्त प्रधार को नियंत्रित करती है। अतः प्रति संभरण के अनेक साधनों को इलेक्ट्रॉनिक की बजाय शुद्ध द्रव प्रवर्धक द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

अन्ततः अधिक सुशिक्षित श्रमिकों की प्राप्ति के लिए (और काम की तलाश करने वाले बेरोजगार अप्रशिक्षित तरुणों की संख्या को घटाने के लिए) विद्यालयों मे स्वचालन में कुछ वर्षों की शिक्षा अनिवार्य करनी हो सकती है। जब प्रति व्यक्ति और प्रति घंटे उत्पादन पहले की अपेक्षा बहुत ऊपर चला जाएगा तो यह भी संभव है कि प्रति व्यक्ति सप्ताह में केवल चार दिन और कुल तीस घंटे ही काम करना पड़े और वेतन पहले से बहुत अधिक हो जाए। संभव है इससे मालिकों और श्रमिकों के सम्बन्धों में उन्नीसवीं शताब्दी के अवशेष रूप में बनी हुई खींचतान भी समाप्त हो जाए और प्रबन्ध और स्वामित्व के साझे का एक नया रूप उत्पन्न हो। और यदि हम पूछें कि उन सारे सामानों का क्या होगा, जो स्वचालन के कारण निरन्तर अधिकाधिक तेज रफ्तार से उत्पन्न होते जाएँगे, तो हमें सिर्फ इतना ही याद रखना होगा कि दो तिहाई मानवता आज भी भूखी है और नितान्त आदिम अवस्था में गुजर रही है।

खाद्य उत्पादन के भविष्य पर विचार करते समय यह बात विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है। कृषि को भी इलेक्ट्रॉनिक प्रविधियों से लाभ होना है। कृषि का विकास पश्चिमी और पूर्वी जगत में विगत कई हजार वर्षों से होता आया था, फिर भी यह विकास आदिम अवस्था से शायद ही आगे बढ़ पाया हो। अभी हमारी शताब्दी में आकर ही बिजली से चलने वाले यंत्रों ने पशुओं और मनुष्यों के शारीरिक श्रम का बहुत धीरे-धीरे स्थान लेना आरंभ किया और वह भी उद्योग प्रधान देशों में ही। सबसे पहले खेती में औजार पहुँचाने और जुताई का काम करने के लिए ट्रैक्टर का आगमन हुआ। अमरीका में फोर्ड और ब्रिटेन में फरगुसन ने दोनों विश्वयुद्धों के बीच ऐसे ट्रैक्टरों का उत्पादन किया जिसमें खेती के औजारों को इसके साथ ही एक नयी प्रणाली में जोड़ दिया गया था और ये ट्रैक्टर इन औजारों के लिए छोटे मोटे बिजलीघर जैसे थे। साथ ही फसल काटने, मड़ाई करने, दाने को अलग करके इसे बोरियों या बखारों में भरने, के लिए संयुक्त हार्वेस्टर का आगमन पहली बार एक स्व-नोदित मशीन के रूप में हुआ। मशीनीकरण पशुधन के पालन-पोषण की ओर भी बढ़ने लगा। इसकी सहायता से 'बाल्टेरिया बैटरियों' (जिनमें मुर्गियों को छोटे-छोटे खानों में रखा जाता है और वे एक चल पट्टी से

बना दाना प्राप्त करती रहती है) से अण्डों का उत्पादन होने लगा और विभिन्न मशीनों की सहायता से दूध निकालने का ही काम नहीं, बल्कि घर के भीतर ढोरों का पालन पोषण भी होने लगा।

इस प्रकार शुरू होकर, कृषि का स्वचालन इस शताब्दी के छठे दशक में अमरीका और रूस में एक साथ आरंभ हुआ। इसकी शुरुआत बिना ड्राइवरों के ट्रैक्टरों के साथ हुई, जिस पर केबल या रेडियो संकेतों से दूर से ही नियंत्रण किया जाता है। इन संकेतों को कोई चालक प्रेषित कर सकता था अथवा बहुतेरे अलग-अलग काम करने के आदेश दे सकता था। खेती का हर प्रकार का काम—जुताई, बोआई, खुदाई, पटाई, सिंचाई, कटाई—किसी दूरस्थ अवेक्षण कक्ष से राडार या टेलीविजन के पर्दों और कम्प्यूटरों की मदद से करने के रास्ते में कोई अड़चन नहीं है। पर पश्चिमी यूरोप के किसानों के लिए आर्थिक अड़चन अवश्य है, क्योंकि पूर्ण स्वचालन केवल बड़े खेतों में ही लाभकर हो सकता है।

अमरीका के मध्य पश्चिम के अनेक किसान एक अर्ध-स्वचालित प्रणाली से काम लेते हैं जिसे भावी कृषि प्रविधिज्ञ बहुत अविकासित मानेंगे, पर अधिकांश यूरोपीय किसानों को यह स्वप्नलोक जैसा विस्मयकारक प्रतीत होगा। परिचालक बटन दबा और उठाकर उन मशीनों का नियंत्रण करते हैं जो जोतती, बोती, खाद डालती, अनाज के दाने अलग करती और पुन. उन्हें भंडार टंकियों में उड़ेल देती हैं। जानवरों को चारा खिलाते समय एक दूसरा बटन दबाया जाता है, और अनाज वैज्ञानिक रीति से नपी-तुली मात्राओं में एक उत्थापक दंड में उठ कर स्वत. माल उतारने वाले एक वैगन में पहुँच जाता है, जो इसे स्वचालित रीति से ही ढोरों की खत्ती में पहुँचा देता है और वहाँ पूरक विटामिन, प्रति जीवाणु पदार्थ, हार्मोन आदि उसमें मिल जाते हैं जिससे ढोर बहुत जल्द मोटे होते हैं और बीमारियों से बचे रहते हैं। ढोर खेतों में नहीं चर पाते—इलिनाय, इंडियाना, मिसोरी, आयोवा, कैन्सास और नेब्रास्का में कोई मोटर चालक सैकड़ों मील मोटर चलाता निकल जाए तो भी उसे एक ढोर तक दिखाई नहीं देगा जब कि इन क्षेत्रों में दसियों लाख ढोर पाले जाते हैं। इन्हें धातु की इमारतों में रखा जाता है, जहाँ जलवायु तथा आहार बहुत सख्ती से नियंत्रित होते हैं। इस प्रणाली के द्वारा आज पहले की अपेक्षा चार गुने ढोर उनसे आधे मजदूरों के बल पर पाले जा सकते हैं, पर फार्म पर काम करने वाले इन आदमियों के लिए जरूरी है कि वे साधारण मिस्त्री और बिजली मिस्त्री भी हों और साथ ही उन्हें शरीर विज्ञान का भी कुछ ज्ञान हो।

दो सौ चौपायों को ५ मिनट के भीतर चारा खिलाया जा सकता है। सूअरों के बाड़ ऐसे होते हैं जिनमें ऊपर ढक्कन लगा होता है और यह ढक्कन सिर्फ खाने

के समय पर स्वतः खुल जाता है। गायों के लिए कुछ व्यायाम जरूरी है अतः उनके घूमने-फिरने का क्षेत्र होता है और बछड़ों को दूध पिलाने के लिए विशेष बाड़े होते हैं :—दूध निकालने का काम बेशक मशीन से ही होता है। दूध एक शीशे की नली से होकर एक कूलर (शीतक) में पहुँचता है, जहाँ इसे 3,000 गैलन क्षमता वाली ट्रकों में पंप कर दिया जाता है जो इसे बाजार में पहुँचाती है।

मुर्गियों के लिए जोड़े का चुनाव एक इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर करता है। उनको स्वचालित मशीनों से ही मारा, नोचा, साफ और पैक किया जाता है।

इंगलैण्ड अभी कृषि में स्वचालन के लिए प्रस्तुत न भी हो तो भी रीडिंग विश्वविद्यालय के कृषि मशीनीकरण विभाग ने एक स्वचालित ट्रैक्टर का विकास किया है जो कृषि कार्य का बहुत बड़ा भार वहन कर सकता है। इस मशीन की एक स्वनिर्देशन प्रणाली है जिससे यह कृषि कार्य के सिलसिले में किसी भी प्रकार के मार्ग पर चल सकता है। इसके क्लच, ब्रेक, स्टीयरिंग, ऐक्सीलरेटर ही नहीं, अपितु इसमें जुड़े हुए किसी भी यंत्र या पुर्जे का चालन सर्वोत्तम से होता है और इन सबको मापने और संकेत देने का काम यह मशीन करती है।

इस ट्रैक्टर में अंकन के उपस्कर भी लगाने होंगे। रीडिंग विश्वविद्यालय में यह महसूस किया गया है कि किसानों के अधिकांश निर्णय बहुत आत्मपरक होते हैं, अ र इसलिए लम्बाई, वजन, तापमान, रंग आदि का माप यंत्रों के सहारे अधिक शुद्धता से किया जा सकता है जिससे वृद्धि की दरों, पौधों की पक्वता, जानवरों की प्रौढ़ता की स्थिति या मिट्टी की उर्वरता के स्तरों का सही निश्चय किया जा सके। रीडिंग ट्रैक्टर इन सुविधाओं से युक्त है और साथ ही इसमें कम्प्यूटर भी लगा हुआ है, जो आंकड़े तैयार करता है। अतः यह ट्रैक्टर किसान को फसल के उत्पादन में उसके रस्मी कामों से राहत दे सकता है। इसके सहारे पशुधन की देखभाल मनुष्य की अल्पतम देखरेख के साथ किया जा सकता है।

अमरीकी प्रविधिज्ञों ने भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए '2000 ई० के लिए ट्रैक्टर' नियोजित किया है। किसान चालक पारदर्शी प्लास्टिक के एक गुम्बद जैसे चल कैबिन में बैठा रहेगा, जो ट्रैक्टर में लगे औजारों के निरीक्षण के लिए पीछे लगा रहेगा। गुम्बद कैबिन में खाना गर्म करने का यंत्र, रेफ्रीजिरेटर, काफी बनाने का यंत्र, सिंक और मुख्यालय से सम्पर्क कायम करने के लिए एक टेलीविजन सेट लगा रहेगा।

आज भी बहुत सारा अनाज कीमतें बढ़ाने के लिए बर्बाद कर दिया जाता है। भविष्य में उत्पन्न होने वाला सारा अनाज इस तरह बर्बाद न होकर भूखे जनों के पेट में पहुंच सके, इसके लिए राजनेताओं, अर्थशास्त्रियों और प्रशासकों

में बहुत अधिक विवेक और सद्भावना की आवश्यकता होगी।

उत्खनन उन दो आधारभूत उद्योगों में से एक है जिस पर सभ्यता का निर्माण हुआ है। इस क्षेत्र में भी मशीनीकरण का उपयोग बहुत मंद गति से हुआ है। पर चूंकि उन्नीसवीं शताब्दी में कोयले और कच्ची धातुओं की मांग बहुत तेजी से बढ़ने लगी अतः खानें नीची होती चली गयीं, काम फैलता चला गया, और गलियारे और खम्भे लम्बे होते चले गए। अब अधिक कठोर चट्टानों को काटने का सवाल था, वायु का संचार बढ़ाने और अधिक पानी बाहर निकालने का प्रश्न था। इनमें सभी के लिए बहुत तेजी से मशीनीकरण की आवश्यकता थी। ब्रिटेन में—'हाथ से ढुलाई' का सारा काम मशीनों से होने लगा है। खान के टट्टुओं के स्थान पर मशीनी परिवहन विद्युत् चालित रेलें, वाहन पट्ट और लदाई के लिए बिजली के उपकरण आ चुके हैं। 1954 से 1960 के बीच के छोटे-से अंतराल में ही ब्रिटेन की खानों का उत्पादन 16 प्रतिशत से बढ़कर 55 प्रतिशत हो गया। अब बहुत-सी स्वचालित मशीनों के उपयोग के साथ, जो खनिज पदार्थों की खुदाई और लदाई स्वयं एक ही परिचालना में करती हैं, हम इस क्रान्ति के दूसरे चरण पर पहुंच चुके हैं। इन स्वचल मशीनों में अनेक ऐसी हैं जो छछूंदरों की तरह स्वयं अपनी सुरंगें बनाती हुई चट्टानों के भीतर बढ़ती चली जाती हैं। इनमें से अधिकांश के साथ आज भी मानव सहचर और नियंत्रक रहते हैं, पर अनेक मशीनें पूर्णतः स्वचालित हैं।

इस प्रकार की एक मशीन का परीक्षण पहली बार 1960 में लंकाशायर में हुआ था। इसमें एक संवेदी सिरे से युक्त नियंत्रक यंत्र लगा है, जिसमें रेडियो-सक्रिय आइसोटोप लगे हैं जिनसे गामा किरणें फूटती हैं। ये किरणें कोयले के ऊपर पड़कर परावर्तित होती हैं, जिससे कोयला काटने वाली मशीन को आगे बढ़ने का सही निर्देश मिलता रहता है और वे विद्युत्-द्रवचालित सम्पर्क प्रणाली से आगे बढ़ती जाती है। इससे इस बात से आश्वस्त हुआ जा सकता है कि यह मशीन हमेशा कोयले की पर्त वाले क्षेत्र में ही बनी रहेगी। इन की टेक को उन्नत करने के लिए द्रवचालित शक्ति से काम करने वाली कुछ मशीनों का विकास किया गया है; आजकल इनको गलियारे के बाहर से ही नियंत्रित किया जा सकता है। साथ ही परमाणु शक्ति भी अपनी भूमिका प्रस्तुत करेगा। भूमिगत परमाणु विस्फोटों से यह पता चला है कि चट्टानों को इस रीति से तोड़ा जा सकता है। अतः, अब हमारी पहुंच उन खानों तक हो रही है, जिन तक परम्परागत प्रणाली से या तो पहुंचा ही नहीं जा सकता था, या यदि ऐसा किया भी जाता तो वह लाभकर नहीं होता।

इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं कि कोयले की खुदाई के क्षेत्र में स्व
स्वचालन की ओर भावी खनिकर्मियों को बिजली और इलेक्ट्रॉनिकी व
नियर होना पड़ेगा, जिसे अपने स्विचबोर्ड से डायलों, गाजों, दूरदर्शी परद
और स्विचों के सहारे ही अपनी मशीनों का नियंत्रण करने का प्रशिक्ष
होगा। उस समय कोयला काटने का काम दैत्याकार द्रवचालित जेटों से
रूसियों ने दोनवास क्षेत्र में इस दिशा में मार्ग दिखाया और आस्ट्रेलिया
नियरों ने भी इसके बाद इस तरीके को आजमाया। द्रवचालित खुदाई में
शक्ति की बहुत स्वल्प आवश्यकता होती है। यह प्रधानतः दूरस्थ और स्व
नियंत्रण से काम करता है और इसमें आग लगने का खतरा बिल्कुल नहीं
क्योंकि रासायनिक विस्फोटकों का इसमें प्रयोग ही नहीं होता।

इलेक्ट्रॉनिक साधन बहुत विस्मयजनक कारनामे कर सकते हैं अ
अनेकानेक उद्योगों में प्रकट होते जा रहे हैं। उदाहरण के लिए धातु
प्लास्टिक की जोड़ाई के लिए, लकड़ी चिपकाने के लिए, और बिस्कुट बन
लिए उच्च-आवृत्ति-तापन का प्रयोग हो रहा है। ताप तीन तरीकों से पैदा
जा सकता है—अन्त.प्रेषण के द्वारा, सूक्ष्म तरंग अतिदीपन के द्वारा, या ि
के द्वारा (अर्थात् विद्युदग्रों के बीच एक अ-संवाही पदार्थ लगाकर जो इनमें
उत्पन्न करता है।) इस प्रक्रिया में इलेक्ट्रॉनिक वाल्वों की आवश्यकता पड़ती
ट्रांजिस्टरों से कारखानों में ऐसी ट्रालियां चलती हैं, जिन पर कोई चालक
होता। इन्होंने पुराने खर्चीले क्रेनों और वाहन-पहियों का स्थान ले लिया है
मानव-रहित वाहनों में से बहुत से ऐसे हैं, जिनको किसी एक केन्द्र स्थल से
त्रित किया जा सकता है। जिन मार्गों पर इनको काम करना होता है, उन
एक सामान्य तार बिछा रहता है। यह तार या तो फैक्टरी की फर्श पर
रहता है या फर्श के नीचे दबा रहता है। इसमें प्रत्यावर्ती करेंट चलती र
है। तार के चुम्बकीय क्षेत्र से आने वाली संकेत करेंटों को ट्राली के आगे
'मर्मग्राही' कुंडल प्राप्त करते रहते हैं और इसके मार्ग का अनुवर्तन करते र
हैं। जैसे ही मार्ग में कोई बाधा आती है, यह रुक जाता है और बाधा के हटने
पुनः चलने लगता है।

ऐसी सड़कों पर इलेक्ट्रॉनिक यातायात नियंत्रण बहुत आवश्यक है, ज
बहुत अधिक संख्या में सवारियों का आना-जाना लगा रहता है। इस शताब्दी
तीसरे और चौथे दशकों में पुलिस द्वारा कर चालित रंगीन ट्रैफिक बत्तियां
सवारियों की गति को तेज बनाए रखने के लिए पर्याप्त थीं। पर आज के ब
शहरों में अपेक्षाकृत अधिक सवेदी प्रणाली जरूरी हो गयी है। इसके लिए ए

इलेक्ट्रॉनिक यंत्र का उपयोग किया जाता है जो लाल, पीली और हरी बत्तियों को ट्राफिक की गति और भीड़ को ध्यान मे रखते हुए समायोजित करता रहता है। मान लें एक व्यस्त चौराहे के दोनों ओर से गाडिया तेजी से बढती चली आ रही हैं। ऐसी स्थिति मे यह यंत्र इस बात का निश्चय कर लेगा कि इन्हे चौराहा पार करने के लिए कितने समय की आवश्यकता होगी। यदि कोई साइकिल चालक-तेजी से आती हुई कारों की कतार मे आ पहुंचा है तो नियन्त्रण की मशीन कारों की रफ्तार की उपेक्षा करके साइकिल चालक को चौराहा पार करने के लिए पर्याप्त समय देगी।

सन् 1959 मे कावेंट्री मे पहली बार एक पद्धति की परीक्षा ली गयी थी। इसमें अग्निशामक एम्बुलेंस और पुलिस की गाडियो पर एक छोटा सा अल्प परिसर का बहुत उच्च आवृत्ति का ट्रांसमीटर लगा रहता है, जो पहले से ही विशेष प्रकार के संकेत देने लगता है। इन सकेतो को ट्राफिक बत्तियो मे लगा ग्राही यंत्र ग्रहण करता और उन्हें तत्काल हरी बत्ती दे देता है, जहा पर यह प्रणाली प्रयोग में आ रही है, वहा अग्निशामक गाडियों, एम्बुलेंस और पुलिस गाडियों को दूसरी गाड़ियों की अपेक्षा रास्ता पहले दिया जा सकता है और इनके लिए हरी बत्ती तब तक जलती रहती है, जब तक कि ये गाडियां गुजर नही जातीं।

औद्योगिक फर्मों शिक्षा सस्थाओ और सेना ने स्वचालित शिक्षण के लिए स्वचालित इलेक्ट्रॉनिक मशीनें तैयार की हैं, जो ब्रिज खेलने से लेकर विमान उड़ाने तक के किसी भी विषय की शिक्षा प्रदान कर सकता है। यह 'स्वय-शिक्षक' विद्यार्थियो से कुछ प्रश्न पूछता है ; यदि वह सही उत्तर देता है तो मशीन उसे बधाई देती है और अगला प्रश्न करती है। यदि उत्तर गलत हुआ तो मशीन उसे बताती है कि यह कैसे और क्यों गलत है और इसका सही उत्तर देने के लिए छात्र को एक बार और प्रयत्न करने को प्रोत्साहित करती है। यह छात्रो की प्रगति की दर (या प्रगति के अभाव) को एक रिपोर्ट में दर्ज करती है जिसे बाद में मानव पर्यवेक्षक अथवा अध्यापक पढ़ता है। इस मशीन मे एक परदा लगा होता है जिस पर एक सूक्ष्म फिल्म (माइक्रोफिल्म) से प्रक्षेपित (प्रश्न, चित्र और निर्देश) उभरती रहती है। छात्र इनमे लगे चालीस बटनों में से किसी एक को या कई को दबाकर उत्तर देता है।

हम यह जानते हैं कि इलेक्ट्रॉनिकी, और विशेषतः कम्प्यूटर, अधिक तेज रफ्तार वाले और छोटे आकार के होते जाएंगे। उनकी रफ्तार अब तक जहा तक पहुच रही है, उसके लिए ही एक नया शब्द गढ़ने की जरूरत उत्पन्न हो रही

है। यह शब्द है सेकण्ड का सूक्ष्म सहस्रांश, अथवा सेकण्ड का हजारवां हिस्सा। अर्धसंवाहकों की भूमिका निरन्तर बढ़ती चली जाएगी। जर्मन वैज्ञानिक वान न्यूमन ने 'पारामीट्रान' का आविष्कार किया था और 'समनुम्बकीय प्रवर्धकों' में राडार तकनीक तथा जर्मेनियम और सिलिकान जैसे अर्ध-संवाहकों का प्रयोग वर्तमान कम्प्यूटरों की गति को दस गुना बढ़ाने के लिए किया जा रहा है। क्या ये अविश्वसनीय गतियां सचमुच आवश्यक हैं? इनकी आवश्यकता भविष्य में तेज विमान यात्रा, परियान नियंत्रण और औद्योगिक स्वचालन में पड़ सकती है। पूर्णतः स्वचालित उत्पादन संयत्र ग्राहकों के आर्डर लेने से लेकर तैयार और पैक किया हुआ माल वितरित करने और बिल जारी करने तक का लगभग सारा काम बिना मानव नियंत्रण के ही करेंगे। भविष्य ही इस बात को प्रमाणित करेगा कि स्वयं मनुष्य भी उत्पादन की इस अपार संभावना का सदुपयोग करने की क्षमता का विकास कर पाता है या नहीं। इलेक्ट्रॉनिकी की बदौलत अपेक्षाकृत अधिक आराम और साथ अधिक समृद्ध जीवन की संभावना उत्पन्न हुई है। पर अभी तक वैज्ञानिक प्रगति की तुलना में मानव विवेक और सदयता बहुत पीछे रही है। क्या हम इस प्रगति का उपयोग समृद्ध लोगों को अधिक समृद्ध बनाने के लिए ही किया जाएगा अथवा 'सर्वहारा' की सहायता करने और धरती की समग्र मानवता की सुख समृद्धि के लिए।

विगत साढ़े तीन शताब्दियों में बहुत कम अनुसंधान उपकरणों ने वैज्ञानिकों की उतनी सहायता की होगी जितनी सूक्ष्मदर्शी ने। इसका आविष्कार हालैंड स्थित मिडलबर्ग के हान्स और जकरिया जेन्सन नामक दो बन्धुओं ने 1590 के लगभग किया था, जो लेंस की घिसाई किया करते थे। यह दो प्रतिलोम लेंसों या लेंस प्रणालियों से बना होता है। इनमें से 'अभिदृश्यक' लेंस जो दृश्य वस्तु से अधिक निकट होता है, उसका परिवर्धित बिम्ब तैयार करता है; और दूसरा 'नेत्रक' होता है जिससे उस बिम्ब को देखा जाता है। जो इसे और प्रवर्धित कर देता है। दृश्य वस्तु को सामान्यतः एक शीशे के स्लाइड पर रखा जाता है जिसके साथ ही एक प्रदीपक दर्पण लगा रहता है। दिन का प्रकाश अथवा कृत्रिम प्रकाश उस दर्पण से ही इस वस्तु पर परावर्तित किया जाता है।

आधुनिक प्रकाश सूक्ष्मदर्शी बहुत जटिल यंत्र है। इसकी वर्तमान पटुता का श्रेय उन्नीसवीं शताब्दी के एक जर्मन भौतिकविद को है जिसका नाम अर्नेस्ट आबे था और जो जेना में स्थित विश्वविद्यालय का संस्थापक था। प्रवर्धित बिम्ब बनाने के लिए माइक्रोस्कोप अपनी प्रकाश किरणों को वक्र कर देता है। इस प्रक्रिया की अपनी स्वाभाविक सीमाएं हैं। अतः उत्कृष्टतम प्रकाश सूक्ष्मदर्शी

ो वस्तु को 2000 गुने से अधिक नहीं बढ़ा सकता। पर क्या सूक्ष्मदर्शी काश किरणों का ही प्रयोग करने को बाध्य है? सन् 1924 में लुई दि ग्लि एक फ्रांसीसी भौतिकविद ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि की ही भांति इलेक्ट्रॉन भी तरंगों में चलते है। इसके दो वर्ष बाद जेना द्यालय के डा० हान्स बुश ने यह खोज की कि जब इलेक्ट्रॉनों की कोई श्मि तार के कुंडल से—जो कि चुम्बक का काम करता है—होकर है, तब इस रश्मि को लैंस पर उसी प्रकार फोकस किया जा सकता है ाश को किया जाता है।

932 में बर्लिन में मैक्स नोल तथा डा० अर्नेस्ट रस्क ने एक इलेक्ट्रॉन स्कोप बनाकर इन खोजों की परीक्षा लेना आरंभ किया, इसमें प्रकाश सूक्ष्मदर्शी के लिए अपरिहार्य तत्त्वों,-प्रकाश, कांच और वायु का परिहार कर दिया गया था। नोल-रस्क का पहला माडल बेशक बहुत अविकसित था। वे किसी न किसी भागते हुए सूक्ष्माणु की एक झलक पाते कि बिम्ब धुंधला पड़ जाता और अपने लक्ष्य को पुनः फोकस मे पाने के लिए उन्हे इस सूक्ष्मदर्शी की घुंडी को घंटों घुमाते रहना होता।

पर उन्होंने प्रकाश की बजाय 'इलेक्ट्रॉनों के सहारे देखने' के सिद्धान्त को स्थापित कर दिया और इसके कुछ ही वर्ष बाद टेलीविजन के क्षेत्र में अग्रणी वी० के० ज्वोरिकिन ने अमरीका मे अपने निजी इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी का प्रदर्शन किया जिसकी सहायता से वह सर्वोत्तम प्रकाश-सूक्ष्मदर्शी की तुलना में पांच गुना प्रदर्शन करने मे सफल हुए। सन् 1941 मे पहली बार इन्फ्लुएंजा के विषाणुओं का चित्र लिया जा सका।

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी इस तथ्य पर आधारित है कि इलेक्ट्रॉनों की तरंग दीर्घता प्रकाश की तुलना मे बहुत कम होती है अतः इससे बहुत सूक्ष्म कणों को भी देखा जा सकता है। इस नये यंत्र के कारण सजीव और निर्जीव नितान्त नन्ही वस्तुओं का एक नया सूक्ष्म-लोक हमारे समक्ष उद्घाटित हुआ है। इसमे 'लेंसों' के स्थान पर तार के कुंडलों का प्रयोग किया जाता है। इन कुंडलों के द्वारा निर्मित स्थिर-वैद्युत और चुम्बकीय क्षेत्र अभिदृश्यक और फोकस लेंसों का काम करते है। इस तरह एक निर्वात मे तप्त तंतुओं से छूटने वाली इलेक्ट्रॉन रश्मियों से किसी सूक्ष्माणु जैसे छोटे पदार्थ के बिम्ब को एक पतली मेस्कुलाइट शीट पर प्रदर्शित किया जा सकता है। जो इलेक्ट्रॉन सूक्ष्माणु के कठोर हिस्से पर जाकर टकराते हैं, वे रुक जाते हैं, पर शेष तब तक आगे बढ़ते जाते हैं जब तक वे एक प्रतिदीप्त पर्दे पर नहीं पहुंच जाते, जहां वे टेलीविजन के चित्र की तरह दृष्टि-

गोचर होते है अथवा वे एक फोटोग्राफी को प्लेट पर पहुंचते हैं, जहां
हो जाते है। इलेक्ट्रॉन के पूरे मार्ग को वायु मुक्त रखा जाता है, क्योंकि
में ही चल सकते है। इस मार्ग में कोई कांच भी नहीं होता जिसे वे पार
सकते।

आजकल के इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी 1 : 15,00,000 तक का 'उपयोगी
कर सकते हैं। इसका अर्थ है कि दृश्य ब्यौरा पांच से 10 अणु व्यास जितना
होता है। हम कुछ अणुओं को पहचान सकते हैं और एक दिन ऐसा भी आ
है जब हम 'परमाणु' कहे जाने वाले उस मायावी कण को भी देख सकें
उसका चित्र ले सकेंगे। तो इस बात की नौबत शायद तब भी न आए
उसकी नाभि को देख पाएं जो कि उससे भी बहुत छोटा होता है। बहु
प्रतिदर्श तैयार करने पर निर्भर करता है, क्योंकि इलेक्ट्रॉनों को इसमे
गुजरना होता है न कि प्रकाश सूक्ष्मदर्शी की प्रकाश किरणों की भांति उन्हें
चलित होना होता है। अतः प्रतिदर्श अत्यन्त पतला होना चाहिए। यह जि
ही मोटा होगा, परिवर्तन उतना ही थोड़ा होगा। एक इंच के 20 लाखवें अं
मोटाई से सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त किए जा सकता है। प्रतिदर्शो को ताप
और बिजली के प्रभाव झेलने की दृष्टि से टिकाऊ होना चाहिए ताकि
इलेक्ट्रॉनों के प्रहार को बिना किसी क्षति के झेल सके।

इस यन्त्रका धातु विज्ञान मे बहुत अधिक उपयोग हुआ है, जहां प्रतिदर्शी तै
करने की प्रविधि यह है कि धातु की पतली पन्नियों को वेल्लित करके वि
विश्लेषी पालिश कर देते हैं। जैव अनुसंधान मे 'अतिसूक्ष्म कर्तक' (अल
माइक्रोटोम) उत्पन्न किए जाते हैं—ये किसी जैव पदार्थ के अतिशय पतले स्ला
होते हैं जो इतने पतले होते हैं कि इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की पूरी शक्ति प्रकट
सके।

अदृश्य और दृश्य बनाने की कुछ दूसरी आधुनिक विधियां भी हैं। इंपीरिय
कालेज लन्दन ने एक 'बिम्ब तीव्रक' (इमेज इटेंसीफायर) का विकास किया है
जो वैज्ञानिक अनुसंधान मे बहुत धूमिल बिम्बों को भी परिवर्धित और चित्रक
कर सकता है। यह यंत्र देखने में एक छोटे से दूरदर्शी जैसा प्रतीत होता है जिनमें
तारों के दर्जन दो दर्जन कुंडल लगे होते हैं। यह फोटोनों प्रकाश के पर्वाटा-का
इलेक्ट्रॉनों में परिवर्तित करते हुए अपना काम करता है।

हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि होलोग्राफी लेसर रश्मियों की सहायता
से काम करता है। विज्ञान के इस विलक्षण नए औजार का विकास 1951 में

विचार करना शुरू किया कि दृश्य प्रकाश के वर्णक्रम से भरे बहुत छोटी तरंगों को कैसे 'अनुशासित' किया जा सकता है, अर्थात् कैसे इन्हें दीर्घ रेडियो तरंगों की तरह सशक्त और परिवर्धित किया जा सकता है। उसे इसका समाधान 'मेसर' अर्थात् माइक्रोवेव एम्प्लिफिकेशन बाई स्टिमुलेटिड एमिसन आफ रेडिएशन (विकिरण के उत्सर्जन द्वारा सूक्ष्म तरंग का प्रवर्धन) प्राप्त हुआ। सूक्ष्मतरंगों में कृत्रिम माणिक्य की एक छड़ लगाकर उसने इसके इलैक्ट्रॉनों में इसकी ऊर्जा को 'पंप' किया जिससे यह अधिक ऊंचे ऊर्जा स्तरों तक पहुंच गया; फिर सूक्ष्म तरंगों की आवृत्ति बदल दी गयी और इलेक्ट्रॉन एकाएक निम्नतम स्तर पर पहुंच गया और इससे सशक्त, सु-संयोजित, अनुशासित, संसक्त संवेग फूटने लगे।

मेसर एक सशक्त विद्युत-चुम्बकीय प्रवर्धक के रूप में कुछ उपयोगी काम कर सकता था, पर अब निर्णायक चरण उपस्थित हुआ। अमरीकी, रूसी और फ्रांसीसी वैज्ञानिकों को एक प्रकाशिका मेसर अथवा लेसर (ल 'लाइट' प्रकाश के लिए है) का विकास करने में सफलता प्राप्त हो गयी थी। यह सर्वप्रथम प्रकाश है जो माणिक्य, गैस अथवा द्रव लेसर साधनों द्वारा पेन्सिल जैसी मोटी रश्मि के रूप में फूटता है। यह बिखरता नहीं है और अन्ततः यह जिस भी वस्तु तक पहुंचता है वहां तक उतना ही सशक्त बना रहता जितना अपने आरंभ बिंदु पर था। लेसर रश्मियों के द्वारा चन्द्रमा के बहुत छोटे से क्षेत्र को प्रकाशित किया गया है, अन्तरिक्ष यानों का पथन किया गया है, दृश्य संकेतों और मानव ध्वनियों को प्रेषित किया गया है। उच्च शक्ति वाली लेसर हीरे और लोहे के भीतर छेद कर सकती है, शल्य कर्म कर सकती है; मन्द शक्ति वाली लेसर रश्मि पूर्ण अंधकार में टेलीविज़न चित्र ले सकती है, धरती के तल का नक्शा खींच सकती है। हल चला सकती है और इमारतों में पंपसाइन के रूप में काम कर सकती है। लेसर रश्मि कम्प्यूटर 'स्मृतियों' के लिए अविश्वसनीय रूप से बहुत थोड़ी जगह में आंकड़े दर्ज कर सकती है—और इनके चलते होलोग्राफी भी संभव हो गयी है।

इलेक्ट्रॉनिकी ने हमें छोटी-छोटी चीजों की एक पूरी दुनिया की चाबी दे दी है; इसने हमारे लिए ब्रह्माण्ड की सुदूर गहराइयों के द्वार भी खोल दिए हैं और सम्भवतः निकट भविष्य में यह इस अन्यत्र ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विकास के बुनियादी प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत कर देगा जिनके विषय में मनुष्य ने उस समय से ही जिज्ञासाएं व्यक्त करनी शुरू कर दी थीं, जब उसकी नज़र पहली बार आकाश की ओर उठी।

सत्रहवीं शताब्दी तक यूरोप में धार्मिक अन्धकार वैज्ञानिकों को हमारे चतुर्दिक व्याप्त विश्व के विषय में सत्य का पता लगाने और उसकी घोषणा करने

से रोकते रहे, इसके अलावा तारों और ग्रहों को निकट से छानबीन करने के लिए औजार भी नहीं थे। सन् 1609 में महान् इतालवी ज्योतिर्विद गालीलियो गालिली ने अफवाह सुनी कि उसने एक ऐसे शीशे का आविष्कार किया है जो दूरस्थ पदार्थों को प्रवर्धित कर सकता है। प्रकाश के विषय में अपने ज्ञान का प्रयोग करते हुए उसने स्वयं एक ऐसा शीशा दूरदर्शी तैयार कर लिया। इस यंत्र के सहारे उसने सर्वप्रथम जिन विस्मयकारी तथ्यों की खोज की वे ये थे कि चन्द्रमा का तल चिकना नहीं है और उस पर हमें जो धब्बे दिखाई देते हैं, वे अनेक ऊंचे नीचे पहाड़ और खाइयां हैं; कि आकाश गंगा तारों का एक विशाल समूह है; और बृहस्पति ग्रह के चार उपग्रह हैं। चर्च के लिए ये सारी खोजें और इनके आधार पर गालीलियो ने जो ब्रह्मांड के विषय में जो भी निष्कर्ष निकाले वे बहुत क्षोभकारी थे। उसे रोम बुलाया गया, जहां चर्च की अदालत ने उसे बाध्य किया कि वह इस अपधर्म का परित्याग कर दे और अपने शेष जीवन में वह वस्तुतः एक कैदी ही बना रहा जिसे उस सत्य को कहने से भी वर्जित किया गया था जिसकी उसे उपलब्धि हुई थी।

गालीलिओ का दूरदर्शी और जान्स केलर को टेलीफोन जिसका आविष्कार भी लगभग उसी समय हुआ था। हमारे वर्तमान बाइनोकुलरों का पूर्वरूप है जब कि अधिकांश आधुनिक खगोलीय माडल परावर्ती दूर दर्शी पर आधारित है जिसका आविष्कार 1670 के लगभग न्यूटन ने किया था। एक विशाल अवतल दर्पण पदार्थ को परावर्तित करता है और फिर वह बिम्ब नेत्रक द्वारा परिवर्धित होता है। इस प्रकार जो चित्र प्राप्त होता है वह परावर्त होता है जिसका खगोलीय अनुसंधान में कोई महत्व नहीं है। 200 इंच व्यास के दर्पण वाले यंत्र (माउण्ट पालोमर, कैलीफोर्निया) निर्मित हुए हैं जिनकी प्रवर्धन शक्ति 1:10,00,000 तक की है।

दूरदर्शी केवल उन्हीं वस्तुओं को देख सकता है जिनसे प्रकाश फूटता या परावर्तित होता है और अभी कुछ वर्ष पूर्व तक किसी भी ज्योतिर्विद को इस विषय में संदेह भी नहीं था कि कुछ तारे ऐसे भी हो सकते हैं जिनसे प्रकाश किरणों के अतिरिक्त अन्य किरणें फूटती हों। परन्तु सन् 1932 में बेल टेलीफोन प्रयोगशाला के कर्मचारी कार्ल जैन्स्की को कुछ ऐसी रेडियो तरंगें प्राप्त हुईं जो उसे सुदूर अन्तर्नक्षत्रीय अन्तरिक्ष से आती हुई प्रतीत हुईं। लगभग डेढ़ दशक तक इस खोज की कोई सराहना नहीं की गयी और इसका अध्ययन-अन्वेषण भी रेडियो उपकरणों के बिना नहीं हो सकता था, जिनका विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान होना आरंभ हुआ। इलेक्ट्रानिक इंजीनियरी के कारण अद्भुत दे

दूरतम भागों से भी आने वाली तरंगों को परिशुद्धता पूर्वक ग्रहण करने पहचानने और उनका स्थान निर्धारित करने वाले रेडियो दूरदर्शियों का निर्माण संभव हो गया है। इनमें से सर्वप्रथम यंत्र को 1948 में पता चला कि इन रेडियो मोचनों के दो सबसे शक्तिशाली स्रोत स्थल साइनस और कासीपिया के तारक मंडलों में है। ये दो सर्वप्रथम 'रेडियो' नक्षत्र थे, जिनकी खोज मनुष्यों ने की। उस समय से लेकर अब तक हजारों ऐसे तारों का पता लग चुका है, जिससे आकाश का पूरा नक्शा ही बदल गया है। हमारी शताब्दी की सबसे सनसनी भारी वैज्ञानिक खोज यह थी कि हमारी निकटतम मन्दाकिनी देवयानी (आन्ड्रोमेडा) नीहारिका में इस तरह के अदृश्य सूर्य बहुत से हैं। देवयानी 1.89 मी० की तरंगदैर्घ्य पर प्रसारण करती है, पर दूसरे स्रोतों से कुछ सें० मी० से लेकर 20 मीटर तक की तरंग दीर्घता पर प्रसारण होने है रेडियो तरंगों का मोचन केवल अलग तारों से ही नहीं होता। उदाहरण के लिए साइनस स्रोत से दो विशाल नीहारिकाओं के 2000 लाख प्रकाश वर्षों की दूरी पर हुई टक्कर को भी पहचाना गया है—यह उस सीमा के निकट पड़ता है, जहां तक से माउण्ट पालोमर के 200 इंच दर्पण वाला दूरदर्शी प्रकाश प्राप्त कर सकता है।

सन् 1951 में 21 सें० मी० की स्थिर तरंग दीर्घता के एक अन्य उत्सर्जन का पता चला जो अन्तर्नक्षत्रीय अंतरिक्ष में हाइड्रोजन गैस के बादलों से आ रही थी। पर धरती पर इसे ग्रहण करने पर इस की तरंग दीर्घता डोप्लर प्रभाव के कारण खिसक जाती है अर्थात् जब उत्सर्जन का स्रोत दूर हटने लगता है तो इसकी आवृत्ति घट जाती है। इसका अर्थ यह है कि इस तरीके से हम यह पता लगा सकते हैं कि ये आकाशीय पिंड हमसे किस रफ्तार से पीछे खिसकते जाते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जिससे, जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे, ब्रह्माण्ड की प्रकृति और आयु का पता चल सकता है।

जिस व्यक्ति ने रेडियो खगोल विज्ञान को मात्र संयोगवश किसी नयी खोज को लक्ष्य करके उसे ज्योतिर्विज्ञान के समकक्ष विज्ञान की एक शाखा में दस वर्षों की अल्प अवधि में ही बदल कर रख दिया वह थे, मानचेस्टर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बर्नार्ड लोवेल। सर रॉबर्ट वाटसन-वाट के अधीन राडार पर काम करने के बाद उन्हें कुछ अनपेक्षित सैनिक साज सामान प्राप्त हो गया और वहां से हट-कर चेशायर के जोडरेल बैंक पर गए जहां मानचेस्टर विश्वविद्यालय का वनस्पति विभाग था। उनका ध्यान मूलतः युद्धकालीन राडार प्रतिध्वनि-संकेतों के क्षेपण और प्रतिध्वनियों के ग्रहण का ब्रह्माण्ड किरणों का पता करने में प्रयोग [illegible]

ब्लेकेट विश्व के सबसे अधिकारी व्यक्ति थे।

पर उनके निष्कर्ष बड़े विचित्र थे। प्रतिध्वनियां अपेक्षा से बहुत प
ये उल्काओं की शृंखलाओं की प्रतिध्वनियां थीं, जिनके अस्तित्व के वि
वैज्ञानिकों को कभी सन्देह नहीं था। पर इनके अतिरिक्त 'आकाश गंगा
ध्वनियां थी, जो बराबर आती जा रही थीं और जांच पड़ताल करने का प्र
पैदा कर रही थी। जान्सकी के विगत पन्द्रह वर्षों की खोज से इन प्रपंचों का मे
रहा था। इसके अतिरिक्त सन् 1946 में अमरीकी सेना के संकेतन कोर को चन्
आती हुई प्रतिध्वनियां प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हुई थी। लोवेल इन प्र
को अपने हाथ में लेना चाहता था, और सूर्य तथा शुक्र पर स्पन्दन प्रक्षेपित
चाहता था। अतएव उसने अपना सर्वप्रथम 'रेडियो दूरदर्शी' बनाया जो 13
ऊंचा था, तथा जिसमे अन्तरिक्ष में तरंगें प्रेषित करने तथा वहां की तरंगें
करने के लिए इस्पात की जाली का एक विशाल आधान लगा हुआ था। इस
से ही सर्वप्रथम रेडियो तारों की खोज हुई।

इससे दस साल बाद 1957 में प्रोफेसर लोवेल का नया, दैत्याकार रे
दूरदर्शी जोडरेल बैंक पर काम करने लगा था—यह ठीक उस मौके पर ही
करने लगा, जब रूसी स्पुतनिक छोड़ा गया था और उस वर्ष के अक्तूबर मा
यह पृथ्वी से 560 मील की ऊंचाई पर इसकी परिक्रमा कर रहा था। इस यं
उसका भी पथन किया गया था। इसका परावर्ती आधान 80 गज व्यास का
और यह एक एकड से अधिक स्थान घेरे हुए था। यह दो जालक बुर्जों के सह
टंगा हुआ था। जो बोगियों के सहारे 350 फुट व्यास वाले एक वृत्ताकार
पर घूम रहे थे। इसके परावर्तक को भी इस तरह साधा गया था कि यह नी
ऊपर हो सकता था और इसलिए इसे आकाश के किसी भी बिन्दु की ओ
निर्दिष्ट किया जा सकता था।

नये रेडियो खगोल विज्ञान ने अब तक अपने विराट अनुसंधान यंत्र की मा
ऊपरी पपड़ी को जहां तहां से खरोंचा भर है। खगोल शास्त्रियों के लिए रोमांच
संभावनाएं उद्घटित हुई हैं और अब उनका अन्वेषण कार्य केवल अंधकारपूर्ण औ
निरभ्र आकाश तक सीमित नहीं रह गया है। रेडियो तारकों की पहेली अभी
तक अनसुलझी ही रह गयी है। क्या वे बहुत गर्म पिण्ड हैं, इतने गर्म कि दृश्य
प्रकाश उनके वर्ण पट से गायब हो गया है? अथवा उनका प्रकाश उनके चतुर्दिक
व्याप्त गैसों की घटा के कारण ओझल है? हमें प्राप्त होने वाला अधिकांश
उत्सर्जन ब्रह्माण्ड की गहनता में कहीं से मन्दाकिनियों के दोलन के परिणामस्वरूप
फूटती प्रतीत होती है।

ब्रह्माण्ड का एक अन्य रहस्य है 'क्वासार' अथवा 'नक्षत्रवत' वे जिनकी खोज इस शताब्दी के सातवें दशक मे हुई ये बड़े ही रहस्यमय सुदूरताए जैसे पदार्थ हैं जो अतिशय सशक्त प्रकाश और रेडियो तरंगें उत्सर्जित करते है। इनमें से दर्जनों की शिनाख्त हो चुकी है और ये ब्रह्माण्ड के किसी नये, अब तक असन्दिग्ध पहलू की ओर संकेत कर सकते हैं। अभी हाल ही मे खोजी गयी कहीं गहन अन्तरिक्ष मे स्थित 'विद्युत् आगार' मन्दाकिनिया, जो एक्स-किरणों का उत्सर्जन करती है, कम से कम खगोल शास्त्रियो और ब्रह्माण्ड-विदों के लिए कम सनसनीपूर्ण नहीं है। एक्स-किरणों का अंकन करने वाले दूरदर्शी वस्तुत, गाइगर विकिरण गणक के विशेष सस्करण—अधिक इन विलक्षण स्रोतों के विषय मे अधिक सूचना एकत्र करने के लिए उपग्रहो मे भेजे गए हैं।

और एक प्रश्न तो युग युगान्तर से चला आ रहा है: क्या अन्य और मण्डलों मे किन्ही ग्रहों पर बुद्धिमान प्राणियो का निवास है ? खगोलशास्त्रियो को हमारे अपने सौर मण्डल मे किसी ग्रह पर मनुष्य जैसे किसी प्राणी का पता लगने की बहुत अधिक आशा नहीं है,पर हमारी आकाश गगा के लगभग 10,00,000 लाख सूर्यो मे से किसी के इर्द गिर्द के अनन्त ग्रहों मे से कम से कम कुछ पर जीवन के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितयां क्यों नहीं हो सकती ? हमारा कोई एक दूरदर्शी इनमे से किसी न किसी से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास कर रहा है—निश्चय ही ऐसे बुद्धिमान प्राणी हो सकते हैं जिन्होने रेडियो तरगें भेजने और प्राप्त करने की प्रविधि हमारी ही तरह विकसित की हो। संभावना इस बात की है कि 'किसी न किसी दिन आवक सकेत कुछ कहने की चेष्टा कर सकते है।' पर अन्तरिक्ष मे कहीं स्थित अपने अज्ञात बंधुओं से हम सचार कैसे कर पाएगे ? गणित एक संभावित ब्रह्माण्डीय भाषा प्रतीत होती है। यदि कोई दशमलव अकों का विनिमय करने से आरंभ करे, उन के घातों को प्रेषित करता चला जाए, जो कि पाइथागोरस के सिद्धान्त अर्थात त्रिभुजों का समरूपी होगा, तो अन्ततः उसे एक उभयग्राह्य भाषा मिल आएगी। पर यह वार्तालाप बहुत विलम्बित होगा; कारण हमारे सौरमण्डल के निकटतम पड़ोसी सूर्य, अल्फा सेंटारी हमसे पांच प्रकाश वर्ष दूर है, और दूसरा निकटतम तारा मदम एप्सिलोन एरिडानी और ताउ चेओई, बारह प्रकाश वर्ष दूर। यदि हम इन विरा दूरियो को पार करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा का जनन भी कर लें, तो भी हमे अपने संकेतों का उत्तर पाने के लिए कम से कम दस वर्ष तक प्रतीक्षा करनी होगी। पर इसको आजमाइश होगी—मनुष्य अपनी अक्षय उत्सुकता की तुष्टि के लिए किसी भी चीज की आजमाइश कर सकता है।

हुआ।

यह यह भी जानना चाहता है कि ब्रह्माण्ड ।
हमारे जीवन काल में ही रेडियो खगोल विज्ञान इसका उत्तर देने में समर्थ हो
जाएगा। जहाँ माउन्ट पालोमार के दूरदर्शी का व्यास 200 इंच है और इसका
4½ सौ करोड़ प्रकाश वर्ष, रेडियो दूरदर्शी तरंगों के स्रोतों की खोज सम्भवतः
हजार या इससे भी अधिक करोड़ प्रकाश वर्षों तक की टोह ले सकता है और
अन्ततः काल और दिक्—इन दोनों अवधारणाओं में कोई अन्तर नहीं है—के
छोरों तक प्रवेश कर सकता है।

हमारी पीढ़ी में ब्रह्माण्ड की प्रकृति के सम्बन्ध में दो परस्पर विरोधी सिद्धान्तों का विकास किया गया है। इनमें से एक विकासवादी सिद्धान्त है जो यह कहता है कि ब्रह्माण्ड की रचना भूत तत्त्वों के एक अतिविराट पिंड के रूप में हुई जिनका घनत्व ऐसा था कि इसके एक घन इंच का वजन (धरती की तुलना में) कई लाख विवटल रहा होगा; 'यह आद्य परमाणु' हजारों करोड़ वर्ष पूर्व विघटित हो गया। और तभी से फैलता चला जा रहा है और इनसे मंदाकिनियाँ, तारे और सौर मंडल बनते चले जा रहे हैं। हाल ही में हुई तीव्र गति से स्पन्दित रेडियो तारों अथवा 'पल्सरों' की खोज इस व्याख्या की ओर संकेत करती प्रतीत होती है; ये श्वेत बौने, तारे जिनका केन्द्रीय घनत्व प्रति घन सेंटीमीटर लगभग 100 लाख ग्राम होगा, न्यूट्रॉन किरणों का उत्सर्जन करते हैं। क्या ये ऐसे पिण्ड हैं जो उस आद्य अवस्था को लौट रहे हैं, जिससे ब्रह्माण्ड की रचना हुई है?

दूसरा है 'स्थिर अवस्था' का सिद्धान्त। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड की शक्ल में समय के साथ कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता, क्योंकि इसके द्वारा निरन्तर पदार्थों की सृष्टि हो रही है और इस तरह इसके विस्तार के कारण जिन पदार्थों का लोप हो रहा है, उनकी क्षतिपूर्ति होती जा रही है। इसका अर्थ यह है कि न तो ब्रह्माण्ड का कोई आदि था, न ही उसका अन्त कभी होगा और यदि धरती पर हजारों करोड़ वर्ष पूर्व मनुष्य होते और वे इस ब्रह्माण्ड पर दृष्टिपात करते तो यह उन्हें आज की तुलना में बहुत कम भिन्न दिखाई देता।

रेडियो खगोल विज्ञान इस बात का निश्चय करने में किस प्रकार सहायक हो सकता है कि इन सिद्धान्तों में से कौन सही है? हमारे पास एक ऐसा रेडियो दूरदर्शी तो हो गया है जो ब्रह्माण्ड के किसी कोने में लगभग 90,000 लाख प्रकाश वर्ष दूरी तक देख सकता है, अर्थात् ब्रह्माण्ड को उस रूप में देख सकता है जिस रूप में यह आज से 90,000 लाख प्रकाश वर्ष पूर्व था। यह प्रसिद्ध डोप्लर प्रभाव की सहायता से हमसे तीव्र गति से दूर भागती हुई मन्दाकिनियों

का पतन करता रहा है। यदि स्थिर अवस्था, का सिद्धान्त सही है तो पदार्थ का घनत्व और वेग लगभग वही बना रहेगा, जो आज है या कुछ ही दिक्-काल की दूरियों पर था। यदि विकासवादी सही हैं तो घनत्व बहुत अधिक होगा, क्योंकि उस समय ब्रह्माण्ड का विस्तार बहुत आरम्भिक अवस्था में ही था।

यह उन रेडियो दूरदर्शियों में से है जो कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की कैवेंडिश प्रयोगशाला मुलर्ड रेडियो खगोल वेधशाला—में 1955-7 के बीच लगाए गए थे। यह जोड्रेल बैंक के बाइल के आकार के दूरदर्शी से भिन्न है। इसमें दो ढांचे हैं जो एक दूसरे से 2,300 फुट की दूरी पर हैं। प्रत्येक बेलनाकार परवलयज शक्ल का है। इनमें से एक पूर्व-पश्चिम की लम्बाई में, 1,450 फुट है और 65 फुट चौड़ा है; यह धरती में गड़ा हुआ है जब कि दूसरा जो 190 × 65 फुट आकार का है, उत्तर-दक्षिण की ओर 1,000 फुट लम्बी एक गरारी पर घूम सकता है। इन ढांचों के 'परावर्ती तल' एक परवलयज चौखटे के ऊपर फैले इस्पात के तारों के बने हैं।

दूरदर्शी एक याम्योत्तर-गामी यंत्र है और आकाश का परिचायन करने के
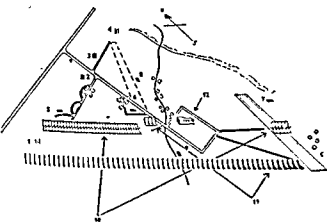
रेडियो खगोल विज्ञान वेधशाला का एक नक्शा, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी
कुंजी-1-4 रेडियो स्रोत का स्थान मापने के लिए व्यतिकरणमापी। 5-9 सूर्य के हलों के अनुसंधान के लिए व्यतिकरणमापी। 10. रेडियो तारा व्यतिकरणमापी। 11. 'पेंसिल बीम' व्यतिकरणमापी द्वारा 8 मीटर की तरंग दैर्ध्य पर आकाशगंगीय रेडियो उत्सर्जन की जाँच पड़ताल। 12. मुख्य वेधशाला भवन।

लिए इसमे पृथ्वी की परिक्रमा का उपयोग किया जाता है। उदाहरण
जब आकाश के किसी खण्ड का सर्वेक्षण करना होता है, तब सचल
गरारी के एक सिरे पर स्थापित करते है और ब्रह्माण्ड से प्राप्त होने
चौबीस घण्टे तक स्वतः अंकित होते रहते हैं। प्रतिदिन एरियल पथ से
नयी अवस्थिति मे झुकता चला जाता है और 30 दिन के अवेक्षण के
गरारी के दूसरे छोर पर पहुंच जाता है। इस समय तक 40 वक्रता वाल
पट्टो के आकाश से प्राप्त हुए सारे संकेत अंकित हो चुके रहते हैं। आ
प्रत्येक पट्टी से लगभग 2,00,000 'वाचन' प्राप्त होते हैं। इन्हें एक टे
टेप पर इस तरह अभिलिखित किया जाता है कि इससे इन्हें सीधे
विश्वविद्यालय की गणितीय-प्रयोगशाला के इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर
सम्भारित किया जा सके।

इस कार्य के पीछे प्रेरक व्यक्तित्व कैवेंडिश प्रयोगशाला के प्रोफेसर
राइले का है। 1961 के आरम्भ मे ही वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि
का स्थिर-अवस्था सिद्धान्त गलत है, क्योंकि उन्होंने अन्तरिक्ष की
गहराइयों में 90,000 लाख प्रकाश वर्ष दूर उससे बहुत अधिक रेडियो ता
सश्य किया था, जितना पूर्व कथन स्थिर-अवस्था सिद्धान्त ने किया था।
अर्थ यह हुआ कि 90,000 लाख वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड पदार्थों से अधिक सघन
भरा था जो कि विस्तार सिद्धान्त की सत्यता को प्रमाणित करता है।
सिद्धान्त के अनुसार अतीत में कभी ब्रह्माण्ड का समस्त पदार्थ 'आद्य परमा
संघनित था, और यह कि एक विस्फोट हुआ, हम इसे 'सृष्टि' कह सकते
जिसके कारण उस पदार्थ-पिंड मे तेजी से परिवर्तन होने लगे, और इसे उस
तरह बिखरा दिया कि वह तभी से फैलता ही चला जा रहा है। बेशक
अवस्था ब्रह्माण्ड सिद्धांत में अपनी प्रो० फ्रेड हायल ने अपना आग्रह नहीं
है। उनका विश्वास था कि आगामी वर्षों में और दूर के साक्ष्य एकत्र करने
और तब कहीं हम लोग इस रहस्य का असन्दिग्ध समाधान कर पाएंगे।

रूस का दावा है कि उसके पास 'पाम्योलार-नामी' ढंग की एक अति
वेधशाला है, पर तथ्यतः सबसे बड़ा रेडियो दूरदर्शी, बेशक दुनियाँ
के आरेसिबो में है, जो संयुक्त राज्य अमरीका का है। इसके 1,000 फुट
व्यास पर तारों का जाल सा बिछा हुआ है, इसे एक पहाड़ी के ढलाव भाग
द्वारा बनाया गया है। इसमें 500 फुट ऊपर इसका ग्रहित (ट्रांसमीटर
हवा में लटका हुआ है, और इसके संकेत तारों की अन्तरंग पर बोलते होते है,
दूर ग्रहों को अन्तरिक्ष में देखता है। रेडियो तारों के अध्ययन के लिए

प्रक्रिया को उलट दिया जाता है। आधान उन्हें हवा में झूलते ढांचे पर परावर्तित करता है जिसे पुन: 'सुनने के लिए' स्विच किया जाता है। जैसे दृश्य ज्योतिर्विदो के संयुक्त अवेक्षणों के आधार पर हमारे पूर्वजों ने सौर मंडल और इसके भीतर धरती के स्थान के विषय में अपनी धारणा बनाई थी, उसी प्रकार रेडियो खगोल विज्ञानी ब्रह्माण्ड के विषय में सत्य का पता लगाने की दिशा मे हमे काफी आगे ले जाएगे।

इस तरह हमारे दर्शन, जीवन-पद्धति को आविष्कार और इंजीनियरी ही बहुत गहराई तक प्रभावित करेंगे, जैसा कि अतीत में इन्होंने हमारे जीवन को प्रभावित किया है। ये हमारी ही सृष्टि है और यह हमारे ऊपर ही निर्भर करता है कि हम इनका उपयोग अपने लोभ, अपनी मूढ़ता शक्ति की अपनी लालसा और विनाश की अपनी वासना के लिए करना चाहते हैं—अथवा अलबर्ट आइंस्टाइन के शब्दों में 'नये स्वर्ग का मार्ग खोलने के लिए' करना चाहते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली

अतिक्रमण	Supersede
अतिसंवाही	Super-Conductive
अतिसूक्ष्मकर्तक	Ultra-Microtomes
अध्यारोपण	Superimpostion
अनुनादक	Resonator
अभिदृश्यक	Objective
अभिसृत	Converse
अर्ध-स्वचालन	Semi-automation
अवलोकी	Scaner
अवेक्षण	Observation
आकड़ा	Data
आदिम	Primitive
आद्य परमाणु	Primeval atom
आयाम अधिमिश्रण	Amplitude Modulation
आवृति	Frequency
उच्च तद्रूपता	High Fidelity
उत्खनन	Mining
उत्तोलन जैक	Lifting Jack
उत्सर्जक	Emitter
उद्भासन	Exposer
एकक	Unit
ऋणाग्र-किरण	Cathode-Ray
कर्षनौका	Tug
कुंडलक	Coil
ग्राही	Receiver

चुम्बकीय परिचायक	Magnetic Detector
छिद्रित टेप	Punched tape
जाल	Grid
तंतु	Filament
तरंगदीर्घता	Wave length
तवा	Disc
तापस्थापी	Thermostate
तापायनिक वाल्व	*Thermianic Valve*
तुंगतामापी	Altimeter
त्रिविमितिदर्शी	Three-dimensional
दफ्ती	*Cardboard*
दृश्यगामी रश्मि	Object beam
दृश्यवस्तु	Object
द्वारक	Apercher
धारित्र	Capacitor
निम्नतापोत्पादं	Cryogenic
नियंत्रण	Control
नियंत्रण बुर्ज	Control tower
नेत्रक	Eyepiece
परवलयज	Paraboloid
	Reflected
	Preserved